Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ॐ

भावदीपिका

लेखक :
पण्डित दीपचन्द कासलीवाल

सम्पादक :
ब्र. यशपाल जैन एम.ए.

प्रकाशक :
श्री दिगम्बर जैन कुन्दकुन्द परमागम ट्रस्ट, इन्दौर
एवं
पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रथम तीन संस्करण (अगस्त 87 से अद्यतन)	:	6 हजार 400
चतुर्थ संस्करण (15 अगस्त 2002)	:	1 हजार
योग	:	7 हजार 400

मूल्य : पच्चीस रुपये

प्राप्ति स्थान :

- ***पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट***
  ए-4, बापूनगर, जयपुर-302015
- ***श्री दिगम्बर जैन कुन्दकुन्द परमागम ट्रस्ट***
  मनोहरलाल काला, गली नं. 4, मल्हारगंज, इन्दौर (म.प्र.)

मुद्रक :
प्रिन्ट 'ओ' लैण्ड
बाईस गोदाम, जयपुर

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Thanks & Our Request

This shastra has been kindly donated by Dakshaben Sanghvi, Geneva, Switzerland who has paid for it to be "electronised" and made available on the internet.

Our request to you:

1) Great care has been taken to ensure this electronic version of Bhavdipika is a faithful copy of the paper version. However if you find any errors please inform us on rajesh@AtmaDharma.com so that we can make this beautiful work even more accurate.

2) Keep checking the version number of the on-line shastra so that if corrections have been made you can replace your copy with the corrected one.

Version History

Version Number	Date	Changes
001	15 February 2008	First electronic version

विषय - सूची

पहला अधिकार : सामान्याधिकार पृष्ठ १ से ५

दूसरा अधिकार : पारिणामिक भावाधिकार ६ से ९

तीसरा अधिकार : कर्माधिकार १० से २२

चौथा अधिकार : औदयिक भावाधिकार २३ से ९३

(१) गतिभाव अन्तराधिकार २३
(२) मिथ्यात्वभाव अन्तराधिकार २८
(३) कषायभाव अंतराधिकार ४६
(४) लेश्याभाव अंतराधिकार ७१
(५) वेदभाव अंतराधिकार ८६
(६) असंयमभाव अंतराधिकार ९१
(७) अज्ञानभाव अंतराधिकार ९२
(८) असिद्धभाव अंतराधिकार ९३

पांचवां अधिकार : क्षायोपशमिक भावाधिकार ९४ से १७९

(१) कुज्ञान अन्तराधिकार ९५
(२) सुज्ञान अन्तराधिकार
(३) क्षायोपशमिक दर्शनभाव अन्तराधिकार ११८
(४) पंच क्षायोपशमिक लब्धिभाव अन्तराधिकार १२०
(५) क्षायोपशमिक सम्यक्त्वभाव अन्तराधिकार १२२
(६) देशविरत संयमासंयमभाव अन्तराधिकार १३८
(७) क्षायोपशमिक चारित्र भावान्तराधिकार १४९

छठवां अधिकार : औपशमिक भावाधिकार १८० से १९३

(१) औपशमिक चारित्र भावांतराधिकार १९०

सातवां अधिकार : क्षायिक भावाधिकार १९४ से २१४

(१) क्षायिक चारित्रभाव अन्तराधिकार १९८

आठवां अधिकार : चूलिका अधिकार २१५ से २४४

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रकाशकीय

(चतुर्थ संस्करण)

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर एवं श्री दिगम्बर जैन कुन्दकुन्द परमागम ट्रस्ट, इन्दौर द्वारा प्रकाशित भावदीपिका ग्रंथ का यह चतुर्थ संस्करण प्रकाशित करते हुए हमें अतीव प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। इसका तृतीय संस्करण हाथों-हाथ बिक गया फलत: समाज की मांग को देखते हुए इसका यह चतुर्थ संस्करण हमें प्रकाशित करना पड़ रहा है।

जैसा साहित्य के प्रकाशन के क्षेत्र में पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट एवं उसकी सहयोगी संस्थाओं ने अद्भुत क्रान्ति की है। वर्तमान मंहगाई के युग में साहित्य का अनवरत प्रकाशन एवं विक्रय की व्यवस्था दुरुह कार्य है, परन्तु पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट व उसकी सहयोगी संस्थाओं से एक-एक पुस्तक के अनेक-अनेक संस्करण बड़ी संख्या में छपकर समाज के हाथों में पहुँच चुके हैं। इतनी बड़ी संख्या में साहित्य प्रकाशित होने के पीछे एक तथ्य यह भी है कि हमारी इन संस्थाओं से जो भी साहित्य प्रकाशित होता है वह लागत से भी कम मूल्य पर उपलब्ध होने के कारण अन्यों की तुलना में काफी सस्ता भी पड़ता है। यही कारण है कि यहाँ के प्रकाशन के आँकड़ों को कोई भी संस्था पार नहीं कर सकी है।

पण्डित दीपचन्दजी कासलीवाल कृत इस भावदीपिका में जीव के पाँच भावों का अत्यन्त विस्तार पूर्वक सूक्ष्मता से विवेचन किया गया है। जीव की पर्याय में वर्तने वाले अनेक प्रकार के भावों का अधिकतम गहराई से परिचय प्राप्त कराते हुए त्रिकाल अस्खलित एक सहज शुद्ध पारिणामिक भाव की महिमा पूर्वक आत्मकल्याण की प्रेरणा देने वाला यह 'भावदीपिका' ग्रन्थ यथा नाम तथा गुण की उक्ति को सार्थक सिद्ध करता है। ग्रन्थकार पण्डित दीपचन्दजी के इस महान उपकार को भुलाया नहीं जा सकता।

इस कृति के सम्पादन में ब्र. यशपालजी ने बहुत परिश्रम किया है। सदा की भांति मुद्रण एवं बाइण्डिग व्यवस्था का भार प्रकाशन विभाग के प्रभारी श्री अखिल बंसल ने बखूबी निभाया है। अंत में मैं उन सभी सहयोगियों का भी आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने इस पुस्तक की कीमत कम करने में संस्था को आर्थिक सहयोग प्रदान किया है।

विनीत :

अध्यक्ष
श्री दिगम्बर जैन कुन्दकुन्द परमागम ट्रस्ट
इन्दौर (म.प्र.)

महामंत्री
पं. टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सम्पादकीय

पं० दीपचंदजी कृत **"भावदीपिका"** नामक यह कृति सार्थक नाम वाली है। चरणानुयोग, करणानुयोग और द्रव्यानुयोग – इन तीनों अनुयोगों का संदर्भ इस ग्रंथ में स्वाभाविक रीति से आया है।

पाठकों को ग्रंथ के प्रारंभ में ग्रंथ की कुछ खास विशेषता नहीं लगेगी, लेकिन यदि वे धैर्य रखकर ग्रन्थ का अखण्ड अध्ययन करेंगे तो अनेक अपूर्व विषयों का खलासा मिलेगा।

प्रत्येक वाचक को "मैं स्वयं कहाँ हूँ, किस परिणाम में खड़ा हूं, धार्मिक क्षेत्र में मेरा क्या स्थान है, मेरा गुणस्थान कौनसा है? उनमें भी मेरी लेश्या आदि कौन सी है, भावी किस गति में मेरा जाना बनेगा?" इत्यादि बातों का उत्तर इस ग्रन्थ से मिले बिना नहीं रहता। इस दृष्टि से यह ग्रंथ अपनी खास विशेषता रखता है, क्योंकि जीवन में अनेक धार्मिक ग्रन्थों का सूक्ष्मता से अध्ययन करने पर भी यदि उस धार्मिक अभ्यास से अपने जीवन का कुछ भी निर्णय न हो सके वह अध्ययन-अध्ययन ही नहीं है। अस्तु........

पाठक इस ग्रन्थ के अध्ययन से ग्रन्थ की विशेषता तो समझ ही लेंगे, फिर भी इस ग्रन्थ की निम्न विशेषताओं की ओर उनका ध्यान आकर्षित कर रहा हूँ।

(१) भव्यत्व-अभव्यत्व विषयक प्रकरण लिखते समय रत्नत्रयरूप परिणमन की योग्यता व अयोग्यता – ऐसा सर्व अभ्यासिओं को परिचित अर्थ तो किया ही है, साथ में विशेष अर्थ भी किया है। (देखिये पृष्ठ नं० ८)

(२) गुणस्थान में मार्गणा लगाने के प्रकरण में ऐसा लगता है, मानो ग्रन्थकार पाठकों से सहज चर्चा करते हुए ग्रन्थ लिखते जा रहे हैं। वाचक स्वयं स्वाध्याय करके निर्णय करें।

(३) अज्ञानी जीव देव-शास्त्र-गुरु अथवा जीवादि सप्त तत्व वा व्याहारिक धार्मिक क्रियाओं के माध्यम से भी अपनी मिथ्या श्रद्धा को कैसे सुरक्षित रखता है इसका भी बोध भावदीपिका करा देती है। (देखिए पृष्ठ नं० २७–मिथ्यात्वभाव अंतराधिकार।)

(४) श्री कानजी स्वामी के निमित्त से आज जो विशिष्ट आध्यात्मिक भाषा प्रवचन वा चर्चा आदि में विकसित हो गयी है, वैसी ही भाषा का प्रयोग पं. दीपचन्दजी ने भी किया है। इससे पता लगता है कि अध्यात्म की यह वर्तमान की भाषा नयी नहीं है, पुरानी है। और पं० टोडरमलजी के भी पूर्ववर्ती प्राचीन विद्वानों ने भी अध्यात्म प्रचुर भाषा का प्रयोग किया था। (उदाहरणार्थ पृष्ठ नं० ५० देखिए) – 'तहां अपना स्वरूप जो ज्ञाता-दृष्टा भाव, तातैं छुड़ाय अर पर स्वरूप जो राग-द्वेष भाव, ता रूप करै, सो कषाय कहिए। अब तिस कषाय के वशवर्ती ···"

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

(५) देशविरत गुणस्थान के संबंध में दर्शन प्रतिमा को तो देशविरत पांचवें गुणस्थान में लिया, लेकिन दूसरी व्रत प्रतिमा से आगे वाली प्रत्येक प्रतिमा को संयमासंयम कहा, दर्शन प्रतिमा को संयमासंयम नहीं कहा।

इसप्रकार इस ग्रन्थ में अनेक विशेषताऐं दृष्टिगोचर होती हैं। इसमें प्रतिपाद्य भावों का गहन परिचय तो इसके अध्ययन से ही प्राप्त हो सकता है।

ग्रन्थकार पं० श्री दीपचन्दजी के संबंध में:–

जिनेन्द्र भगवान द्वारा प्ररूपित परम कल्याणकारी अध्यात्म-विषय को जनसाधारण की वस्तु बनाने में पं० श्री दीपचंदजी कासलीवाल का महान योगदान है। आपकी अध्यात्म से ओत-प्रोत अनेक रचनायें हैं, जिनमें कुछ गद्य रचनायें हैं कुछ पद्य। गद्य रचनाओं में भावदीपिका चिद्-विलास, अनुभवप्रकाश, आत्मावलोकन, परमात्मपुराण आदि प्रमुख हैं। पद्य रचनाओं में ज्ञान-दर्पण, स्वरूपानंद, उपदेश सिद्धान्तरत्न आदि हैं। इन सभी रचनाओं में ग्रन्थकार ने अध्यात्म की धारा ही प्रवाहित की है।

आपकी जाति खण्डेलवाल एवं गोत्र कासलीवाल था। आप सांगानेर (जयपुर के पास) के निवासी थे। बाद में आप जयपुर की राजधानी आमेर में आ गये थे। आमेर में रहकर ही आपने ग्रन्थों की रचना की है।

पं० श्री दीपचंदजी कृत उपलब्ध तथा प्रकाशित ग्रन्थों के आधार से आपके लौकिक जीवन विषयक परिचय इससे अधिक प्राप्त नहीं हो सका है।

इन्दौर के प्रकाशक ब्र० दुलीचंदजी उदासीनाश्रम ने अपने प्रकाशकीय में लिखा है– "इस ग्रन्थ के कर्ता विद्वद्वर्य अध्यात्मप्रेमी पं० दीपचंदजी शाह मालूम होते हैं। इन्होंने ग्रंथ में अपना नाम तो प्रगट किया नहीं है, किन्तु इस ग्रंथ के अन्त में एक दोहा है, उससे पंडितजी का नाम ध्वनित होता है।

दोहा – स्व-पर भाव विभाव को, शुद्ध भाव जुत सोय।
करि प्रकाश प्रगट किया, भाव दीप ए दोय॥

आपके ग्रन्थों की भाषा विक्रम संवत् १७७९ के लगभग की हिन्दी गद्य भाषा है। इसमें ढूंढारी तथा ब्रजभाषा मिश्रित है। आप पं० श्री टोडरमलजी से पूर्ववर्ती हैं। आपकी भाषा उस समय बड़ी ही लोकप्रिय समझी जाती थी।

भोले-भाले, लेकिन धर्म प्राप्त करने की भावना रखनेवाले सामान्य लोगों का वास्तविक कल्याण होवे, उन्हें वीतराग सर्वज्ञ भगवान द्वारा कहे गए परम सत्य मार्ग की उपलब्धि अवश्य होवे –इस संबंध में भावदीपिका के अंतिम अध्याय के अन्त में पं० दीपचंदजी ने अपना हृदय खोल कर रखा है। उनके ही शब्दों में हम देखें––

"जिनसूत्र के अर्थ अन्यथा करने लगे। ताकरि भोले जीव, तिनकी बताई प्रवृत्ति, ताहि विषैं प्रवर्तते भये। नाहीं है सत्य सूत्र का ज्ञान जिनको, ताकरि महंत शास्त्रन का ज्ञान, तिन तैं अगोचर भया। ताकरि मूढ़ता प्राप्त भये, हीन शक्ति भये। सत्य वक्ता, सांचा जिनोक्त सूत्र का अर्थ ग्रहण करावनेहारा कोई रहा नहीं, तातैं सत्य जिनमत का तो अभाव भया, तब धर्म तैं

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

परान्मुख भये । तब कोई-कोई गृहस्थ सुबुद्धि संस्कृत-प्राकृत का वेत्ता भया, ताकरि जिन सूत्रन को अवगाहा, तब ऐसा प्रतिभासता भया सूत्र के अनुसार एक भी श्रद्धान, ज्ञान, आचरण की प्रवृत्ति न करै हैं । बहुत काल गया मिथ्या-श्रद्धान, ज्ञान, आचरण की प्रवृत्ति को ताकरि अति-गाढ़ताने प्राप्त भई, तातैं मुख करि कही मानें नहीं, तब जीवन का अकल्याण होता जानि करुणा बुद्धि करि देशभाषा विषैं शास्त्र रचना करी, तब केई तुच्छ सुबुद्धीन के सांचा बोध भया । बहुरि अब इस अवसर विषैं ज्ञान की शक्ति की ऐसी हीनता भई, (जो) भाषा शास्त्रन तैं भी ज्ञान कर सकै नाहीं । तातैं तिन महंत शास्त्रन तैं प्रयोजनभूत वस्तु काढ़ि-काढ़ि छोटे प्रकरण करि एकत्र कीजिए है । तातैं ऐसे अवसर विषैं सम्यग्ज्ञान के कारण भाषा शास्त्र ही है ।"

पं. दीपचन्दजी इसके ही आगे संस्कृत-प्राकृत शास्त्र, व्याकरण शास्त्र, न्याय शास्त्र तथा भाषा ग्रन्थ विषयक अपनी संतुलनात्मक, परिमार्जित व महत्त्वपूर्ण दृष्टि पाठकों के सामने रखते हैं । उनके ही शब्दों में--

"बहुरि भाषा शास्त्रन तैं सम्यग्ज्ञान करि शब्द विद्या (व्याकरण) न्याय विद्या अवगाह, तिन संस्कृत-प्राकृत रूप महंत शास्त्रन का अभ्यास करना युक्त ही है । परन्तु सम्यग्ज्ञान का अर्थी हुआ थका शब्द विद्या, न्याय विद्या का व संस्कृत-प्राकृत शास्त्रन का अभ्यास करना । शब्द विद्या, न्याय विद्या ही विषै आसक्त होय काल न खोवना, जातैं शब्द विद्या, न्याय विद्या कारण रूप है । तातैं जैसे बनै तैसें ताकू करना, परन्तु भाषा शास्त्रन का अभ्यास तैं सम्यग्ज्ञान की सिद्धि करि पीछे संस्कृत-प्राकृतरूप शास्त्रन का अभ्यास सुगम होय है । बहुरि पर्याय का भरोसा नाहीं है, शास्त्रन का थोड़ा सा ही अभ्यास तैं सम्यग्ज्ञान की तो सिद्धि होय हैं, जातैं जे संस्कृत-प्राकृत शास्त्रन विषैं भेद मानै हैं, ते दुर्बद्धि है । संस्कृत, प्राकृत, भाषारूप सर्व शास्त्र ही सम्यग्ज्ञान को कारण है ।"

सम्पादन के सम्बन्ध में:–

जीव के पांच भावों को प्रकाशित करने वाले इस ग्रन्थ का परिचय अधिक से अधिक लोगों को हो तथा यह ग्रन्थ अधिक से अधिक व्यवस्थित एवं सरल रूप से पाठकों के समक्ष पहुँचे–इस भावना से प्रेरित होकर मैंने इसके सम्पादन का दायित्व स्वीकार किया है ।

इस ग्रंथ के सम्पादन में जिन बातों का विशेष ध्यान रखा गया है उनका उल्लेख करना आवश्यक समझता हूँ ताकि आत्महित के अभिलाषी पाठक इस ग्रंथ का मर्म सुगमता से समझ सकें ।

ब्र० दुलीचंदजी उदासीनाश्रम इन्दौर से प्रकाशित (वीरनिर्वाण संवत् २४७४) तथा पं. श्री मुन्नालालजी काव्यतीर्थ इन्दौर की संपादित मुद्रित प्रति को इस संस्करण के संपादन का मूल आधार बनाया गया है । इसके अतिरिक्त संपादन में तीन हस्तलिखित प्रतियों का उप-योग किया है, जिनका परिचय निम्नानुसार है––

१. दिगम्बर जैन मन्दिर, आदर्शनगर जयपुर प्रति
लिपिकार – श्री पन्नालाल काल – विक्रम् संवत् १९६८ आषाढ़ शुक्ला दशमी सोमवार
पेज – १८१.

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

२. श्री पार्श्वनाथ दि. जैन चैत्यालय, बापूनगर, जयपुर प्रति

लिपिकार–पं. श्री मोतीलालजी, श्री बसंतीलालजी उदासीन श्रावक ने लिखवाया

काल – विक्रम संवत् १९८१ भादवा वदी चतुर्दशी, शुक्रवार, पेज – १४४

३. श्री दिगम्बर जैन उदासीनाश्रम, तुकोगंज–इन्दौर प्रति

लिपिकार – श्री गोविन्दराम जैन **काल** – विक्रम संवत् १९९०, चैत्रशुक्ला चतुर्दशी पेज – १३६

उपर्युक्त तीनों हस्तलिखित प्रतियों में से संपादन में खास करके श्री पाश्वनाथ दि० जैन चैत्यालय, बापूनगर, जयपुर की प्रति का विशेष उपयोग हुआ, क्योंकि इस प्रति में अनेक नये विषय मिले। उनको हमने मूल ग्रंथ में जोड़ दिया है। उनमें से कुछ का संक्षेप में उल्लेख करते हैं––

१. परिग्रह त्याग प्रतिमा के स्वरूप में निम्न अंश नया मिला।

"बहुरि बस्ति के बाह्य वसतिका आदि में रहे। गृहवास परित्याग करे। जिनमन्दिर के समीप साधर्मी तैं धर्मध्यान निमित्त बनायी जो वसतिका, तिन विषैं रहे। (ग्रंथ का पृष्ठ नं. १४६) हस्तलिखित प्रति का पृष्ठ नं. ८३।

२. अनुमति त्याग प्रतिमा के स्वरूप में मिला हुआ नया अंश–

लौकिक गृह व्यापारादि विवाहकार्य, तिनकी आप सराहना करे नाहीं कि–"जो तुमने पुत्र का बहुत चोखा (सुन्दर) विवाह किया। और भोजन की सराहना करे नाहीं–"जो तुमने हमको भला भोजन दिया, तुम बड़े भक्त दातार हो, तुम्हारी भक्ति अधिक है। या भांति"। (ग्रंथ का पृष्ठ नं० १४६) हस्तलिखित प्रति का पृष्ठ नं० ८५।।

३. सोलह उत्पादन दोषों में सोलहवाँ दोष मिला जो कि अन्य प्रति में व मुद्रित प्रति में नहीं था। उसका उल्लेख मूल ग्रंथ में टीप देकर किया है। (ग्रंथ का पृष्ठ नं० १५७) हस्तलिखित प्रति का पृष्ठ नं० ८९।

इसी प्रकार तृषा परीषहजय, शीतपरीषहजय, उष्णपरीषहजय, नग्नपरीषहजय, इन चारों परीषह जय संबंधी वर्णन विशेष विस्तार के साथ मिला है। उनको मूल ग्रंथ में क्रमानुसार यथावसर स्थान मिला है, तथा वहीं ग्रंथ में टीप देकर खुलासा किया है। (हस्तलिखित प्रति का पृष्ठ नं० ९६-९७)

विषय समझने में सुलभता रहे और वाचक ऊब न जाय, इस विचार से विषय परिवर्तन के अनुसार नये छोटे-छोटे परिच्छेद बनाये हैं।

पुराने शीर्षकों (हेडिंग) में वाक्य या वाक्यांश को शीर्षक बनाया था, अतः वे लम्बे थे उन्हें मूल रूप में तो पूर्ववत् रखा ही है, लेकिन अलग, नये छोटे शीर्षक भी बनाये हैं।

कुछ शीर्षक नये तैयार किये। जैसे – ग्यारह प्रतिमाओं के प्रकरण में दर्शनप्रतिमा, व्रतप्रतिमा आदि।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

जीवों के भावों का वर्णन करते समय अनेक जगह उपशमभाव, तो कई जगह उसी अर्थ में औपशमिकभाव–ऐसी द्विविधता थी। वहाँ सब जगह औपशमिक भाव किया। इसी प्रकार क्षायोपशमिक भावों के सम्बन्ध में परिवर्तन किया है।

मूल ग्रंथकार ने अधिकार तो आठ बनाये ही हैं, बीच में और अनेक छोटे-छोटे अधिकार दिये हैं। उन्हें विषय सूचक नाम तो जहाँ-तहाँ दिया, लेकिन उच्छ्वास, अध्याय, अन्तराधिकार–ऐसे नाम नहीं दिये। हमने अन्तराधिकार यह नामाभिधान दिया। जैसे–चौथे अधिकार में गतिभाव अन्तराधिकार।

अलग-अलग टाइप प्रयोग करके अधिकार तथा अन्तराधिकार को स्पष्ट किया है। भावदीपिका ग्रंथ के हस्तलिखित प्रतियों के मिलान के कार्य में स्वाध्यायप्रेमी, साधर्मी भाई श्री सौभाग्यमलजी बोहरा का मुझे विशेष सहयोग मिला। श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन चैत्यालय की हस्तलिखित प्रति भी आपके कारण ही प्राप्त हुई। ग्रंथ का कुछ विशिष्ट भाग बार-बार देखना पड़ता था तो भी आपने कभी आलस्य नहीं किया। ग्रंथ छपने के बाद भी शुद्धिपत्रक के लिए भी आपने विशेष कष्ट उठाये हैं। प्रत्येक प्रकाशन शुद्ध ही छापा जाय – ऐसी आपकी अखण्ड हार्दिक भावना रहती है। मेरे जीवन में आप जैसे शान्तस्वभावी सहयोगी आप ही एक अकेले मिले हैं। दैनिक स्वाध्याय में भी आप बारह महीने नियमित रीति से रुचिपूर्वक रहते हैं।

तीन हस्तलिखित प्रतियों और मुद्रित प्रति में करणानुयोग विषयक कुछ परस्पर विरोधी विषय सामने आये। ऐसे प्रसंग में गोम्मटसार, धवलादि ग्रंथ के माध्यम से निर्णायक स्पष्टता मुझे ब्र० विमलाबेन के द्वारा मिलती रही, अतः उनका भी सहयोग मैं भूल नहीं सकता।

संपादन कार्य में अनेक जगह जहाँ कठिनाइयों का अनुभव करता था, वहां मुझे डॉ० हुकमचन्द जी भारिल्ल का मार्गदर्शन मिलता रहा है। इसी का यह फल है कि यह संस्करण आपके हाथ में है।

– यशपाल जैन

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१४	११	लब्धिपर्याप्तादि	लब्ध्यपर्याप्तादि
१७	२३	नाम के	नाम कर्म के
२२	२२	शास्त्र विशेष	विशेष शास्त्र
३२	१२	सिद्ध	शुद्ध
४५	५	द्वितीय ऐसे	द्वितीय वर्गणा है ऐसे
४६	२३	पाता	पाय ता
५३	२२	अणुव्रतरूप क्रिया	अणुव्रतरूप महाव्रत क्रिया
५५	२३	झूंठा श्रद्धान	झूंठा अर्थ कहि झूंठा श्रद्धान
५६	१५	धन का बल	धन का बल, कुटुम्ब का बल
६७	२३	स्थाकन	स्थानकनि
६८	अंतिम	स्थाकन	स्थानकनि
८१	१६	लोभरूप	लोभरूप नील
१११	२६	भाग का	भाग का भाग
११२	६	एक समय	एक एक समय
१२५	१०	करि गुणवान	करि अन्य गुणवान
१४८	२	सो क्षुल्लक	सो यदि क्षुल्लक
१५०	७	सुवर्ण दास	सुवर्ण दास दासी
१५७	१५	अब एषणा	अब दस एषणा
१६०	१४	दिन प्रति	प्रति दिन
१८२	४	सूक्ष्म पर्याप्त	संयोगरूप सूक्ष्म पर्याप्त
१८४	८	अनंगुणा	अनंतगुणा
१८४	१४	अनंगुणा	अनंतगुणी
१८८	१६	कों ही करै	को ही अंतर करै
१९०	१२	अपूर्वकरण	अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण ये
१९७	६	तो लेस्या नाहीं	तो लेश्या पलटे नाहीं
१९८	१३	वरणादिक्षपणाकरण	वरणादिकार्य क्षपणाकरण
१९९	१२	प्रदेश अजघन्य	प्रदेश सत्व अजघन्य
२००	१२	भाग अप्रशस्त	भाग अनंतवे भाग अप्रशस्त
२११	१४	स्थिति कांडक घात होय	स्थिति कांडकघात, अनुभाग काडकघात होय

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

२११	२१	औदारिक काय योग	औदारिक मिश्र काययोग
२१२	७	पीछे सूक्ष्म	वचनयाग को पीछे सूक्ष्म
२१२	२२	गुणश्रेणि सहित	गुणश्रेणी शीर्ष सहित
२१४	२०	औदारिक	औदारिक औदारिक
२१५	६	औपशमिक	औपशमिक भाव
२२७	२६	क्षायोशमिक, क्षायिक	क्षायोपशमिक, क्षायिक, औदायिक
२३५	६	समुद्र डूबा	समुद्र विषैं डूबा
२४४	६	भजय्या	भगंया
१२६	३	ए	ये
१२६	७	ए	ये
१३६	१५	सो द्रव्य	सो स्वद्रव्य
१४३	२०	भाव के आगे	ताके भेद है।
१४७	१०	वस्तु	वस्त्र
१५८	१६	करि	करी
२१८	६	उदयसत्व	स्थितिसत्व
२२०	२	होई	होय

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

॥ नमः सिद्धेभ्यः ॥

भावदीपिका

पहला अधिकार : सामान्याधिकार

॥ मंगलाचरण ॥

(दोहा)

स्वभाव, विभाव, परभाव को, ज्ञाता सम्यक् ज्ञान ।
ताका धारक तासु पुनि, नमूं चित्त धरि ध्यान ॥१॥

ताका धारक पंच गुरु, अरहंत सिद्ध अरु सूर ।
उपाध्याय सब साधुपद, नमत होय अघ चूर ॥२॥

नमूं वीर जिन जगत गुरु, गणधर गौतम धीर ।
तिन दरसाये तत्त्व सब, स्वपरभाव जुत वीर ॥३॥

सप्त तत्त्व मधि जीव ही, सुख दुःख वेदनहार ।
और तत्त्व जड़ भाव हैं, ज्ञान सहित जिउ सार ॥४॥

जीव भाव त्रेपन कहे, पंच भाव सामान्य ।
तिनका वरनन करत ए, भावदीप श्रुत ज्ञान ॥५॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

समस्त तत्वन का ज्ञाता सर्वज्ञ, सर्वदर्शी ऐसे श्री वर्धमान अंतिम तीर्थंकर, तिनकरि दर्शाये अर तिनके अनुसार कथन करनहारे, चार ज्ञान के धारक, सप्त ऋद्धिकरि युक्त ऐसे श्री गौतम गणधर करि कहे जीव के सामान्य पंच भाव अर विशेष त्रेपन भाव अरु तिनके विशेष अनेक भाव हैं। सो तिनिका वर्णन कछू संक्षेपता करि, तिनके चरणारविन्द को नमस्कार करि तिनके अनुसार कहता हूँ। जातैं जीव को स्वीयभाव (अपने) की पहिचान होत संते परभाव की पहिचान होय, तब परभाव तैं आपकूं छुड़ावै।

बहुरि स्वीयभाव दो प्रकार का है, एक तो स्वभाव-स्वीयभाव अरु दूजा विभाव-स्वीयभाव। इनकी पहिचान होय, तब विभाव भाव को छोड़ि स्वभाव भाव विषैं तिष्ठै; तब सम्पूर्ण कल्याणरूप जो मोक्ष, ताकि सिद्धि होय। संसार रूप दुःख-समुद्र तैं निकलने का उपाय स्वभाव, विभाव व परभाव का जानना ही है।

भगवान करि भाषित जे सप्त तत्त्व (जीवतत्त्व, अजीवतत्त्व, आस्रवतत्त्व, बंधतत्त्व, संवरतत्त्व, निर्जरातत्त्व, मोक्षतत्त्व) हैं, तिनमें चेतना स्वरूप **जीवतत्त्व** है, ताको पहिचानि आप मानना कि यह जीवतत्त्व जो है, सो मैं हूँ।

बहुरि चेतना रहित जड़ स्वरूप **अजीवतत्त्व**, ताको पहिचानि शरीरादिकनि कूं आप तैं पर मानना।

आस्रवतत्त्व दोय प्रकार का है, एक भावास्रव दूजा द्रव्यास्रव। तहां मिथ्यात्व अरु कषाय भाव रूप जो जीव का परिणाम सो भावास्रव जानना। जातैं ये भाव दर्शनमोह अरु चारित्रमोह के उदय तैं होय; तातैं विभाव भाव हैं। बहुरि जीव के रागादिक कषाय भावनि को निमित्त पाय पुद्गल कर्मवर्गणा का कर्मत्व शक्ति को धारि योग द्वार होय आवना, सो द्रव्यास्रव है। सो इन दोनों ही प्रकार के आस्रव को हेय जानि इनका अभाव करना।

बहुरि **बंधतत्त्व** भी दोय प्रकार का है, एक भावबंध दूजा द्रव्यबंध। तहां भावबंध तो आत्मा का रागादिरूप सचिक्कण भाव; सो विभाव भाव जानना। अरु जो योग द्वार करि आई कर्मवर्गणा, तिनका प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेश रूप चार प्रकार बंधभाव को धरि आत्मा के प्रदेशनि तैं एकक्षेत्रावगाहरूप होना, सो द्रव्यबंध कहिये। सो ये पौद्गलिक पर भाव जानना। इन दोनों ही प्रकार के बंध को अहित जानि न करना।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि **संवरतत्त्व** भी दोय प्रकार का है, एक भावसंवर दूजा द्रव्यसंवर। तहां रागादिक भावन का निरोध कहिये रोकना, सो भाव संवर है। अरु रागादिकनि का निरोध होते कर्मास्रव का निरोध होना – रुक जाना, सो द्रव्यसंवर है। जेता काल भावसंवर, तेता ही काल द्रव्यसंवर जानना। भावसंवर स्वभावभाव है अरु द्रव्यसंवर परभाव है।

बहुरि **निर्जरातत्त्व** भी दोय प्रकार का है, एक भावनिर्जरा दूजी द्रव्यनिर्जरा। तहां रागादिकनि का अविभाग-प्रतिच्छेद समय-समय क्षीण होना, सो भावनिर्जरा है। अरु ज्ञानावरणादि कर्मों का समय-समय कर्मत्वशक्ति को छोड़ि जीव के प्रदेशों से छूटना, सो द्रव्यनिर्जरा है। तहां द्रव्यनिर्जरा के दो भेद – एक सविपाक निर्जरा, दूजी अविपाक निर्जरा। तिनमें जो अपनी स्थिति पूरी करि कर्मों का समय-समय उदय होय अरु रस देय कर्मत्वशक्ति को छोड़ि जीव के प्रदेशनि सों छूटना, सो सविपाक निर्जरा कहिये। बहुरि सम्यक्त्व-चारित्र के तप के बल करि समय-समय प्रति असंख्यात समयप्रबद्ध की बिना रस दिये ही गुणश्रेणि निर्जरा होय, सो अविपाक निर्जरा कहिये। सो सविपाक निर्जरा तो सर्व संसारी जीवों के होय है अरु अविपाक निर्जरा सम्यग्दर्शनादिक तैं ही होय है। सो संवर और निर्जरा को हित का कारण जानना, तातैं ताको ग्रहण करना।

बहुरि **मोक्ष** भी दोय प्रकार है, एक भावमोक्ष दूजा द्रव्यमोक्ष। तहां ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, अंतराय – इन चार घातिया कर्मों के अभाव होते संते अनंत चतुष्टय का प्रकट होना; अरहंत पद को प्राप्त होना, सो भावमोक्ष है। तथा सर्व कर्म तैं छूटि सर्व परद्रव्यनि तैं भिन्न होय, आत्मा सिद्ध क्षेत्र विषैं तिष्ठै; सो द्रव्य-मोक्ष है। सो मोक्षतत्व को अपना परम हित जानना।

ऐसे ए सप्त तत्व कहे। **तिन विषैं जीवतत्त्व तो आप जानने के अर्थि कह्या अरु अजीवतत्त्व पर जानने के अर्थि कह्या। अरु बाकी पंचतत्त्व स्वीयभाव, परभाव, विभावभाव जानने के अर्थि कह्या।** अरु जानकरि स्वभाव का ग्रहण करना, परभाव तथा विभाव भाव को छोड़ना। तातैं जीव-अजीव इन दोय सामान्य तत्वनि ही को जानि आपा पर के ज्ञानकरि संतुष्ट होय अरु जीव-अजीव के पाँच आस्रवादि विशेष भाव तत्त्व को न जानै, इनका त्यजन (त्याग) ग्रहण न करे तो सामान्य तत्त्व के जाने कुछ भी कार्य सिद्ध न होय। तातैं भाव ही का जानना कार्य-कारी है। यह ग्रंथ भावनि का प्रकाशक है, तातैं याका नाम भावदीपिका सार्थक है। आगे भावनि का कथन कीजिए हैं।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पंच भावों का निरूपण

तहां जीव के सामान्य भाव तो पांच हैं – १. पारिणामिक २. औदयिक ३. क्षायोपशमिक ४. औपशमिक ५. क्षायिक । जो कर्म की कोई भी अपेक्षा करि नाहीं, ऐसा स्वकीय अन्वयि परमभाव अनादि अनन्त जो जीव का निज स्वरूप, सो पारिणामिक भाव कहिये ।

बहुरि कर्म का उदय ही है कारण जाकूं, ताकरि निपज्यै जो जीव के भाव, सो औदयिक भाव कहिये ।

बहुरि जीव के गुणनि के घातक – प्रतिपक्षी कर्म के क्षयोपशम होते जो आत्मा विषैं एकदेश गुण की प्रगटता होय, सो क्षायोपशमिक भाव कहिये । जहां गुण के प्रतिपक्षी कर्म के सर्वघाती स्पर्द्धकनि के उदय का तो अभाव होय अरु उपरि सत्ता में तिष्ठता प्रतिपक्षी कर्म का उपशान्त करण होय; जाकी उदीरणा होय, उदय में आवे नाहीं अरु गुण के प्रतिपक्षी कर्म का देशघाती स्पर्धकों का उदय होय – ऐसा होते संते जो गुण प्रकट होय; सो क्षायोपशमिक भाव कहिये ।

बहुरि जीव के गुणनि के घातक प्रतिपक्षी कर्म के उदय के अभाव होते जीव के विषैं जो गुण प्रगट होय, सो औपशमिक भाव कहिये ।

बहुरि जीव के गुणनि के घातक प्रतिपक्षी कर्म के क्षय होते जीव विषैं जो गुण प्रगट होय, सो क्षायिक भाव कहिये हैं ।

ऐसे ये पंच भाव सामान्य जानना ।

अब इन पंच भावनि के विशेष त्रेपन भाव कहिये हैं :—

तहां **पारिणामिक भाव के ३ भेद** – जीवत्व, भव्यत्व, अभव्यत्व ।

औदयिक भाव के २१ भेद – ४ गति, ४ कषाय, ३ वेद, ६ लेश्या, मिथ्यात्व, अज्ञान, असंयम, असिद्धत्व, ऐसै २१ भेद हुए ।

क्षायोपशमिक भाव के १८ भेद – तहां १० उपयोग (कुमतिज्ञान, कुश्रुतज्ञान, कुअवधिज्ञान – ए तीन तो कुज्ञान, बहुरि चार सुज्ञान – मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान; बहुरि दर्शन तीन – चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन) बहुरि ५ क्षायोपशमिक लब्धि – दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य; बहुरि क्षायोपशमिक सम्यक्त्व, क्षायोपशमिक चारित्र, देशसंयम, ऐसे अठारह भेद हुए ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि **औपशमिक भाव के २ भेद** – औपशमिक सम्यक्त्व, औपशमिक चारित्र ।

बहुरि **क्षायिक भाव के ९ भेद** – केवलदर्शन, केवलज्ञान, क्षायिकसम्यक्त्व, क्षायिक चारित्र; बहुरि ५ क्षायिक लब्धि – दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य – ऐसे नौ भेद हुए । इति विशेष भाव ।

बहुरि इनके विशेष अनेक भाव हैं, जो असंख्यात लोक प्रमाण हैं, सो ये जीव के स्वीयभाव हैं । इन बिना और समस्त परभाव हैं । परभाव कैसे हैं ? सो ही कहिये हैं:—

तहाँ प्रथम पुद्गल के भाव कहिये हैं – स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण – ये चार तो पुद्गल के मूल गुण हैं । बहुरि इनके उत्तर गुण बीस हैं । तहां स्पर्श के ८, रस के ५, गंध के २, वर्ण के ५ । सो ये तो पुद्गल के शक्तिरूप गुण हैं । गुण का जो परिणमन कहिये अवस्थारूप होना, सो पर्याय है । स्पर्श गुण करि पुद्गलद्रव्य आठ प्रकार परिणमे है – १. शीत, २. उष्ण, ३. स्निग्ध, ४. रूक्ष, ५. कोमल, ६. कठोर, ७. हलका, ८. भारी । बहुरि रस गुणकरि पुद्गलद्रव्य पांच प्रकार परिणमे है – १ कडुवा, २. मीठा, ३. चिरपरा, ४. कषायला, ५. खट्टा । बहुरि वर्ण गुणकरि पुद्गलद्रव्य पांच प्रकार परिणमे है – १. शुक्ल, २. कृष्ण, ३. पीत, ४. रक्त, ५. हरित । बहुरि गंध गुणकरि पुद्गलद्रव्य दोय भेद रूप परिणमे है – १. सुगन्ध, २. दुर्गन्ध । ये बीस प्रकार तो स्वभाव पर्यायभाव हैं । बहुरि १. शब्द, २. बंध, ३. सूक्ष्म, ४. स्थौल्य, ५. संस्थान, ६. भेद, ७. तम, ८. छाया, ९. आतप, १०. उद्योत – ये दश, इनके अनेक विशेष हैं; ते विभाव पर्यायभाव हैं । कारण कि शब्दादि दश पर्याय स्कंध विषैं ही होय हैं, अकेले परमाणु विषैं न होय हैं ।

बहुरि धर्मद्रव्य के गतिहेतुत्वादि, अधर्मद्रव्य के स्थितिहेतुत्वादि, कालद्रव्य के वर्तनाहेतुत्वादि, आकाशद्रव्य के अवगाहनहेत्व इत्यादि – ये सब ही परभाव हैं । इनको अपने स्वभाव न जानना । अरु जे जीव के त्रेपन भाव कहे हैं, ते स्वीयभाव जानना । तिन विषैं विभाव भावनि कों तो हेय जानना, कारण कि ये संसार के कारण हैं ।

विभाव भाव का त्याग करना अरु स्वभाव भाव कूँ उपादेय जानि तिनको ग्रहण करना, ताकरि शुद्ध भावनि की सिद्धि करनी चाहिये । अब स्वभाव भाव, विभाव भाव व शुद्ध भाव, इनका स्वरूप, इनकी प्रवृत्ति, इनका स्वामी, इनका फल इत्यादि का वर्णन करिये हैं ।

।। इति श्री भावदीपिका ग्रन्थ विषैं प्रथम सामान्याधिकार समाप्त हुआ ।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

दूसरा अधिकार : पारिणामिक भावाधिकार

।। मंगलाचरण ।।

(दोहा)

वंदू वीर जिनंद कूं, सकल सिद्धि दातार ।
कहूँ भाव परिणाम के, रचना भेद प्रकार ।।

तहां प्रथम ही पारिणामिक भाव निरूपिये हैं:—

जो अन्य कर्मादिक की अपेक्षा रहित वस्तु का स्वकीय भाव, सो परिणामिक भाव कहिये ।

ता पारिणामिक भाव के तीन भेद हैं – जीवत्व, भव्यत्व, अभव्यत्व ।

जीवत्व भाव

तहां प्रथम ही जीवत्व भाव को निरूपिये है – जीवत्व भाव कहिये चेतना भाव । ज्ञानभाव कहिये जाननभाव । सामान्यतया जानपनो सो जीव को स्वरूप है, अन्वयी भाव है । चेतना बिना तीनों काल विषैं जीव नाहीं, जीव बिना चेतना नाहीं । बहुरि वह कर्मजन्य नाहीं, वस्तु का स्वभाव है । बहुरि कैसा है चेतना भाव ? स्वपर-प्रकाशी हैं, आप कूं भी जाने तथा परकूं भी जाने । बहुरि कैसा है चेतनाभाव ? शाश्वत (सदा बना रहने वाला) है, ताका कोई काल विषैं अभाव नाहीं । बहुरि कैसा है ज्ञानभाव ? जीव का स्वरूप है, जीव की पहिचान करावनहारा, अन्य द्रव्यनि विषैं न पाइये; ऐसा असमान कहिए असाधारण गुण है । जो सर्व ही द्रव्य विषैं पाईए, ताका नाम साधारण है । सो ज्ञानभाव काहू अन्य द्रव्य विषैं नाही । बहुरि कैसा है ज्ञानभाव ? जीव का प्राण है, याही तैं जीवकूं प्राणी कहिये । बहुरि कैसा है चेतना-भाव ? सर्व अवस्था विषैं व्यापी है, संसार अवस्था तथा सिद्ध अवस्था, दोनों अवस्था विषैं पाइये है ।

सो चेतनाभाव दोय प्रकार है – सामान्य चेतना और विशेष चेतना। सामान्य वस्तु को जाने, सो सामान्य चेतना। अरु वस्तु को विशेष सहित जानें, सो विशेष चेतना। बहुरि सामान्य-विशेष चेतना भी दोय प्रकार है – एक शुद्ध चेतना, दूजी अशुद्ध चेतना। तहाँ स्व-पर का सामान्य विशेष जो जाननामात्र, सो शुद्ध चेतना कहिये। अरु पर का निमित्त पाय राग-द्वेषादिकन का जो जानना, सो अशुद्ध चेतना कहिये। जातें कर्म को निमित्त पाय रागादिकरूप होई परिणमे है, सो भी चेतना। चेतनाभाव की निज उपादानशक्ति है; कर्मजन्य नाहीं। जो तामें रागादिरूप परिणमन की उपादानशक्ति न होती, तो कर्म निमित्त तैं रागादिरूप न परिणमता।

जैसे शुक्ल स्फटिकमणि विषैं शुद्ध स्वभाव है, सो पारिणामिक भाव है; कोई कर्मजन्य नाहीं; सो दोनों ही शक्ति को धारै है, शुद्धभावरूप भी परिणमे है अरु हरित-पीत-कृष्णादि डंक को निमित्त पाय हरित-पीतादि रूप भी परिणमे है। जो यामें परिणमनरूप उपादानशक्ति न होती, तो डंक को निमित्त पाय हरित-पीतादिरूप न परिणमतो; अन्य पाषाणादिक के समान। अन्य पाषाणादि विषैं उपादानशक्ति नाहीं, सो डंक का निमित्त पाय भी हरित-पीतादिरूप न परिणमै। जातैं बाह्य निमित्त कारण तो परिणमतानैं परिणमाय सके अरु न परिणमतानैं न परिणमाय सकै। तैसे जीव में कर्म को निमित्त पाय रागादिरूप परिणमन की स्वयं शक्ति है, तातैं परिणमे है।

ताही शक्ति का माहात्म्य करि कर्म के निमित्त तैं यह जीव रागी-द्वेषी होय अशुद्ध चेतानाभाव को प्राप्त भया है। शुद्ध चेतनाभाव जो ज्ञाता-दृष्टा भाव, ताकूं नाहि संभालि सकै है; ताकूं बिसरि रह्यो है। ताही तैं संसारी होय संसार विषैं भ्रमण करता संतो अनादिकाल को दुःखी है; कोई शरण नाहीं। इस घोर संसार में अपने पद तैं च्युत भये सर्व जीव, तिनमें कोई महाभाग जीव को काललब्धि के वश थकी जिनधर्म के धारक जे अरहन्तादिक, तिनका शरण मिले तो ते याका छूट रह्या जो अपना परम शुद्ध जीवत्व भाव कहिये चेतानाभाव, ता विषैं स्थापित करैं; तब यह संसार तैं छूटि सुखी होय। तातैं जिनधर्म का शरण पकड़ि अपने जीवत्वभाव का जानना, श्रद्धान करना, ग्रहण करना योग्य है। ऐसा जीवत्व पारिणामिक भाव दिखावने का तात्पर्य है। ऐसे जीवत्व भाव का निरूपण किया।

ऐसे जीवत्व भाव को धारै है, ताहीतैं याका जीव नाम कहिये हैं। अशुद्ध जीवत्व पारिणामिक भाव तो चतुर्गति संसार को कारण है अरु वर्तमान सांसारिक सुख-दुःख का कारण है। शुद्ध जीवत्व पारिणामिक भाव वर्तमान सुख का कारण है अरु आगामी मोक्ष का कारण है।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

भव्यत्व-अभव्यत्व भाव

अब भव्यत्व–अभव्यत्व पारिणामिक भाव कहिये हैं। जो भावि भव्यत्व परिणमन की योग्यता कूं धरैं हैं, ते भव्यत्व भाव कहिये हैं। अर जो भाव भव्यत्व परिणमन की योग्यता कूं नाहीं धरैं हैं, सो अभव्यत्व भाव कहिये हैं। जो भविष्यत काल विषैं जिस भाव के परिणमन का बाह्य निमित्त पाय तिस भावरूप परिणमेगा, सो भव्यत्व भाव कहिये हैं अर जिस भाव के परिणमन का बाह्य निमित्त पाय करि भी तिस भाव रूप न परिणमेगा सो, अभव्यत्व भाव कहिये। ऐसा इनका स्वरूप जानना।

सो जड़ वर्णादिक जे परभाव, तिन रूप तो निश्चय तैं सर्व ही जीव अतीत-काल विषैं न परिणये अर अनागत काल विषैं न परिणमेंगे, वर्तमानकाल विषैं न परिणमें हैं, तातैं परभाव तो सर्व ही जीवनि के अयोग्यता रूप है, तातैं अभव्यत्व भाव है। अर जो जीव के त्रेपन स्वभावनि विषैं तिन भावनि रूप भविष्यत काल विषैं निमित्त पाय परिणमेगा, अतीतकाल विषैं परिणया, वर्तमान काल विषैं परिणमैं हैं, ते तौ तिस जीव के भव्यत्व भाव हैं। अर त्रेपन भावनि विषैं तिन भावनि रूप न परिणया, न परिणमेगा, न परिणमैं है, ते तिस जीव के अभव्यत्व भाव हैं।

ताहीतैं जे सर्व त्रेपन भावनि विषैं अभव्यत्व भाव बिना अवशेष बावन भावरूप बाह्य निमित्त कारण के मिलत संते परिणमेंगे, ते तो भव्य जीव कहिये अर जे त्रेपन भावनि विषैं एक तो भव्यत्व पारिणामिक भाव अर क्षायोपशमिक भाव विषैं मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान – ये चार तो ज्ञान; अर अवधिदर्शन, क्षायोपशमिक सम्यक्त्व, क्षायोपशमिक चारित्र, देश संयम – ये आठ भाव अर दो औपशमिक अर नव क्षायिकभाव – इन मोक्ष के कारण बीस भावनिरूप बाह्य निमित्त मिलते भी न परिणमेंगे ते अभव्य जीव कहे। जैसैं घोरडु मूंग सहज ही ऐसी शक्ति कूं धारै है कि सीझने के कारण जल-अग्न्यादिक बाह्य निमित्त मिलने तैं भी न सीझै। तैसैं अभव्य जीव सहज ही ऐसी शक्ति को धारै है कि जो सम्यक्त्वादिक बीस मोक्ष के कारण भाव हैं, तिनके कारण देव, गुरु, धर्मादिक मिलते भी तिन रूप सर्वदा-सदा काल विषैं भी न परिणमेंगे; ते अभव्य जीव कहिये हैं।

ताहीतैं शास्त्र विषैं ऐसा कहिये हैं:– जे जीव भविष्यत काल विषैं सम्यग्दर्शनादि रूप परिणमेंगे, ते भव्य जीव कहिये। अर जे सम्यग्दर्शनादि रूप भविष्यत

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

काल विषैं कदा काल भी न परिणमेंगे; ते अभव्य जीव कहिये। तहां भव्य भाव तो चतुर्गति संसार का भी कारण है और मोक्ष का भी कारण है, अर अभव्य भाव संसार का ही कारण है। सम्यक्त्व रूप परिणमि जे संसार के पार होंगे, ते भव्य जीव कहिये। अर सम्यग्दर्शनादि भाव रूप जे भविष्यत् काल विषैं कदा काल भी न परिणमेंगे, ते अभव्य जीव कहिये। तातैं अभव्य जीव मोक्ष कूं कदा काल विषैं भी न प्राप्त होय।

अब ए तीन पारिणामिक भाव जिस-जिस गुणस्थान अर मार्गणास्थान विषैं पाइये हैं, सो दिखाइये हैं:–

तहां जीवत्व भाव तो सर्व गुणस्थान अर सर्व मार्गणास्थान विषैं वा सिद्ध भगवान पर्यंत पाइये हैं। अर भव्यत्व भाव सर्व गुणस्थान तथा सर्व मार्गणास्थान विषैं पाइये है। अर अभव्यत्व भाव गुणस्थान तो प्रथम मिथ्यात्व गुणस्थान विषैं ही पाइये हैं। मार्गणास्थान विषैं, योग मार्गणा विषैं तो आहारकद्विक अर ज्ञान मार्गणा बिषैं मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय, केवल ये पांच; अर संयम मार्गणा विषैं असंयम विना छह संयम; अर दर्शन मार्गणा विषैं अवधि अर केवल ये दोय दर्शन; अर भव्य अर सम्यक्त्व मार्गणा विषैं मिथ्यात्व बिना पांच सम्यक्त्व – इन एक्कीस स्थानकनि विषैं तो न पाइये, अवशेष सर्व मार्गणास्थानकनि विषैं अभव्यत्व भाव पाइये हैं।

॥ इति श्री भावदीपिका ग्रंथ विषै द्वितीय पारिणामिक भावाधिकार पूर्ण भया ॥

यह स्व अनुभवदशा........

तू देख ! यह स्व-अनुभव दशा स्व-समय रूप स्वसुख है, शांत विश्राम है, स्थिर रूप है, कल्याण है, चैन है, तृप्ति रूप है, समभाव है और मुख्य मोक्षमार्ग है। तथा इस सम्यक् सविकल्प दशा में यद्यपि उपयोग निर्मल रहता है, अहा ! तथापि चारित्र परिणाम परावलंब अशुद्ध चंचल रूप होते हैं, अतः सलिकल्प दशा दुःख है, तृष्णा के ताप से चंचल है, पुण्य पापरूप कलाप है, उद्वेगता है, असंतोषरूप है, चारित्र परिणाम ऐसे-ऐसे विलापरूप हैं। ये दोनों अवस्था तूने अपने में देखी है, अतः भला तो यह है कि तू स्व-अनुभवरूप रहने का उद्यम रखा कर, यह हमारा वचन विवरण द्वारा (व्यवहार) उपदेश कथन है।

— **शाह पण्डित दीपचंद कासलीवाल**, आत्मावलोकन; अनुभव वर्णन

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

तीसरा अधिकार : कर्माधिकार

।। मंगलाचरण ।।

(दोहा)

कर्म (ज) भाव अभाव करि, सिद्ध कियो स्वैभाव ।
तिनपद नमि विध कथन कों, करूं चित्त धरि चाव ।।

अथानंतर कर्माधिकार लिखिये हैं । जातैं अब कहेंगे कि जे पचास भाव हैं, ते सर्व कर्म की सापेक्षता तैं उत्पन्न हैं; तातैं कर्मनि का किछुयक कथन करिये हैं ।

सामान्य कर्म के मूल भेद आठ हैं अर उत्तरभेद १६८ वा असंख्यात लोक-प्रमाण हैं, सो ही कहिये हैं ।

१. जीव को विशेष जाननरूप जो ज्ञानभाव, ताकों आवरै – घातै – अभाव करै, सो ज्ञानावरण कर्म है । २. बहुरि सामान्य अवलोकनरूप जो जीव को दर्शनभाव, ताकों घातै; सो दर्शनावरण कर्म है । ३. बहुरि जीव के श्रद्धान, चारित्र गुणों को घातै सो, मोह कर्म है । ४. बहुरि जीव के उत्साह – वीर्य – पराक्रम कों घातै, सो अंतराय कर्म है । ये चार कर्म तो जीव के गुण कों घातैं हैं, तातैं घातिया कर्म कहिये । अर अवशेष चार कर्म जीव के गुण कों नाहीं घातैं हैं, तातैं इनकों अघातिया कर्म कहिये हैं । ५. बहुरि सुख-दुःख की कारण बाह्य सामग्री मिलावै, सो वेदनीय कर्म हैं । ६. बहुरि प्राप्त भई गति विषैं अवस्थान राखै, सो आयु कर्म है । ७. गति-जाति-शरीरादि निपजावै, सो नाम कर्म है । ८. बहुरि उच्च-नीच कुल विषैं धरै, सो गोत्र कर्म है । ऐसैं कर्मनि की मूल प्रकृति तो आठ हैं ।

अब उत्तर प्रकृति कहिये हैं – **५ ज्ञानावरण की** – १. जो जीव के मतिज्ञान कों आवरै, सो मतिज्ञानावरण कहिये । २. अर जो श्रुतज्ञान कों आवरै, सो श्रुतज्ञानावरण कहिये । ३. अर जो अवधिज्ञान कों आवरै, सो अवधिज्ञानावरण कहिये । ४. अर जो मनःपर्ययज्ञान को आवरै, सो मनःपर्ययज्ञानावरण कहिये । ५. अर जाके उदय तैं केवलज्ञान का अभाव रहै, सो केवलज्ञानावरण कहिये ।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अब दर्शनावरण की नव प्रकृतिनि कूं कहिये हैं – तहां ५ तो निद्रा कर्म, १. स्त्यानगृद्धि कर्म के उदय होते जीव के स्त्यानगृद्धि निद्रा होय। ताकरि जीव सूता ही जागतासा कार्य करै, विशेष वीर्य होय; निद्रा का अभाव होते किये कार्य का स्मरण न होय। २. निद्रा-निद्रा कर्म के उदय होतें जीव के निद्रापै निद्रा आया ही करै। अनेक प्रकार यह निद्रावान जीव जागृत भया चाहै, परन्तु निद्रा का परिहार न कर सकै। कर्म के उदय का अभाव भयें ही जागृत होय। ३. बहुरि प्रचला-प्रचला कर्म के उदय होतें जीव कों प्रचला-प्रचला निद्रा होय। ताकरि जीव दु:खी होय हस्तपादादि अंगनि को पटकवो करै, समस्त अंग चलायमान रहैं, मुखथकी लार बहैं – इत्यादि चिन्ह सहित होय, सो यह निद्रा शोक संतापादिक उपजावे हैं। ४. निद्रा कर्म के उदय होतें जीव चालता ही सोवैं, खड़ा रह जाय; बैठा ही सोवे; दीर्घ उच्छ्वास लेय – इत्यादि चिन्ह सहित होय। ५. बहुरि प्रचलानामा कर्म के उदय तैं जीव सोता सा भी रह जाय, कार्य करता जाय, फेर सोय जाय, जागृत होय बचनालाप करै, फेर सोय जाय, इत्यादि चेष्टा सहित होय है। ६. बहुरि चक्षुदर्शनावरण कर्म के उदय तैं चक्षुदर्शन का अभाव होय, नेत्रेन्द्रिय के द्वारा सामान्य ज्ञान का अभाव होय। ७. अचक्षुदर्शनावरण कर्म के उदय तैं अचक्षुदर्शन का अभाव होय – स्पर्शन, रसन, घ्राण, श्रोत्र इन चार इन्द्रियनि के द्वारा सामान्य ज्ञान का अभाव होय। ८. अवधिदर्शनावरण कर्म के उदय तैं अवधिदर्शन का अभाव होय। ९. अर केवलदर्शनावरण कर्म के उदय होतें केवलदर्शन का अभाव होय।

अब मोह कर्म दोय प्रकार है – १. दर्शन मोह २. चारित्र मोह। तहां दर्शन मोह कर्म तीन प्रकार है – १. मिथ्यात्व २. सम्यङ्‌मिथ्यात्व ३. सम्यक् प्रकृति मिथ्यात्व। मिथ्यात्व कर्म के उदय तैं जीव के अन्यथा अभिप्राय होय, जीवादि तत्त्वन का स्वरूप अन्यथा श्रद्धान करै; यथास्वरूप श्रद्धान न करै। सम्यङ्‌मिथ्यात्व कर्म के उदय होतें जीव के यथार्थ श्रद्धान वा मिथ्याश्रद्धान दोनों मिले हुए होय। अर सम्यक् प्रकृति मिथ्यात्व के उदय होतें जीव के श्रद्धान तो यथार्थ होय, परन्तु श्रद्धान विषैं चल, मल, अगाढ़ दोष की उत्पत्ति हुवा करै अर मिटया करै; निर्मल श्रद्धान न रहै।

अथ चारित्र मोह कर्म पच्चीस प्रकार है। तहां १. अनंतानुबंधी क्रोध कर्म के उदय होतें जीव के अन्यथा अन्याय क्रोध होय। २. अनंतानुबंधी मान कर्म के

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

उदय होते जीव के अन्यथा अन्याय मान होय । ३. अनंतानुबंधी माया कर्म के उदय होते जीव के अन्यथा अन्याय माया होय । अर ४. अनंतानुबंधी लोभ कर्म के उदय होतें जीव के अन्यथा अन्याय लोभ होय ।

इन अनंतानुबंधी कर्मनि के तीव्र उदय होतें जीवादि तत्त्वनि का सांचा स्वरूपाचरण न होय । अपने हित-अहित कों न समझैं । विषय-कषाय के कार्यनि की अमर्यादीक वांछा होय । विषय-कषाय के कार्यन विषैं स्वच्छन्द प्रवर्तें । धर्मप्रवृत्ति की वांछा न होय; अर जो होय तो अन्यथा धर्मप्रवृत्ति करै ।

बहुरि अप्रत्याख्यान कर्म के उदय होते चारों ही अव्रत कषाय भावनि रूप प्रवर्त्तैं; परन्तु द्रव्य-क्षेत्र-काल के विचार सहित न्याय रूप प्रवर्त्तैं । १. अप्रत्याख्यान क्रोध कर्म के उदय होते जीव के न्याय रूप मर्यादीक क्रोध होय । २. अप्रत्याख्यान मान कर्म के उदय होते जीव के न्याय रूप मर्यादीक मान होय । ३. अप्रत्याख्यान माया कर्म के उदय होते जीव के न्याय रूप मर्यादीक माया होय । अर ४. अप्रत्याख्यान लोभ कर्म के उदय होते जीव के न्याय रूप मर्यादीक लोभ होय ।

अर अप्रत्याख्यान कर्मनि के उदय होते एकदेश संयम भी नाहीं धरि सकै; परन्तु धर्म विषैं रुचि होय । धर्म अरु धर्म के धारकनि विषैं भक्ति होय, प्रीति होय; सांचा स्वरूपाचरण होय ।

बहुरि १. प्रत्याख्यान क्रोध कर्म के उदय होते जीव के तुच्छसा न्याय रूप क्रोध होय । २. प्रत्याख्यान मान कर्म के उदय होते जीव के तुच्छसा मान होय । ३. प्रत्याख्यान माया कर्म के उदय होते जीव के तुच्छसी माया होय । अर ४. प्रत्याख्यान लोभ कर्म के उदय होते जीव के तुच्छसा लोभ होय ।

बहुरि प्रत्याख्यान कर्मनि के उदय होतें सकल चारित्र तो न धरि सकै; परन्तु देशसंयम के सकल भेदनि कों प्राप्त होय ।

बहुरि १. संज्वलन क्रोध कर्म के उदय होते जीव के अबुद्धिपूर्वक, कार्य रहित, मंदतर क्रोध होय । २. संज्वलन मान कर्म के उदय होते जीव के अबुद्धिपूर्वक कार्य रहित, मंदतर मान होय । ३. संज्वलन माया कर्म के उदय होतें जीव के अबुद्धिपूर्वक, कार्य रहित, मंदतर माया होय । अर ४. संज्वलन लोभ कर्म के उदय होतें जीव के अबुद्धिपूर्वक, कार्य रहित, मंदतर लोभ होय ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अर संज्वलन मोह कर्म के उदय तैं सकल चारित्र तो धरै; परन्तु उत्तर गुणनि में दोष लाग्या करै। यथाख्यात चारित्र का अभाव होय।

बहुरि हास्य कर्म के उदय होते जीव प्रफुल्लित हास्य सहित होय। बहुरि रति कर्म के उदय होते जीव इष्ट पदार्थनि विषैं रति करै, आसक्तिता धरै। अरु अरति कर्म के उदय होते जीव अन्य अनिष्ट पदार्थनि विषैं अरुचि धरै, छोड़चो चाहै। शोक कर्म के उदय होतें जीव निरुद्यमी हुआ चिंता करै, शोक करै; सो शोक कहिये तिस सहित होय। अरु भय कर्म के उदय होते जीव इष्ट वस्तु कूं छिपावै; प्राण सकंप होय। अरु जुगुप्सा कर्म के उदय होते जीव पदार्थन सों ग्लानि करै, सुमरै अहोठा (घृणा) भाव करै। अरु पुरुष वेद कर्म के उदय होतें जीव स्त्रीनि सों रमने की वाञ्छा करै। अरु स्त्री वेद कर्म के उदय होतें जीव पुरुष सों रमन का भाव करै। बहुरि नपुंसक वेद कर्म के उदय होते जीव स्त्री, पुरुष दोनों सों रमने का भाव करै।

अंतराय कर्म के पांच प्रकार हैं। १. दानान्तराय कर्म के उदय होतें जीव दानधर्म न करि सकै। २. लाभान्तराय कर्म के उदय होते जीव के अनेक लाभनि के अनेक उपाय निरर्थक होय, लाभ न हो सकै। ३. भोगान्तराय कर्म के उदय होतें जीव खान-पानादि भोग न करि सकै। ४. उपभोगान्तराय कर्म के उदय होतें जीव वस्त्र, आभूषण, स्त्री, मंदिर आदि उपभोग सामग्री न भोग सकै। ५. अरु वीर्यान्तराय कर्म के उदय होतें जीव के बल – वीर्य की हानि होय।

वेदनीय कर्म के दो प्रकार हैं। १. सुख के कारण बाह्य पदार्थनि का जीव कों अनुभवन करावै, सो सातावेदनीय कर्म है। बहुरि २ दुःख के कारण बाह्य पदार्थनि का जीव कों अनुभवन करावै, सो असातावेदनीय कर्म है।

आयु कर्म चार प्रकार का कहिये हैं। १. जो नरकगति विषैं जीव कों अवस्थान राखै, सो नरक नामा आयु कर्म है। २. जो तिर्यंचगति विषैं जीव कों अवस्थान राखै सो तिर्यंच नामा आयु कर्म है। ३. जो मनुष्य गति विषैं जीव कों अवस्थान राखै, सो मनुष्यायु नामा कर्म है। ४. अरु जो देवगति विषैं जीव कों अव स्थान राखै, सो देवायु नामा कर्म है।

नाम कर्म की एक सौ तेरह प्रकृतियाँ हैं। तहां गति नाम कर्म के ४ **भेद** – नर्कगति नाम कर्म के उदय तैं जीव नर्क विषैं उपजै है। अरु नर्कगति संबंधी **सर्व**

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

(नरक) व्यवहार योग्य भाव होय हैं। प्रथम नरक के प्रथम पाथड़े (नरक) सूं लगाय सप्तम नरक के अंत पाथड़े पर्यंत उनचास पाथड़े में जहां-जहां उपजे है, तिस ही योग्य व्यवहार भाव को धरे है।

बहुरि तिर्यंचगति नाम कर्म के उदय तैं जीव तिर्यंचगति विषैं उपजे है। तहां अनेक प्रकार तिर्यंच योनि एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय संबंधी वृक्ष कीट, भ्रमर, स्वान, मार्जारादि जिस योनि विषैं उपजै है, तहां अनेक प्रकार योग्य तिस ही संबंधी सर्व योग्य व्यवहार भावनि कों प्राप्त होय।

बहुरि मनुष्यगति नाम कर्म के उदय तैं जीव मनुष्यगति विषैं उपजै है। तहां अनेक प्रकार मनुष्यगति संबंधी कर्म भूमियां, आर्य, म्लेच्छ, विद्याधरादि व भोगभूमियां, कुभोग भूमियां व लब्धिपर्याप्तादि अनेक भेदनि विषैं जो-जो व्यवहार हैं; तिस योग्य भावनि कों प्राप्त होय हैं।

बहुरि देवगति नाम कर्म के उदय तैं जीव देवगति विषैं उपजै है। तहां भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिष्क, कल्पवासी च्यारि प्रकार देवनि संबंधी अनेक भेद हैं। तहां जिस भेद विषैं उपजै है, तिस भेद संबंधी जो-जो व्यवहार हैं; तिस ही योग्य भावनि कों प्राप्त होय है।

बहुरि जाति नाम कर्म पांच प्रकार है। तहां एकेन्द्रिय जाति नाम कर्म के उदय तैं जीव एकेन्द्रिय होय है। बेइंद्रिय जाति नाम कर्म के उदय तैं जीव बेइन्द्रिय होय है। तेइन्द्रिय जाति कर्म के उदय तैं जीव तेइन्द्रिय होय है। चौइन्द्रिय जाति कर्म के उदय तैं जीव चौइन्द्रिय होय है। अरु पंचेन्द्रिय जाति नाम कर्म के उदय तैं जीव पंचेन्द्रिय होय है।

बहुरि शरीर नाम कर्म पांच प्रकार है – औदारिक शरीर नाम कर्म के उदय तैं जीव के मनुष्य-तिर्यंचगति विषैं औदारिक शरीर निपजै है। वैक्रयिक शरीर नाम कर्म के उदय तैं जीव के देव व नरकगति विषैं वैक्रयिक शरीर निपजै है। आहारक शरीर नाम कर्म के उदय तैं जीव के – षष्ठम गुणस्थानवर्ती महामुनि के आहारक शरीर निपजै है। तैजस शरीर नाम कर्म के उदय तैं सर्व जीवों के तैजस शरीर निपजै है। अरु कार्माण शरीर नाम कर्म के उदय तैं सर्व जीवनि के ज्ञानावरणादि कर्मनि को पिंड कार्माण शरीर निपजे है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अंगोपांग नाम कर्म तीन प्रकार है। औदारिक अंगोपांग नाम कर्म के उदय तैं बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य के अपने-अपने योग्य औदारिक अंगोपांग होय है। वैक्रयिक अंगोपांग नाम कर्म के उदय तैं देव-नारकी के अपने-अपने योग्य वैक्रयिक अंगोपांग होय है। अरु आहारक अंगोपांग नाम कर्म के उदय तैं आहारक शरीर के योग्य आहारक अंगोपांग होय है।

संस्थान नाम कर्म षट् प्रकार है। संस्थान नाम आकार का है। जैसा संस्थान कर्म का उदय होय, तैसा ही शरीर का आकार होय। समचतुरस्र संस्थान नाम कर्म के उदय तैं पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य, देव के शरीर का आकार समचतुरस्र संस्थान शोभायमान होय है। न्यग्रोधपरिमंडल संस्थान नाम कर्म के उदय तैं पंचेन्द्रिय कर्मभूमियां तिर्यंच, मनुष्य शरीर का आकार न्यग्रोधपरिमंडलाकार होय है। न्यग्रोधपरिमंडल नाम वटवृक्ष का है। जैसे वटवृक्ष नीचे तैं पतला अरु ऊपर तें मोटा होय, तैसें शरीर का आकार नीचे पतला अरु ऊपर मोटा होय; सो न्यग्रोध परिमंडल कहिये। बहुरि स्वातिक संस्थान नाम कर्म के उदय तैं कर्मभूमियां मनुष्य तथा पंचेन्द्रिय तिर्यंच के शरीर का आकार सांतक होय। सांतक नाम बांवई का है। जैसे बांवई नीचे तैं मोटी ऊपर तें पतली होय, तैसें शरीर का नीचला भाग मोटा होय; ऊपर का भाग पतला होय, ऐसा सांतक आकार होय है। बहुरि कुब्जक संस्थान नाम कर्म के उदय तैं कर्मभूमियां पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य के शरीर का कुब्जक आकार होय है; पीछे से ऊंचा अर आगे से नीचा होय। बहुरि वामन संस्थान नाम कर्म के उदय तैं कर्म भूमियां पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य के शरीर का वामन आकार होय है। अपने-अपने सजातीय शरीरन तैं ठिंगना शरीर होय; सो वामन आकार जानना। बहुरि हुंडक संस्थान नाम कर्म के उदय तैं एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय कर्मभूमियां तिर्यंच, मनुष्य वा नारकी के शरीर का हुंडक आकार होय है। पूर्वोक्त कहे जे शरीर के पंच आकार, तिनसौं रहित अन्य सकल शरीर के आकार हुंडक संस्थान जानने। संस्थान के मूल भेद तो ऐसें ६ कहे। अर इनके विशेष भेद असंख्यात हैं। सो ही संस्थान नाम कर्म के मूल भेद तो छह हैं; अर विशेष भेद असंख्यात हैं। जैसा-जैसा कर्म का उदय होय, तैसा-तैसा ही शरीर का आकार होय है।

अब संहनन नाम कर्म छह प्रकार है, सो ही कहिये हैं। संहनन नाम हाड़न का है। वज्रवृषभनाराच संहनन नाम कर्म के उदय तैं भोगभूमियां मनुष्य, तिर्यंच

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

के वा कर्मभूमियां पंचेन्द्रिय संज्ञी तिर्यंच, मनुष्य के शरीर विषैं वज्र का हाड़ होय अर वज्र का ही ऋषभ कहिये बंधाण होय। तिनकरि हाड़ बंध्या होय, अर वज्र की कीलि करि कीलित होय; ऐसा वज्रवृषभनाराच संहनन होय। बहुरि वज्र-नाराच संहनन नाम कर्म के उदय तैं कर्मभूमियां संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य के शरीर विषैं वज्र का हाड़ होय; हाड़न का बंधन सादा होय; ताकरि हाड़ बंधा होय; अर वज्र की कीलिकर कीलित होय, ऐसा वज्रनाराच संहनन होय। बहुरि नाराच संहनन नाम कर्म के उदय तैं कर्मभूमियां संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य के शरीर विषैं हाड़ तो वज्र का होय अर सामान्य कीलिनि करि कीलित होय – ऐसा नाराच संहनन होय। बहुरि अर्द्धनाराच संहनन नाम कर्म के उदय तैं कर्मभूमियां संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य के शरीर विषैं वज्र का हाड़ होय अर सामान्य कीलिनि करि आधा तो कीलित होय अर आधा बिना कीलित होय, ऐसा अर्द्धनाराच संहनन होय। बहुरि कीलित संहनन नाम कर्म के उदय तैं कर्म भूमियां संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य के शरीर विषैं सामान्य हाड़ होय, अर सामान्य कीलि करि कीलित होय, ऐसा कीलित संहनन होय। बहुरि असंप्राप्तासृपाटिका संहनन नाम कर्म के उदय तैं कर्मभूमियां विषैं बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय संज्ञी, असंज्ञी तिर्यंच के अर मनुष्य के सर्प शरीरवत् जुदा-जुदा हाड़ होय; अर नसां करि बंधा होय; कीलिनि करि रहित होय, ऐसा असंप्राप्तासृपाटिका संहनन होय। इन छहूं कर्मनि के भी विशेष भेद असंख्यात हैं। ताहीतें संहनन के भेद भी असंख्यात जानने।

बहुरि बंधन नाम कर्म पांच प्रकार है। पंच प्रकार शरीर नाम कर्म के उदय तें होय है। पंच शरीर योग्य पुद्गल कर्म वर्गणा, तिनका परस्पर बंधाण करै, सो बंधन नाम कर्म जानना। औदारिक बंधन नाम कर्म के उदय तैं औदारिक शरीर योग्य कर्म परमाणूं का, वैक्रयिक बंधन नाम कर्म के उदय तैं वेक्रयिक शरीर योग्य कर्म परमाणूं का, आहारक बंधन नाम कर्म के उदय तें आहारक शरीर योग्य कर्म परमाणूं का, तैजस बंधन नाम कर्म के उदय तें तैजस शरीर योग्य कर्म परमाणूं का, अर कार्माण बंधन नाम कर्म के उदय तैं कार्माण शरीर योग्य कर्म परमाणूं का परस्पर बंधाण करै, सो पंच प्रकार का बंधन नाम कर्म है।

बहुरि संघात नाम कर्म पांच प्रकार है। बंधरूप भया जो पंच प्रकार शरीर योग्य कर्म परमाणू, तिनकूं परस्पर गाढा – छिद्ररहित करै, सो पंच प्रकार

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

संघात नाम कर्म जानना। औदारिक संघात नाम कर्म, वैक्रियिक संघात नाम कर्म, आहारक संघात नाम कर्म, तैजस संघात नाम कर्म, कार्माण संघात नाम कर्म।

आगे स्पर्श नाम कर्म आठ प्रकार है। हलका स्पर्श नाम कर्म के उदय तैं हलका शरीर पावै। भार्‍या स्पर्श नाम कर्म के उदय तैं भार्‍या शरीर पावै। कोमल स्पर्श नाम कर्म के उदय तैं कोमल शरीर पावै। कर्कश स्पर्श नाम कर्म के उदय तैं कर्कश (कठोर) शरीर पावै। स्निग्ध स्पर्श नाम कर्म के उदय तैं सचिक्कण शरीर पावै। रूक्ष स्पर्श नाम कर्म के उदय तैं रूखा शरीर पावै। शीत स्पर्श नाम कर्म के उदय तैं शीतल शरीर पावै। अर उष्ण स्पर्श नाम कर्म के उदय तैं उष्ण शरीर पावै।

रस नाम कर्म पांच प्रकार है। मिष्ट रस नाम कर्म के उदय तैं शरीर विषैं मिष्ट रस होय। आम्ल रस नाम कर्म के उदय तैं शरीर विषैं खाटा रस होय। कटुक रस नाम कर्म के उदय तैं शरीर विषैं कडुवो रस होय। कषायला रस नाम कर्म के उदय तैं शरीर विषैं कषायलो रस होय। तिक्त रस नाम कर्म के उदय तैं शरीर विषैं चरपरो रस होय।

गंध नाम कर्म दोय प्रकार है। सुगन्ध नाम कर्म के उदय तैं शरीर में सुगन्ध होय। दुर्गंध नाम कर्म के उदय तैं शरीर में दुर्गंध होय।

वर्ण नाम कर्म पांच प्रकार है। शुक्ल नाम कर्म के उदय तैं शरीर शुक्ल होय। कृष्ण नाम कर्म के उदय तैं शरीर कृष्ण होय। रक्त नाम कर्म के उदय तैं शरीर रक्त होय। हरित वर्ण नाम कर्म के उदय तैं हरित शरीर होय है। पीत वर्ण नाम कर्म के उदय तैं पीलो शरीर होय है।

ऊपर कहे जे स्पर्शादि बीस कर्म सो शुभ, अशुभ भेद करि चालीस कर्म के भेद होय हैं। शुभ स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण नाम के उदय तैं शरीर विषैं स्पर्शादि शुभ होय। अशुभ स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण नाम कर्म के उदय तैं शरीर विषैं स्पर्शादिक अशुभ होय।

बहुरि विहायोगति नाम कर्म दोय प्रकार है। शुभ विहायोगति नाम कर्म के उदय तैं शुभ – सुवाहनी – मनोज्ञ चाल होय, सो शुभ विहायोगति नाम कर्म का उदय संज्ञी पंचेन्द्रिय भोग भूमियां, कर्म भूमियाँ, तिर्यंच, मनुष्य विषैं तथा सर्व देवन विषैं है। अर अशुभ विहायोगति नाम कर्म का उदय बेइंद्रिय, तेइंद्रिय, चौइंद्रिय, असैनी पंचेद्रिय सर्व के है। अर कर्मभूमियां संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य के भी होय। ताकरि अशुभ – असुहावनी चाल होय।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगै आनुपूर्वी नाम कर्म चार प्रकार है। काय योग विषैं आनुपूर्वी कर्म को उदय है। पाई नवीन पर्याय का कार्माण का काल एक समय तथा दोय समय तथा तीन समय है। तिन विषें पूर्व पर्याय का आकार जैसा का तैसा राखै। बहुरि जिस क्षेत्र संबंधी आनुपूर्वी कर्म का बंध किया था, तिस ही क्षेत्र विषें उदय काल विषें जीव उपजे है – ऐसा इस कर्म का कार्य है, ताही तें याकूं क्षेत्र विपाकी कर्म कह्या है। नरक गत्यानुपूर्वी, तिर्यंच गत्यानुपूर्वी, मनुष्य गत्यानुपूर्वी, देव गत्यानुपूर्वी – ऐसे चार प्रकार है।

बहुरि अगुरुलघु नाम कर्म के उदय तें पाया शरीर, जीव कों हलका भारी न लागै। उपघात नाम कर्म के उदय तें अपने ही शरीर विषैं अपने ही घात के कारण सींग, नख, दांत इत्यादि अवयव होय। परघात नाम कर्म के उदय तें पैला के (दूसरे के) घात का कारण अपने शरीर विषैं अवयव होय। श्वासोच्छ्वास नाम कर्म के उदय तें शरीर विषैं श्वासोच्छ्वास की शक्ति होय। आताप नाम कर्म के उदय तें सूर्य-विमान के लागें ऐसा पर्याप्त पृथ्वी काय जीव तिन विषें उपजै है। तिनही के शरीर में आताप रूप प्रकाश होय है और कोई भी जीव के या प्रकृति का उदय नाहीं। सो आप तो शीतल है अर पैला (दूसरे) कूं आताप करै है। बहुरि उद्योत नाम कर्म के उदय होतें एकेन्द्रिय, पृथ्वीकाय, अपकाय, वनस्पति काय के अर बेइंद्रिय, तेइंद्रिय, चौइंद्रिय, असंज्ञी, संज्ञी-पंचेन्द्रिय भोगभूमियां, कर्मभूमियां पर्याप्त तिर्यंचनि को शरीर शीतल प्रकाश सहित होय। अर तीर्थंकर नाम कर्म के उदय तें जीव सर्व पूज्य तीर्थंकर पद पावै।

आगे निर्माण नाम कर्म दोय प्रकार है – स्थान और प्रमाण। स्थान नाम कम के उदय तें सर्व अंगोपांग शरीर विषैं यथास्थानक होय। अर प्रमाण नाम कर्म के उदय तें अंगोपांग यथायोग्य जैसे प्रमाण को धर्या जैता चाहिये, तैता प्रमाण कूं धर्या ही होय। अर त्रस नाम कर्म के उदय तें जीव बेइंद्रिय, तेइंद्रिय, चौइंद्रिय, पंचेन्द्रिय चार प्रकार त्रस काय विषें उपजे है; शरीर हलनचलनादि की शक्ति सहित होय। स्थावर नाम कर्म के उदय तें जीव एकेन्द्रिय थावरकाय विषैं उपजै; शरीर हलन-चलनादिक की शक्ति रहित होय। बादर नाम कर्म के उदय तें जीव बादर शरीर पावै। बादर शरीर आप पैला के (दूसरे के) आधार रहै और अन्य बादर शरीर कों आप आधार होय। अर सूक्ष्म नाम कर्म के उदय तें जीव सूक्ष्म शरीर युक्त होय निराधार आकाश विषैं रहे है; किसी के आधार रहे नाहीं; और कों आधार होय

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

नाहीं। वज्र, पर्वत, मेरु आदिकन तैं अटकै नाहीं। किसी भी प्रकार अग्नि शस्त्रादिक तैं कदलीघात मरण नाहीं। अपनी आयु के अंत समय ही मरै, आप कोई का मारै नाहीं, तथा अन्य का मार्‌या आप मरै नाहीं। बहुरि पर्याप्ति नाम कर्म के उदय तैं जीव अपने योग्य चार वा पांच वा छह पर्याप्ति पूर्ण करै; अपूर्ण काल में मरै नाहीं। अपर्याप्त नाम कर्म के उदय तैं जीव अपने योग्य पर्याप्ति पूर्ण न करै। शरीर पर्याप्ति (दूसरी) पूर्ण न कर सकै, बीच में ही मरण को प्राप्त होय, सो लब्धि अपर्याप्त जीव कहिये। सुस्वर नाम कर्म के उदय तैं संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवनि के सुहावनो शब्द होय; वचन परिणति मनोज्ञ होय। दुस्वर नाम कर्म के उदय तैं बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय ऐसे चार प्रकार त्रस जीवन के असुहावनो शब्द होय; वचन परिणति अमनोज्ञ होय। प्रत्येक शरीर नाम कर्म के उदय तैं जीव प्रत्येक शरीर पावे; एक शरीर का स्वामी एक ही जीव होय, सो प्रत्येक शरीर कहियै। साधारण शरीर नाम कर्म के उदय तैं जीव साधारण शरीर पावे; जो अंनत जीवन का एक शरीर होय, सो साधारण शरीर कहिये। सो ऐसा शरीर साधारण वनस्पति काय निगोद जीवनि के होय है। साधारण शरीर नाम कर्म का उदय इनही के है, और के नाहीं। स्थिर नाम कर्म के उदय तैं शरीर विषैं रस, रुधिर, मांस, मेद, मज्जा, अस्थि, शुक्र ए सप्त धातु अर वात, पित्त, कफ, शिरा, स्नायु, चर्म, उदराग्नि ये सप्त उपधातु यथास्थान स्थिर रहें। तातैं जीव सुखी रहे। अर अस्थिर नाम कर्म के उदय तैं धातु, उपधातु यथा ठिकाने स्थिर न रहैं; तब जीव दुःखी होय। शुभ नाम कर्म के उदय तैं मस्तक, मुख, पेट, नेत्र, नासिका, कर्ण, हस्त, पाद, हृदय, गुदा, पीठ आदि सर्व अङ्गोपाङ्ग शरीर विषैं सुन्दर होय। अशुभ नाम कर्म के उदय तैं सर्व आंगोपांग शरीर विषैं असुन्दर होय। सुभग नाम कर्म के उदय तैं जीव सर्व को सुहावनो लागै। असुन्दर शरीर वा पाप का उदय होतै भी सर्व जन प्रीति करैं। अर दुर्भग नाम कर्म के उदय तैं जीव सर्व को असुहावनो लागै, सुन्दर शरीर वा पुण्य का उदय होतै भी सर्व जन अप्रीति करैं। आदेय नाम कर्म के उदय तैं शरीर प्रभा(कांति) करि युक्त होय; सर्व आनंद मानैं; आदर करैं; सत्कार करैं। अर अनादेय नाम कर्म के उदय तैं शरीर प्रभा रहित होय; कोई भी आनन्द न मानैं; आदर सन्मान न पावै। यशस्कीर्ति नाम कर्म के उदय तैं जगत विषैं यश होय। अर अयशस्कीर्ति नाम कर्म के उदय तैं जगत में पुण्य उदय होतै भी अयश होय।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि गोत्र कर्म दोय प्रकार है। तहां उच्च गोत्र कर्म के उदय तैं जगत विषैं जीव ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, कर्मभूमियां मनुष्य, वा भोगभूमियां मनुष्य वा समस्त देव उच्च कुल विषैं उपजै है। नीच गोत्र कर्म के उदय तैं जीव तीन कुल रहित कर्मभूमियां मनुष्य वा तिर्यंच वा सर्व नारकी पर्याय विषैं उपजै है। ऐसा कर्म का विधान जानना।

अब कर्म की जे प्रकृति १६८ कही, तिन विषैं चार घातिकर्म की प्रकृति ज्ञानावरण की ५, दर्शनावरण की ६, मोहनीय की २८, अंतराय की ५, सर्व सैंतालीस। तिनमें सर्व घाती प्रकृति २१ – केवलज्ञानावरण, केवलदर्शनावरण, निद्रा ५, मोहनीय की १४ (मिथ्यात्व, सम्यक् मिथ्यात्व, अंनतानुबन्धी ४, अप्रत्यख्यान ४, प्रत्याख्यान ४,। बहुरि देशघाति प्रकृति २६ – मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मनःपर्ययज्ञानावरण, चक्षुदर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण, अवधिदर्शनावरण, बहुरि दर्शनमोह की सम्यक्त्वमोहनीय, संज्वलन ४, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पुरुषवेद, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, बहुरि अंतराय की ५ – दानान्तराय, लाभान्तराय, भोगान्तराय, उपभोगान्तराय, वीर्यान्तराय। ऐसे सर्वघाती, देशघाती प्रकृति जाननी।

बहुरि इन एक सौ अड़सठ (१६८) प्रकृतिनि विषैं पाप प्रकृति १०० – घातिया की ४७, असातावेदनीय, नीचगोत्र, नरकायु, नाम कर्म की ५० – नरक गति, तिर्यंच गति, जाति ४, (एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय) संस्थान ५, (न्यग्रोधपरिमण्डल, सांतक – स्वाति, कुब्जक, वामन, हुंडक) संहनन ५ (वज्रनाराच, नाराच, अर्धनाराच, कीलक, असंप्राप्तासृपाटिका) अशुभ स्पर्शादिक २० (स्पर्श ८, रस ५, गंध २, वर्ण ५) अप्रशस्त विहायोगति, नरक गत्यानुपूर्वी, तिर्यंच गत्यानुपूर्वी, उपघात, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, दुःस्वर, साधारण, अशुभ, अस्थिर, दुर्भग, अनादेय, अयशस्कीर्ति।

बहुरि पुण्य प्रकृति ६८ – साता वेदनीय, उच्चगोत्र, देवायु, मनुष्यायु, तिर्यंचायु, बहुरि नाम कर्म की ६३ – देव गति, मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय जाति, शरीर ५, बन्धन ५, संघात ५, आंगोपांग ३, समचतुरस्र संस्थान, वज्रवृषभनाराच संहनन, शुभ स्पर्शादिक २० (स्पर्श ८, रस ५, गंध २, वर्ण ५,) प्रशस्त विहायोगति, देवगत्यानुपूर्वी, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

तीर्थंकर, निर्माण, त्रस, बादर, पर्याप्त, सुस्वर, प्रत्येक, शुभ, स्थिर, सुभग, आदेय, यशस्कीर्ति ।

बहुरि इन विषैं बंध योग्य प्रकृति एक सौ बीस हैं । मिश्र मोहनीय, सम्यक्त्व मोहनीय, बन्धन ५, संघात ५, वर्णादि १६, इन अट्ठाईस प्रकृतिनि का बन्ध होय नाहीं ।

बंध योग्य जो एक सौ बीस प्रकृति हैं, उनमें से अप्रतिपक्षी प्रकृति तो ५८ हैं । ज्ञानावरणी ५, दर्शनावरणी ९, अन्तराय ५, मोहनीय १९ (मिथ्यात्व, कषाय १६, भय, जुगुप्सा) नाम कर्म की १६ (अगुरुलघु, निर्माण, तैजस, कार्माण, स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, उपघात, परघात, उच्छवास, आतप, उद्योत, तीर्थंकर, आहारकद्विक), आयु ४, इनका लार(साथ)ही बंध होय और लार बिना भी बंध होय, कोउ नियम नाहीं ।

बहुरि प्रतिपक्षी प्रकृति ६२ हैं । वेदनीय २, गोत्र २, मोहनीय ७ (हास्य, रति, अरति, शोक, वेद ३) नाम कर्म की ५१ (गति ४, जाति ५, शरीर २, आंगोपांग २, संस्थान ६, संहनन ६, विहायोगति २, आनुपूर्वी ४, बादर, सूक्ष्म, त्रस, स्थावर, पर्याप्त, अपर्याप्त, सुस्वर, दुःस्वर, प्रत्येक, साधारण, शुभ, अशुभ, स्थिर, अस्थिर, सुभग, दुर्भग, आदेय, अनादेय, यशस्कीर्ति, अयशस्कीर्ति) । इन विषैं वेदनीय, गोत्र, रति, अरति, हास्य, शोक, तीन वेद, गति, जाति, शरीर, आंगोपांग, संस्थान, संहनन, विहायोगति, आनुपूर्वी अरु दशद्विक इन विषैं एक-एक ही का बंध होय, तातैं प्रतिपक्षी कहिये ।

बहुरि एक सौ अड़सठ प्रकृतिनि विषैं जीव विपाकी वा पुद्गल विपाकी दोय प्रकार हैं । तहां जीव विपाकी प्रकृति ७८ हैं, तिन विषैं घातिया की तो सर्व ४७, वेदनीय की २, गोत्र की २, नाम कर्म की २७ (गति ४, जाति ५, विहायोगति २, श्वासोच्छवास, तीर्थंकर, त्रस, स्थावर, बादर, सूक्ष्म, पर्याप्त अपर्याप्त, सुस्वर, दुःस्वर, सुभग, दुर्भग, आदेय, अनादेय, यशस्कीर्ति, अयशस्कीर्ति), इनका उदय जीव की अवस्था विषैं होय, तातैं जीव विपाकी कहिये ।

बहुरि पुद्गल विपाकी प्रकृति ८२ हैं । शरीर ५, आंगोपांग ३, बंधन ५, संघात ५, संस्थान ६, संहनन ६, शुभाशुभवर्णादिक ४०, अगुरुलघु, उपघात, परघात, आतप, उद्योत, निर्माण, प्रत्येक, साधारण, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ । इनके उदय

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

विषैं जीव सम्बन्धी पुद्गल ही परणवैं है। तातैं इनकों पुद्गल विपाकी कहिये हैं। इन कर्मनि के उदय तैं शरीरादिक परभाव निपजैं हैं, ऐसा जानना।

बहुरि आयु कर्म चार प्रकार है, सो भव विपाकी है। इनका उदय भव विषैं ही है।

बहुरि आनुपूर्वी चार प्रकार की है, सो क्षेत्र विपाकी है। इनका उदय क्षेत्र विषैं ही है। ऐसा इन कर्मनि का जीव-पुद्गल विषैं भाव उपजावने का नेम (नियम) जानना।

।। इति श्री भावदीपिका ग्रन्थ विषैं तृतीय कर्माधिकार समाप्त हुआ ।।

विशेषो बलवान भवेत्······

हे सूक्ष्माभास ! तूने कहा वह सत्य है, किन्तु अपनी-अपनी अवस्था देखना। जो स्वरूपानुभव में व भेद-विज्ञान में उपयोग निरन्तर रहता है, तो अन्य विकल्प क्यों करना? वहां ही स्वरूपानन्द सुधारस का स्वादि होकर संतुष्ट होना, किन्तु निचली अवस्था में वहां निरन्तर उपयोग रहता ही नहीं; उपयोग अनेक अवलम्बनों को चाहता है। अतः जिस काल वहां उपयोग न लगे, तब गुणस्थानादि विशेष जानने का अभ्यास करना। तूने कहा जो अध्यात्म-शास्त्र का ही अभ्यास करना युक्त है, किन्तु वहां भेद-विज्ञान करने के लिए स्व-पर का सामान्यपने स्वरूप निरूपण है, और विशेष ज्ञान बिना सामान्य का जानना स्पष्ट नहीं होता। इसीलिए जीव और कर्म का विशेष अच्छी तरह जानने से ही स्व-पर का जानना स्पष्ट होता है। उस विशेष को जानने के लिए इस शास्त्र (करणानुयोग) का अभ्यास करना। कारण सामान्य शास्त्र से शास्त्र विशेष बलवान है। वही कहा है – "**सामान्यशास्त्रतो नूनं विशेषो बलवान भवेत्**"।

– **पण्डितप्रवर टोडरमल**, सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका की पीठिका

—✻—

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

चौथा अधिकार : औदयिक भावाधिकार

गतिभाव अंतराधिकार

।। मंगलाचरण ।।

(दोहा)

कर्मोदयजन्य भाव कौ, कर अभाव बड़भाग ।
निजस्वभाव परगट कियौ, नमों तासि धरि राग ।।

कर्म के उदय तें जो आत्मा विषैं भाव उपजैं हैं, सो औदयिक भाव कहिये । सो औदयिक भाव इक्कीस प्रकार है – गति ४, कषाय ४, वेद ३, मिथ्यात्व, अज्ञान, असंयम, असिद्धत्व, लेश्या ६ ।

तिन में प्रथम ही चार गति भावाधिकार लिखिये हैं । गति भाव चार प्रकार है । मनुष्य गति भाव, तिर्यंच गति भाव, देव गति भाव, नरक गति भाव । गति नाम कर्म के उदय तें आत्मा विषैं जो भाव निपजै, सो गति भाव कहिये हैं । जो जीव जैसी गति पावै, ताही संबंधी सर्व भाव ताही गति के अनुसार होय हैं ।

तहां प्रथम ही मनुष्य गति भाव कहिये हैं – मनुष्य गति नाम कर्म के उदय तें जीव मनुष्य गति पावै है । तहां सर्व भाव मनुष्य जैसे होय हैं – दृढ़ उपयोगी होय; धारणा ज्ञान बहुत होय । स्व-पर की प्रवृत्ति जानपने में आप के घने काल की याद रहै । हेय-उपादेय का ज्ञान रहै, सम्यक्त्व, व्रत-तप, चारित्र धारने की शक्ति होय, पुण्याधिकारी क्रिया में दृढ़ होय, मैथुनादि क्रिया ढकी होय । अन्नपान, मेवा, मिष्ठान्न दुग्धादिक नाना प्रकार स्वाद पूर्वक जाके खानपान होय । हस्त थकी मुख में कवलाहार करे । अग्न्यादि करि पच्या जाके द्रव्य, क्षेत्र काल, भाव की मर्यादा लिये भोजनादिक का भक्षण होय । सोवना, बैठना, खड़ा होना, चालना, भय आये छिप जाना,

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

भाग जाना, इत्यादि शारीरिक सगरी (सर्व) क्रिया मनुष्य की समान होय। अर जाके अक्षर सहित वचन होय। गुण-दोष का विचार, अतीत काल का याद करना, अनागत काल विषैं याद रखना, इत्यादि मन की क्रिया युक्त होय। बहुरि भयादिक के आये छुप जाने का, भाग जाने का, भय मेटने का अनेक उपाय युक्त होय। परिग्रह संग्रह करने की इच्छा करि युक्त होय। वस्त्राभूषण शृंगारादि करि मण्डित होने की इच्छा सहित होय। पांच इंद्रियनि के विषय सेवने की इच्छा करि पूर्ण होय। घर, मंडप, मन्दिरादिकनि में रहो चाहे, माता-पिता, भ्राता स्त्री पुत्रादिकनि के सम्बन्ध में रहो चाहै; तिनसों सदाकाल स्नेह मोह करि युक्त होय। शास्त्रादि पढ़ने, सुनने वा धारण करने की शक्ति युक्त होय। शिल्पादि अनेक चातुर्यता की शक्ति युक्त होय। माता-पिता करि उत्पत्ति होय। सर्व कषायनि के स्थानक रूप होने की शक्ति होय। जीवनि का मारना, न मारना तथा पाप पुण्य को जानना इत्यादि विचार सहित होय। उपशम श्रेणी, क्षपक श्रेणी विषैं आरूढ़ होय। कर्म को नाश करि मुक्त होने की शक्ति युक्त होय। इत्यादि भाव जीव के मनुष्य गति सम्बन्धी मनुष्य गति नाम कर्म के उदय होतैं होय हैं। ये मनुष्य गति भाव चारों गति के कारण हैं। अर पंचम गति जे मोक्ष गति, ताका भी कारण हैं। वर्तमान सुख-दुःख दोऊ का कारण हैं।

अथ तिर्यंच गति भाव कहिये हैं। तिर्यंच गति नाम कर्म के उदय तैं जीव तिर्यंच गति पावे है। तहां सर्व भाव तिर्यंच जैसे होय हैं। शिथिल उपयोगी होय, धारणा ज्ञान करि हीन होय, स्व-पर के मन-वचन-काय की प्रवृत्ति घना काल पर्यन्त स्पष्ट याद न रहै, किंचित् काल किंचित् सी अस्पष्ट याद रहै। हेय-उपादेय, गुण-दोष के ज्ञान रहित होय, शास्त्र पढ़ने व अक्षर सहित शब्द बोलने की शक्ति रहित होय तथा विवेक रहित होय। मैथुनादि संज्ञा जिनके उघाड़ी होय। घास, काष्ठ, कड़बी पत्रादि वा मांस, मल-मूत्रादि खाने की यथा योग्य इच्छा होय। मुख थकी मुख में कवलाहार करै। किंचित् शास्त्र सुनने की, अर्थ धरने की, किंचित् विशेष सहित जीवादिक तत्त्वनि का श्रद्धान रूप सम्यक्त्व वा देश संयम धारने की शक्ति होय। वा एकेन्द्रियादिक के लेपाहार भी होय है। मर्यादा रहित है आहार जिनके, प्रभा - कांति तथा पांचों इन्द्रियनि के सुख करि रहित होय। भय आये भयादिक के मिटावने का उपाय करि रहित होय। सोवना, बैठना, चालना, शब्द करना, काम सेवना इत्यादि सर्व शरीर की क्रिया यथा योग्य तिर्यंच की सी होय। मन का विकल्प, श्रवण, विचार,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

धारण सर्व ही होय । परिग्रह-संग्रह वा वस्त्राभूषण, शृंगारदिक की इच्छा विचार करि रहित होय । घर-मंडपादिक विषैं रहने की इच्छा करि रहित होय । माता-पितादिक तैं भी वा माता-पिता बिना सन्मूर्च्छन उत्पत्ति होय । अर यथा योग्य तिनकैं कषाय होय । जीवनि का मारना न मारना, तिनकैं विचार रहित होय । पर्याय के वश थकी तिनकैं जीवनि का मारना न मारना होय है । जैसी पर्याय पावै, तैसा ही भाव होय । थावर काय विषैं चलने, बोलने की वा सुनने की इंद्रिय बिना चार इंद्रिय ज्ञान की शक्ति रहित होय । इत्यादि भाव जीव के तिर्यंच गति सम्बन्धी तिर्यंच गति नाम कर्म के उदय तैं होय हैं । ए तिर्यंच गति भाव वर्तमान तो किंचित् सुख अर महादुःख देने का कारण है । अर आगामी चारों गति का कारण है ।

अथ नरक गति भाव कहिये हैं – नरक गति नाम कर्म के उदय तैं जीवनि को नरक गति की प्राप्ति होय है । तहां सर्व भाव नरक जैसे होय हैं । द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, सम्बन्ध विषैं अरति भाव होय । द्रव्य तो अति घिणावणो, दुर्गन्ध, महा-कुवर्ण, कर्कश, शीत, उष्ण आदि खोटा स्पर्श कूं धर्यां, महा कटु रस करि युक्त, सर्व रोग करि सम्पूर्ण, ऐसा तो शरीर; ताविषैं अरति भाव, वा नारकीनि के खाने की मांटी महा दुर्गन्ध, खोटे रस कूं धर्यां, कुवर्णी तथा क्षार दुर्गन्ध जल इत्यादि नरक के द्रव्य थकी अरति भाव करै । अरु नरक की भूमि महा दुर्गन्ध, महा उष्ण वा महा शीत वा महा कर्कश स्पर्श कूं धर्यां पृथ्वी क्षेत्र, ताविषैं अरति भाव । बहुरि अपनी जेती सागरादिक प्रमाण कूँ धर्यां आयु ऐसा जो काल, ताविषैं अरति भाव । बहुरि अति प्रचण्ड कषाय कूं धर्यां, स्व-पर कूं दुःख के कारण ऐसे भाव, तिन विषैं अरति भाव । बहुरि महा कठोर चित्त कूं धरैं । दुर्जन दया रहित मार-मार करते अनेक प्रकार दुःख के देनहारे, सज्जनता रहित, ऐसे नारकीनि सों सम्बन्ध, तिन विषैं अरति भाव – ऐसे पंच स्थानकनि विषैं अरति भाव । सदा परस्पर लड़ने-मारने का भाव वा प्रवृत्ति निरन्तर दुःखी, क्षण मात्र भी उनको सुख की प्राप्ति नाहीं । माता-पिता बिना ही है उत्पाद जन्म जिनका, सर्व कुटुम्ब, वस्त्राभूषण रहित, उत्कृष्ट हुंडक संस्थान कूं धर्यां शरीर का खोटा आकार, पांचों इन्द्रियनि के सर्व विषय सुख रहित अर सर्व कषाय भाव, ज्ञान भाव, पांचों इन्द्रियनि के विषय अवधि इत्यादि भाव नरक गति योग्य होय । इत्यादि भाव जीव के नरक गति नामा नाम कर्म के उदय तैं होय हैं । ए नरक गति भाव, वर्तमान तो महादुःख के कारण हैं अर आगामी मनुष्य, तिर्यंच दोय गति के कारण हैं ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अथ देव गति भाव कहिये हैं – देव गति नामा नाम कर्म के उदय तैं जीव देव गति पावै है। तहां सर्व ही भाव देव जैसे होय हैं। सर्व द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, सम्बन्ध रति के कारण हैं, तिन विषैं रति भाव धरै है। तहां द्रव्य तो सप्त धातु रहित, समचतुरस्र संस्थान आकार को धरया; भला है वर्ण अर कांति जिनकी, प्रभा सहित, महा सुगन्ध, भला स्पर्श के भेद कूं धरयां, आनन्द को भरयो, सुन्दर, दैदीप्यमान, सुभग, मनोग्य जो शरीर; ताविषैं रति भाव धरै। बहुरि वस्त्राभरण, शय्या, आसन, मन्दिर, वन इत्यादि सर्व मनोग्य सामग्री; तिन विषैं रति भाव। बहुरि स्वर्गादि क्षेत्र वा द्वीप-समुद्रादि रमण करने के उत्तम क्षेत्र, तिन विषैं रति भाव वा अपनी आयु प्रमाण सागारादि प्रमाण कूं धरया सुखरूप काल, तिन विषैं रति भाव। बहुरि द्वीप-समुद्रादि विषैं क्रीड़ा करना, हर्ष करना, मद करना, काम रत रहना – इत्यादि भावनि विषैं रति भाव। महा सुन्दर भेष कूं धरै ऐसी देवांगना वा देव, तिनका सम्बन्ध, तिन विषैं रति भाव। अवधि ज्ञान सहित इन्द्रिय ज्ञान का है बड़ा विषय जिनकों, महाचातुर्यता कूं धरै; योग्य मनोज्ञ स्थानक विषैं अपरिछिन्न (गुप्त) है मैथुन संज्ञा जिनके, मानसिक है आहार संज्ञा जिनके, किंचित्सी कदा काल में है भय संज्ञा जिनके, अर दिव्य अर पवित्र हैं सर्व वस्त्राभरणादि परिग्रह जिनके, विवेकी, हेयोपादेय ज्ञान करि सहित हैं तथा सम्यक गुण धारणै कों समर्थ हैं। निद्रा, रोग, अनिष्ट संयोग-इष्ट वियोग करि उत्पन्न भाव, तिन करि रहित हैं। श्रृंगार रस के भरै सर्व पांचों इन्द्रियनि के सम्पूर्ण विषय-सुखनि के भोगनहारै हैं। शास्त्र पढ़ने की, सुनने की, धारणै की, विचारने की है बड़ी शक्ति जिनके, बहुरि वचन बोलना, चालना, शय्या, आसन, सारी क्रिया देवनि की सी होय। इत्यादि भाव जीव के देव गति सम्बन्धी देव गति नाम कर्म के उदय तैं होय हैं। ये देव गति भाव वर्तमान तो सुख के कारण हैं अर आगामी मनुष्य तिर्यंच दोय गति के कारण हैं।

ये कहे जे चार गतिभाव, ते जिस-जिस गुणस्थान अर मार्गणास्थान विषैं पाइये हैं, सो दिखावै हैं।

मनुष्य गतिभाव सर्व गुणस्थान विषैं पाइये हैं। अर मार्गणास्थान विषैं **गति** तो मनुष्य, **जाति** – पंचेन्द्रिय, **काय** – त्रस, **योग** – मन के ४, वचन के ४, औदारिक काय, औदारिक मिश्र, आहारक काय, आहारक मिश्र, कार्माण ऐसे तेरह योग,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

वेद तीन, **कषाय** सर्व पच्चीस, **ज्ञान** सर्व आठ, **संयम** सर्व सात, **दर्शन** सर्व चार, **लेश्या** सर्व छह, **भव्यत्व-अभव्यत्व** दोनों, **सम्यक्त्व** सर्व छह, **संज्ञी**, **आहारक-अनाहारक** दोनों – इन मार्गणास्थानकनि विषैं मनुष्य भावप्रवर्तें है।

तिर्यंच गति भाव गुणस्थान तो मिथ्यात्वादिक देश संयम पर्यंत पांच। अर मार्गणास्थान विषैं **गति** – तिर्यंच, **जाति** – सर्व पांचौं, **काय** – सर्व छह, **योग** – मन के चार, वचन के चार, औदारिक द्विक (औदारिककाय, औदारिक मिश्र) कार्माण, ऐसे ग्यारह; वेद सर्व तीन, **कषाय** – सर्व पच्चीस, **ज्ञान** – कुज्ञान तीन, सुज्ञान तीन,(मति, श्रुति, अवधि) **संयम** – असंयम, देशसंयम ए दोय। **दर्शन** – चक्षु, अचक्षु, अवधि। **लेश्या** – सर्व छह। **भव्य** – भव्य, अभव्य। **सम्यक्त्व** – सर्व छह। **संज्ञी** – संज्ञी, असंज्ञी। **आहार** – आहारक, अनाहारक। इन मार्गणास्थानकनि विषैं तिर्यंच भाव प्रवर्तें है।

अथ देव गति भाव गुणस्थान तो मिथ्यात्वादिक असंयत **पर्यंत** चार। **अर** मार्गणास्थानकनि विषैं **गति** – देव, **जाति** – पंचेन्द्रिय, **काय** – त्रस, **योग** – मन के चार, वचन के चार, वैक्रियिक वैक्रियिकमिश्र दोय, और कर्माण ऐसे ग्यारह। **वेद** – पुरुष, स्त्री दोय। **कषाय** – नपुंसक वेद बिना चौबीस। **ज्ञान** – कुज्ञान तीन, सुज्ञान तीन। **संयम** – असंयम, **दर्शन** – चक्षु, अचक्षु, अवधि। **लेश्या** – सर्व छह, **भव्य** – भव्य, अभव्य दोय। **सम्यक्त्व** – सर्व छह **संज्ञी** – संज्ञी, **आहारक** – आहारक, अनाहारक। इन मार्गणास्थनकनि विषैं देव गति भाव प्रवर्तें है।

अथ नरक गति भाव – गुणस्थान तो मिथ्यात्वादिक असंयत पर्यंत। अर मार्गणास्थानकनि विषैं **गति** – नरक, **जाति** – पंचेन्द्रिय, **काय** – त्रस, **योग** – मन के चार, वचन के चार, वैक्रियिक दोय, कार्माण ऐसे ग्यारह। **वेद** – नपुंसक। **कषाय** – दोय वेद बिना तेबीस। **ज्ञान** – कुज्ञान तीन, सुज्ञान तीन। **संयम** – असंयम। **दर्शन** – चक्षु, अचक्षु, अवधि। **लेश्या** – कृष्ण, नील, कापोत ए तीन। **भव्य** – भव्य, अभव्य ऐ दोनों। **सम्यक्त्व** – सर्व छह। **संज्ञी** – संज्ञी। **आहारक** – आहारक, अनाहारक। इन मार्गणास्थानकन विषैं नरक गति भाव प्रवर्तें है।

इति श्री भावदीपिका ग्रंथ के औदयिक भावाधिकार विषैं प्रथम गतिभाव अंतराधिकार समाप्त भया।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

मिथ्यात्वभाव अंतराधिकार

(दोहा)

दर्शनमोह विध्वंस करि, निज गहि सम्यकभाव।
जये घातिया चार विधि, नमूं महँत जिनराज ।।

आगे मिथ्यात्वाधिकार कहिये हैं – दर्शन मोह कर्म के उदय तैं जीव के मिथ्यात्व भाव होय है, तातैं याकूं औदयिक मिथ्यात्व भाव कहिये हैं। विपरीताभिनिवेश, सो मिथ्यात्व भाव कहिये। विपरीताभिनिवेश कहिये अन्यथा अभिप्राय, अतत्त्व श्रद्धानरूप भाव। **"तस्य भावस्तत्त्वं"** जाका जो भाव, सो ही ताका तत्त्व, अर जाका जो भाव नाहीं अन्यथा भाव मानना, सो अतत्त्व श्रद्धान कहिये। ताहीं तत्त्व तैं जीवादि पदार्थ अपने-अपने जिस-जिस भावरूप तिष्ठैं हैं, तिस ही भाव कहिये स्वरूप सहित मानना, सो तत्त्वार्थ श्रद्धानरूप सम्यग्दर्शन भाव है। अर जिस भावरूप नाहीं, तिस भावरूप मानना, सो अतत्त्व श्रद्धानरूप मिथ्यात्व भाव होय है। सो मिथ्यात्व भाव दोय प्रकार है – एक अगृहीत दूसरा गृहीत।

अब अगृहीत मिथ्यात्व का स्वरूप कहिए हैं – तहां परद्रव्य, परगुण, परपर्याय विषैं अहंकार-ममकार बुद्धि वा दृष्टि गोचर पुद्गल पर्यायनि विषैं द्रव्यबुद्धि, अदृष्टि गोचर द्रव्य, गुण, पर्यायनि विषैं अभावबुद्धि, सो अगृहीत मिथ्यात्व भाव है। परद्रव्य जो शरीर पुद्गल पिंड, ताविषैं जो अहंबुद्धि, सो यह मैं हूं; सो यह परद्रव्य विषैं अहंबुद्धि मिथ्यात्व भाव है।

बहुरि जैसे पुद्गल के स्पर्शादि भाव, तिन विषैं अहंबुद्धि – जो मैं हूँ – ताता मैं, शीरा (ठण्डा) मैं, कोमल मैं, कर्कश मैं, सच्चिकण मैं, रूक्ष मैं, सूक्ष्म मैं, हलका मैं, भारचा मैं, गोरा मैं, काला मैं, आरक्त मैं, हरित मैं, पीत मैं, सुगन्ध मैं, दुर्गंध मैं, मीठा मैं, खाटा मैं, कटुक मैं, कषायला मैं, चिरपिरा मैं, इत्यादि परगुण विषैं जो अहंबुद्धि, सो मिथ्यात्व भाव है।

बहुरि मैं देव, मैं नारकी, मैं मनुष्य, मैं तिर्यंच अर इनके अनेक विशेष; तिन विषैं अहंबुद्धि, सो पर पर्याय विषैं अहंबुद्धि मिथ्यात्व भाव है। ऐसा तो परद्रव्यादि विषैं अहंभाव मिथ्यात्वरूप जानना।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि यह मेरा धन, यह मेरा मंदिर, ये मेरे आभूषण, ये मेरे वस्त्र, ये मेरे धान्यादिक पदार्थ इत्यादि वस्तुनि विषैं ममकार, सो परद्रव्यनि विषैं ममत्व बुद्धिरूप अगृहीत मिथ्यात्व भाव है। शरीर का बल – वीर्य विषैं ऐसा मानना – यह मेरा बल ऐसा है, अनेक पराक्रम करूं अनेक भटनि को जीतूं, अनेक कार्य करूं, यह मेरा शिष्य है, यह मेरा शब्द, यह मेरी चाल, यह अनेक कायनि विषैं मेरी प्रवृत्ति इत्यादि परगुण विषैं ममत्व बुद्धि रूप अगृहीत मिथ्यात्व भाव है। बहुरि ये मेरे पुत्र, ये मेरी स्त्री, ये मेरी माता, ये मेरा पिता, ये मेरा भ्राता इत्यादि वा ये मेरे सामंत, ये मेरी सेना, ये मेरी **रैय्यत** (प्रजा) ये मेरे हाथी, ये मेरे घोड़े, रथ, पालकी, गोधन इत्यादिकनि विषैं ममकार बुद्धि, सो परपर्यायनि विषैं ममकार बुद्धिरूप अगृहीत मिथ्यात्व भाव है।

बहुरि दृष्टि विषैं जेती घट-पटादि पुद्गल की पर्याय आवैं हैं, तिनकूं जुदा-जुदा द्रव्य माने है। ये घट है, ये पट है, ये स्वर्ण है, ये पाषाण है, ये पर्वत है, ये वृक्ष है, ये मनुष्य है, ये हाथी है, ये घोड़ा है, ये काक है, ये चिड़िया है, ये स्याल है, ये सिंह है, ये सूर्य है, ये चन्द्रमा है, इत्यादि पर्यायनि विषैं द्रव्यबुद्धि धारै है, तिनको सत्य माने है। अर जे दृष्टि गोचर नाहीं ऐसे जे दूर क्षेत्र वर्ती वा होयकरि विनसि गई वा अनागत काल विषैं होयगी वा इन्द्रियनि तें अगोचर सूक्ष्म पर्याय इत्यादि जे अपनी अर पर की तिनकों अभावरूप माने हैं; इनका सत्त्व हुवा वा होयगा वा वर्तमान विषैं है नाहीं, माने है। इत्यादि भाव तो अगृहीत मिथ्यात्वरूप जानना। ये अगृहीत मिथ्यात्व तो जीव के अनादि भाव हैं; अर यथायोग्य सर्व पर्याय, सदा काल, सर्व क्षेत्र में जीव के प्रवर्तें हैं। कोई करि कदाचित् उपदेशित नाहीं; तातैं नैसर्गिक कहिये।

आगे गृहीत मिथ्यात्व का स्वरूप कहिये हैं – मिथ्यात्व स्वरूप को धरै ऐसा जो यह घोर संसार जीव को सर्वदा अहित का कारण, ताविषैं जीव का हित जो मोक्ष, मोक्ष कहिये सर्व कर्मनि का अभाव अर्थात् संसार सूं छूट जाना; ताके कारणभूत छह पदार्थ हैं; देव, गुरु, धर्म, आप्त, आगम, पदार्थ – ऐसे ये मोक्षमार्ग के कारण छह तत्त्व हैं।

अब देव का स्वरूप कहिये हैं – "निर्दोषो देवः" सम्पूर्ण दोषनि करि रहित जो जीव होय, सो देव कहिये। दोष, अज्ञान अर कषाय तैं होय हैं। तहाँ कर्म

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

के आवरण सहित जो ज्ञान, सो अज्ञान कहिये अर राग-द्वेष भाव, सो कषाय कहिये। तातैं जो अज्ञानी अरु कषायी जीव स्व पर के हित कूं नाहीं कर सकै, तब पूज्य पद विषैं कैसे स्थापित होय ? तातैं जगत के जीव पूजैं हैं, सो अपने हित के वास्ते पूजैं हैं। जिस जीव सौं हित नाहीं होय सकै, तिसकूं काहे कूं पूजें ? जातैं जे हित के कारण नाहीं; ते पूज्य भी नाहीं; पूज्य नाहीं ते देव भी नाहीं। तातैं जे समस्त ज्ञानावरण, दर्शनावरण कर्म के नाश होतैं प्रगट भया है अनंतज्ञान, अनंत-दर्शन, अरु समस्त दर्शन-चारित्र मोह के अभाव होते मिट गये हैं मिथ्यात्व अरु कषाय भाव, ताकरि उत्पन्न भया है अपना सहज स्वभाव अनंत सुख, अरु अंतराय कर्म के अभाव होतै प्रगट भया है अनंतवीर्य – ऐसे अनंत चतुष्टय के धारक परम देव हैं। जातैं अपने हित की तौ भई है सिद्धि जिन के अरु पर जीवनि के हित करने विषैं परम शक्ति को धारैं हैं, तातैं पूज्य पद विषैं तिष्ठैं हैं; तातैं देव हैं। बहुरि जे सर्व कर्म का अभाव करि परद्रव्य तैं सर्वथा छूटि लोक के शिखर तिष्ठैं, सर्व प्रकार भई है अपने स्वरूप की सिद्धि जिनकैं, सम्यक्त्वादि अष्टगुण युक्त ऐसे परमदेव सिद्ध भगवान ते देव हैं; पूज्य हैं। जिनके स्वरूप चिंतन मात्र तैं ही जीवनि का हित होय है अरु सुख की प्राप्ति होय है। ऐसा परम देव का स्वरूप है।

अब गुरु का स्वरूप कहिये हैं – गुरु नाम बड़े का है। जे अहित तैं बचाय जीवनि कों हित विषैं प्रवर्त्तावने के कारण, तातैं बड़े कहिये, सो ही गुरु। ते गुरु दोय प्रकार हैं – एक धर्म गुरु, दूजे उपकारी गुरु। जे अठाईस मूल गुण संयुक्त, बाह्याभ्यन्तर परिग्रह के त्यागी, नग्न मुद्रा के धारक, शुद्ध रत्नत्रय रूप है प्रवृति जिनकी, परम दशलाक्षणिक धर्मरूप है मूर्ति जिनकी, बाह्याभ्यन्तर द्वादश प्रकार तप विषैं आरूढ़, परम दिगम्बर, ते धर्म गुरु जानने।

अब उपकारी गुरु दोय प्रकार हैं – एक धर्म उपकारी गुरु अरु दूजा लौकिक उपकारी गुरु। तहां धर्म उपकारी गुरु तीन प्रकार हैं – दीक्षा गुरु, शिक्षा गुरु, विद्या गुरु। अणुव्रत तथा महाव्रत के आचरावणहारे (आचरण कराने वाले) ग्रहण करावनहारे ऐसे जे चतुर्विध संघ में बड़े महामुनि, ते दीक्षा गुरु कहिये। बहुरि जिन प्रणीत मार्ग के उपदेश देनहारे ते शिक्षा गुरु अरु जिन प्रणीत शास्त्र के पढ़ावनहारे ते विद्या गुरु।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अब लौकिक गुरु पंच प्रकार कहिये हैं – **कुल गुरु** – माता, पिता, पितामह, दादी, बड़ा भ्राता, भ्रातृवधू, काका, काकी, बड़ी भगनी, बड़ी भगनी का भर्तार, नाना, नानी, मामा, मामी, पिता की भगनी, फूफा, माता की भगनी, मौसा इत्यादि **कुल गुरु** हैं। जिस बस्ती में रहे तिसका स्वामी राजादिक ते **रक्षा गुरु** हैं। अरु लौकिक विद्या, जा करि आजीविका होय ऐसी शस्त्र विद्या, शास्त्र विद्या वा अनेक प्रकार की सब विद्या का सिखाहनवारा ते **विद्या गुरु**। आजाविका का देनहारा ते **आजीविका गुरु**। लौकिक भली शिक्षा का देनहारा ते **शिक्षा गुरु**। ये कहे जे गुरु तिनकूँ यथा योग्य पूजना, विनय करना, नमस्कारादि करना। इन बिना और कूं गुरु मानि विनय करना, सो मिथ्यात्वभाव है। अरु लौकिक प्रयोजन जानि किसी का यथायोग्य विनय करना, सो मिथ्यात्व नाहीं।

तहां धर्म गुरु की अष्ट द्रव्य करि पूजा करनी। हाथ जोड़ि अष्टांग नमस्कार करना वा पंचांग नमस्कार करना। महा भक्ति पूर्वक चार प्रकार दान देना। सर्वोपरि सत्कार करना, विनय करना।

बहुरि लौकिक गुरु की यथा योग्य भेंट करनी। विनय पूर्वक हाथ जोड़ वा मस्तक पर हाथ धरि पंचांग नमस्कार करना। पीछे हाथ जोड़ि सत्कार करना; यथायोग्य विनय करना।

अथ धर्म तत्त्व कहिए हैं – धर्म दोय प्रकार है – एक निश्चय धर्म दूजा व्यवहारधर्म। तहां निश्चय धर्म तो वस्तु का स्वभाव है। जहां राग-द्वेष रहित अपना ज्ञाता दृष्टा स्वभाव, ताविषैं थिर होना निश्चय धर्म है। या ही का नाम चारित्र है। बहुरि व्यवहार धर्म दोय प्रकार है। तिसही निश्चय धर्म का व्यवहार करिये, तब धर्म के दोय भेद होय हैं – देश संयम तथा सकल संयम। जहां मिथ्यात्व छोड़ि कषाय, विषय अर पंच पापनिरूप अंतरंग परिणामनि का एकदेश त्याग, सो देश संयम वा इस धर्म को कारण बाह्य अणुव्रतादिक पांच, गुणव्रत तीन, शिक्षाव्रत चार, इन द्वादश व्रत को ग्रहण, सो भी देश संयम कहिये। जातैं यहां कारण विषैं कार्य को उपचार करि इनकौं संयम कहिये। बहुरि जहां सर्व प्रकार बुद्धि पूर्वक मिथ्यात्व, कषाय, विषय अर पच पापनि का त्याग, सो सकल संयम है। वा सकल संयम के कारण बाह्य अठ्ठाईस मूल गुण वा चौरासी लाख उत्तर गुण, तिनका ग्रहण, सो भी व्यवहार सकल संयम है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगै आप्त तत्त्व कहिये हैं – जीव का परम हित जो मोक्ष, ताका उपदेष्टा, सो आप्त कहिये । सो आप्त दोय प्रकार है – एक मूल आप्त दूजा उत्तर आप्त । प्रत्यक्षभूत भये हैं सकल पदार्थ जिनकौं अर नाश कों प्राप्त भये हैं चार घातिया कर्म जाकै, ताकरि अनंत चतुष्टय कों प्राप्त भये हैं, ऐसे श्री अरहन्त देवाधिदेव द्वादश सभा मध्ये तिष्ठ करि, मोक्षमार्ग का उपदेश करैं हैं, ते मूल आप्त हैं । बहुरि तिनही के अनुसार कथन करनहारे ऐसे सम्यग्दर्शनादिक के धारक गणधरादिक, ते सर्व उत्तर आप्त कहिये । बहुरि सम्यग्दर्शनादिक के धारक, जिनप्रणीत शास्त्र के ज्ञाता, कषाय रहित वक्ता ऐसे गृहस्थ ते सर्व उत्तरोत्तर आप्त जानना ।

अरु जे कुलिंग रूप मिथ्यादर्शन के धारक हैं अर यथार्थ जिनप्रणीत शास्त्र के अर्थ को कहें हैं, तो पण भी वे आप्त नाहीं । तातैं उनके मुख थकी कह्या अर्थ प्रमाण-नयादिक करि वा आम्नाय मिलाय सिद्ध करि ग्रहण करना । अर इतनी शक्ति न हो तो उनके मुख थकी शास्त्र उपदेश न सुनना, उनके कहे अर्थ की बिना समझे योंही प्रतीति न कर लेनी ।

अब आगम तत्त्व कहिये हैं – आप्त का जो वचन, सो आगम कहिये । सो आगम कैसा है ? प्रमाण-नयादिक करि अबाधित है; कोई प्रकार भी नाहीं संभवै है बाधा जिसको ऐसा जिनागम है, ताही को आगम मानना । जो प्रमाण-नयादिक करि बाधित होय, सो आगम नाहीं । जातैं आगम केवली का वचन है, तातैं बाधित होय नाहीं । आगम विषैं तीन प्रकार पदार्थ कहे हैं – ज्ञेय, हेय, तथा उपादेय । इन तीन प्रकार पदार्थनि विषैं जो प्रत्यक्ष प्रमाण गोचर होय, ता अर्थ को प्रत्यक्ष प्रमाण करि सिद्ध करना । अर जो अनुमान प्रमाण करि सिद्ध होय, ताकूं अनुमान प्रमाण करि सिद्ध करना । अर जो आगम प्रमाण करि ही सिद्ध होय, ताकूं सुनि, सुनिश्चित स्वानुभव अबाधक प्रमाण करि सिद्ध करना । तिनमें जो अबाधित होय, सो जिनागम जानना और जो बाधित होय सो जिनागम न मानना । ऐसा मानना कि जो ये प्राकृतमय हैं, संस्कृतमय हैं, या बड़े आचार्य के नाम करि वेष्ठित हैं; ऐसी प्रतीति करि अर्थ का श्रद्धान न करना; जातैं अबार कलिकाल के दोष करि पाखंडी, कषायी पंडितनि करि शास्त्रनि में अन्यथा अर्थ का मेल भया है; तातैं जैन न्याय के शास्त्रनि की ऐसी आज्ञा है कि आगम का सेवन, युक्ति का अवलम्बन, परम्परा गुरु का उपदेश तथा स्वानुभव – इन चार विशेषनि का आश्रय करि अर्थ की

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सिद्धि करि ग्रहण करना। अन्यथा अर्थ का ग्रहण किये जीव का अकल्याण होय है।

अथ पदार्थ तत्त्व कहिए हैं – पद का जो अर्थ कहिये प्रयोजन, ताकूं पदार्थ कहिये। सो पदार्थ नव प्रकार है – जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा, मोक्ष, पुण्य, पाप। इनका स्वरूप जिनागम विषैं जैसा कह्या है, तैसा ही स्वरूप सहित ग्रहण करना; जातैं ये मोक्ष के कारण हैं। जिस स्वरूप करि तिष्ठैं हैं, तिस ही स्वरूप करि ग्रहण किये, सो मोक्ष के कारण होय हैं। अन्यथा स्वरूप करि ग्रहण किये, ये ही संसार के कारण होय हैं।

अब जीव तत्त्व कहिए हैं। तहां जीव पदार्थ दोय प्रकार है – एक तो मोक्ष के कारण जीव, दूसरे संसारी जीव। तहां मोक्ष के कारण जीव पदार्थ नव प्रकार हैं – अर्हन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, मुनि, अर्जिका, श्रावक, श्राविका। इनतें भिन्न सर्व संसारी जीव पदार्थ जानना।

अब अजीव तत्त्व पांच प्रकार कहिये हैं – पुद्गल द्रव्य, धर्म द्रव्य, अधर्म द्रव्य, काल द्रव्य, आकाश द्रव्य।

अब आस्रव तत्त्व कहिए हैं – द्रव्य कर्म, नो कर्मरूप परिणमन कों कारण ऐसी पुद्गल कर्म वर्गणा, तिनके योगद्वार करि आगमन, सो मूल आस्रव कहिए। अरु तिनके आगमन का कारण मन-वचन-काय योग हैं, तातैं योगनि कों भी आस्रव कहिये। बहुरि कर्मनि विषैं स्थिति, अनुभाग बंध का कारण ऐसी मिथ्यात्व अर कषाय, अव्रत विशेष कूं धरैं राग-द्वेष भाव, तिनकूं भी आस्रव कहिये। तातैं मूल आस्रव के भेद तेरह। यथा ज्ञानावरणादिक आठ कर्मास्रव, औदारिक, वैक्रियिक, आहारक, तैजस, कार्माण ये पांच नोकर्मास्रव। बहुरि इनके कारण सत्तावन भाव आस्रव हैं -- योग पन्द्रह, कषाय पच्चीस, अव्रत बारह, मिथ्यात्व पांच ऐसे सत्तावन।

बहुरि बंध तत्त्व (पदार्थ) चार प्रकार है – प्रकृति बंध, प्रदेश बंध, स्थिति बंध, अनुभाग बंध।

बहुरि संवर पदार्थ दोय प्रकार है – एक मूल संवर, सो ही भाव संवर कहिये। दूजा उत्तर संवर, सो द्रव्य संवरकहिये। तहाँ मूल संवर चार प्रकार है – मिथ्यात्व संवर, अव्रत संवर कषाय संवर, अरु योग संवर। ये चार तो मूल भेद हैं। इन्हीं के उत्तर भेद सत्तावन हैं। मिथ्यात्व संवर के भेद पांच, अव्रत

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

संवर के भेद बारह, कषाय संवर के भेद पच्चीस, योग संवर के भेद पन्द्रह – ऐसे सत्तावन ए तो भाव संवर कहिये। इन भावनि का संवर कहिये रोकना, सो भाव संवर कहिये। बहुरि इनके संवर होतें ज्ञानावरणादिक पुद्गल कर्मनि का आस्रव का अभाव होना – रुक जाना, सो द्रव्य संवर है। जेता काल भाव संवर, तेता काल द्रव्य संवर जानना।

आगे निर्जरा पदार्थ दोय प्रकार है – एक मूल निर्जरा, ताही कूं भाव निर्जरा कहिये। दूजी उत्तर निर्जरा, सो द्रव्य निर्जरा। तहां मिथ्यात्व-कषाय भावनि के अनुभाग शक्ति समय-समय क्षीण होय, सो मूल निर्जरा है। अर ज्ञानावरणादिक का समय-समय स्थिति-अनुभाग का क्षीण होना – झड़ना, सो उत्तर निर्जरा है।

बहुरि मोक्ष तत्त्व भी दोय प्रकार है – एक भाव मोक्ष, दूजा द्रव्य मोक्ष। तहां ज्ञानावरणादिक चार प्रकार के घातिया कर्मनि को अभाव करि अनंत चतुष्टय को प्राप्त होना, सो भाव मोक्ष है। बहुरि सर्व कर्मनि का अभाव करि सर्व परद्रव्यनि सों जुदा होना, सो द्रव्य मोक्ष है।

अब पुण्य पदार्थ दोय प्रकार है। तहां प्रशस्त कर्मनि का उदय होतें सांसारिक सुख-साता का प्रगट होना, इष्ट सामग्री का समागम होना, सो उदयरूप पुण्य पदार्थ है वा मंद कषायरूप भाव होना, सो बंधरूप पुण्य पदार्थ है – ऐसे पुण्य पदार्थ दोय प्रकार है।

अब पाप पदार्थ दोय प्रकार है। तहां अप्रशस्त कर्मनि का उदय होतें संसार विषैं दुःख सामग्री का समागम होय, ताकरि जीव दुःखी होय; सो उदयरूप पाप पदार्थ है। बहुरि संक्लेश भावनि करि अनेक पाप कर्म करना, सो बंधरूप पापतत्त्व है। ऐसा पाप पदार्थ जानना।

इस प्रकार कहे नव पदार्थ, तिनका यथार्थ स्वरूप ग्रहण करना।

ऐसे मोक्ष के कारण ये छह तत्त्व हैं – देव, गुरु, धर्म, आप्त, आगम, पदार्थ। इनका यथार्थ स्वरूप सहित जैसा का तैसा श्रद्धान करना, सो सम्यग्दर्शन। इनका यथार्थ स्वरूप जानै, सो सम्यग्ज्ञान। इनके विषैं यथावत् प्रवृत्ति करनी, सो सम्यक्चारित्र। सो ही त्रिधा स्वरूप कों धरचा मोक्षमार्ग जानना। इन छह तत्त्वनि विषैं एक की भी हानि होय, तो मोक्षमार्ग की हानि होय जाय। जो देव तत्त्व न होय, तो धर्म कौन के आश्रय प्रवर्तै? गुरु तत्त्व न होय, तो धर्म को ग्रहण कौन करावै? धर्म ग्रहण न कीजै, तो मोक्ष की सिद्धि कौन करि कीजै?

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आप्त का ग्रहण न होय, तो सत्य धर्म का उपदेश कौन दे ? आगम का ग्रहण न होय, तो मोक्षमार्ग विषैं आलम्बन कौन को करै ? पदार्थ का ज्ञान न कीजिये, तो आप का अर पर का, अपने भावनि का अर परभावनि का, हेय भावनि का अर उपादेय भावनि का, अहित का अर अपने परम हित का कैसे भान होय ? तातैं इन छह तत्त्वनि का मोक्षमार्ग विषैं अवश्य ग्रहण है।

अर जहां दर्शन मोह का उदय करि इनही छह प्रकार तत्त्वन कों अन्यथा ग्रहण करना, सो गृहीत मिथ्यात्व भाव कहिये। सो गृहीत मिथ्यात्व भाव इन विषैं पंच प्रकार प्रवर्तै है। एकान्त, विनय, संशय, विपरीत, अज्ञान। तातैं गृहीत मिथ्यात्व भाव का मूल भेद पंच प्रकार हैं। उत्तर भेद असंख्यात लोक प्रमाण हैं।

तहां प्रथम एकान्त मिथ्यात्व भाव कहिये हैं। तहां अनेक विशेषन कों धरैं इन छह तत्वनि विषैं कोई एक विशेष कों आश्रय ले कोई तत्त्व कों धारना, सेवना, सर्व विशेषनि सहित सर्व कों न सेवना, सो एकांत मिथ्यात्व भाव है। जैसें सर्व सिद्धि की कारणता देव ही को जानना वा अन्य पंच तत्त्वनि कों नाहीं जानना वा गुरु ही कों जानना वा धर्म ही कों जानना वा आप्त ही कों जानना वा आगम ही कों जानना वा पदार्थनि के ज्ञान ही करने कों जानना वा इन विषैं कोई दोय ही कों वा तीन ही कों वा चार ही कों वा पांच ही कों जानना, सो एकांत मिथ्यात्व है। तातैं छहों का ग्रहण भये ही सर्व सिद्धि है।

बहुरि अनेक विशेषण विषैं देव कों कोई एक विशेषण के आश्रय सेवना – ये महंत हैं, ये सर्व के ईश्वर हैं, ये केवल ज्ञानी हैं, ये सर्व करि पूज्य हैं, समवसरण लक्ष्मी के स्वामी हैं, स्वर्ग-मोक्ष के दाता हैं, इनके पूजैं लक्ष्मी वा पुत्र-कलत्रादि अनेक इष्ट वस्तु मिलैं हैं, उत्पन्न होय हैं, अनेक रोगादिक कष्ट, अनेक राजादिक करि उपजते विघ्न अर अनेक प्रकार इति-भीति का नाश होय है। लोक-परलोक विषैं ए ही सहाय होंय, इत्यादि विशेषनि में कोई एक विशेष का आश्रय ले करि सेवैं हैं – इत्यादि भाव, सो देवाश्रय एकांत मिथ्यात्व है।

ताविषैं श्री रिषभदेवजी नैं ही वा चंद्रप्रभजी नैं ही वा शांतिनाथजी नैं ही वा नेमिनाथजी नैं ही वा पार्श्वनाथजी नैं ही वा महावीरजी नैं ही अधिक मानना। भाव देव को जानें ही नाहीं। बहुरि केइ एक ढूंढयादिक मतवाले भाव देव कों ही मानें हैं; स्थापनादिक देव कों न मानें हैं। श्वेताम्बरादिक गर्भ, जन्म, राज्य, तप अवस्था

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

विषैं ही तिष्ठता ऐसे के ही देव माने हैं, द्रव्य देव ही की स्थापना करैं हैं। बहुरि केई स्थापना देव कहिये प्रतिमा कूं ही देव माने हैं। अर केई नाम देव ही कों माने हैं। जातैं नाम ही जपना और कछु ज्ञान नाहीं।

बहुरि गुरु ही का सेवन करना। गुरु का दिया अणुव्रत-महाव्रत, तिनकूं गुरु की आज्ञा प्रमाण पालना। गुरु ही कूं अपनी सर्व सिद्धि का कारण मानना। सांसारिक प्रयोजन का कारण भी गुरु ही कूं मानना। अन्य पंच तत्त्वनि कों गौण करना। बहुरि इस भव, परभव सम्बन्धी जो अनेक प्रकार सांसारिक प्रयोजन, तिन विषैं कोई एक प्रयोजन के आश्रय गुरु कूं सेवना – इत्यादि गुरु आश्रय मिथ्यात्व भाव जानना।

बहुरि अनेक प्रकार जे पूजा, दान, शील, तप, संयम, अणुव्रत, महाव्रत वा व्यवहार सम्यक्त्व इत्यादि स्वरूप जो व्यवहार धर्म वा जीवादिक सप्त तत्त्वन का स्वरूप जानना अथवा मात्र आत्मा का स्वरूप जानना निश्चय धर्म – ऐसा निश्चय-व्यवहार रूप सामान्य धर्म, ताही सों अपनी इह भवपर भव सम्बन्धी वा मोक्ष-मार्ग सम्बन्धी सर्व सिद्धि मानै हैं; अन्य पंच तत्त्वनि कों गौण मानै हैं।

व्यवहाराभासी निश्चय कौ आलम्बन छोड़ि व्यवहार धर्म ही तैं सिद्धि मानै है। वा व्यवहार धर्म विषैं भी पूजा ही तैं, तिन विषैं भी पूजा करने ही तैं वा पूजा देखने ही तैं, वा दान ही तैं, ताविषैं आहार दान ही तैं, वा औषधि दान ही तैं, वा शास्त्र दान ही तैं, वा अभय दानादि ही तैं, वा शील ही तैं, वा व्रत ही तैं, वा तिन विषैं दया ही तैं, वा सत्य ही तैं, वा चोरी के त्याग ही तैं, वा ब्रह्मचर्य ही तैं, वा परिग्रह के प्रमाण करने ही तैं, वा परिग्रह का त्याग करने ही तैं, वा तप करने ही तैं, वा तप विषैं भी उपवास करने ही तैं, वा अल्पाहार लेने ही तैं, नित्य-नियमरूप त्यजन-ग्रहणादिरूप व्रतपरिसंख्यान ही तैं, वा रस छोड़ने ही तैं, वा सर्व संग, बस्ती आदि कूं छोड़ि निर्जन बनादि विषैं एकान्त स्थानक विषैं शय्यासन करने ही तैं, वा शीत, उष्ण, क्षुधा तृषादि के सहन ही तैं, वा अनेक दृढ़ आसनादिक के करने ही तैं इत्यादि कायक्लेशादि करने ही तैं वा संयम पालने ही तैं, ताविषैं भी इन्द्रियनि का विषय छोड़ने ही तैं, मन का जो विकल्प कषाय, तिनके मंद ही तैं – वा क्रोध मन्द पाड़ने ही तैं, वा मान मन्द पाड़ने ही तैं, वा माया मंद पाड़ने ही तैं, वा लोभ मन्द पाड़ने ही तैं, इत्यादि कषायनि के विशेष घटावने ही तैं, वा

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

त्रस-थावर की दया पालने ही तैं, वा तिन विषैं त्रस की दया पालने ही तैं, वा थावर की दया पालने ही तैं, वा अणुव्रत के धारणे ही तैं, वा महाव्रत के धारणे ही तैं वा शास्त्र के पढ़ने ही तैं, वा स्वाध्याय करने ही तैं, तिन विषैं भी शास्त्र बांचने ही तैं, वा सुनने ही तैं, वा उपदेश देने ही तैं, स्तवनादि करने ही तैं, दर्शन करने ही तैं, वा वादित्रादि बजावने ही तैं, वा नृत्य-गानादि करने ही तैं, चैत्यालयादि बनावने ही तैं, प्रतिष्ठादि करने ही तैं, तीर्थ-यात्रादि करने ही तैं, वा इन अनेक अंगनि में धन खरचने ही तैं, वा व्यवहार-सम्यक्त्व धारने ही तैं, तिन विषैं भी कुदेवादिक न पूजने वा न मानने ही तैं वा सप्त व्यसनादिकनि के त्याग करने ही तैं वा अभक्ष्य के छोड़ने ही तैं, हरित वस्तु के न खाने ही तैं, रात्रि विषैं अन्नपानादि छोड़ने ही तैं, क्रिया सहित शुद्ध भोजन खाने ही तैं, जल-स्नानादि करि शरीर-वस्त्रादि शुद्ध राखने ही तैं, इत्यादि व्यवहार धर्म के अनेक अंगनि में सूं कोई एक, दोय आदि धर्म अंगनि का ग्रहण करि वा अंगनि के भी कोई एक, दोय विशेषनि का ग्रहण करि संतुष्ट होय है, आपकूं धर्मात्मा मानै है, सो यह व्यवहाराभासी एकान्त मिथ्यात्व भाव सहित जानना

बहुरि निश्चयाभासी व्यवहार धर्म को हेय मानि निश्चय धर्म का सर्वथा पक्ष करि निश्चय धर्म ही तैं सर्वथा सिद्धि मानै हैं। ताविषैं भी जीवादि सप्त तत्त्वनि का नाम मात्र जानने ही तैं, वा सप्त तत्त्वनि कों लक्षण सहित जानने ही तैं, जो मैं तो चैतन्य स्वरूप आत्मा हूँ अर ये जड़ादिक स्वरूप सर्व मो तैं भिन्न हैं, वा आत्मस्वरूप जानने ही तैं मैं चैतन्य स्वरूप हूँ, वा जीवादि तत्त्वनि की वा आपा-पर की वा आत्म-चर्चा करने ही तैं, वा पैला कूं समझावने ही तैं, वा सुनने ही तैं, वा मन में विचारने ही तैं, वा मन करि ध्यावने ही तैं, वा अपने अनेक प्रकार के आसनादि मांडने ही तैं, वा पवन साधने ही तैं, वा प्राणायामादि करने ही तैं, इत्यादिकनि तैं सिद्धि मानै हैं, आपको ज्ञानी माने हैं, ते निश्चयाभासी एकान्त मिथ्यात्व भाव सहित जानने।

तातैं सर्व ही व्यवहार धर्म के अंग हैं, तिन कूं करना अर निश्चय धर्म कूं जानना व श्रद्धान करना, वा जिस व्यवहार धर्म की प्रवृत्ति का कारण द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव आपके मिलैं, तिसरूप प्रवर्त्तना अर जिस धर्म का द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव न मिलैं, तिसरूप न प्रवर्त्तना। व्यवहार धर्म को कारण मानना, कार्यरूप निश्चय धर्म, ताकौं पुष्ट करना। दोनों की सापेक्षता न छोड़नी; ऐसा सम्यक् भाव

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

का स्वरूप है। ऐसा सम्यक्त्व भाव छोड़ि मिथ्यात्व के उदय तं धर्म के कोई एक अंग कूं सर्वथा धर्म का स्वरूप जानि, ताकौं सर्वथा ग्रहण करि सिद्धि मानना, सो धर्माश्रय एकान्त मिथ्यात्व भाव है।

बहुरि आप्त ही कों मुख्य मानना, आप्त करि ही सर्व सिद्धि मानना, अन्य पंच तत्त्वनि कों गौण मानना, आप्त कहिये धर्म का वक्ता, सो ही सर्व सिद्धि का कर्त्ता है, सो ही ईश्वर है। जातैं हित-अहित, हेय-उपादेय वक्ता ही के प्रसाद सों जानिये, सो ही जीव का कल्याण है। ताविषैं भी मूल आप्त ही कों आप्त मानना, गणधर ही कों आप्त मानना, मुनि ही कूं आप्त मानना, गृहस्थीनि में बहुत पढ़ा ही कों आप्त मानना, तप-चारित्र के धारक ही कों आप्त मानना, संस्कृत प्राकृत शब्द कर ललित वचन थकी शास्त्र का कथन करनहारे कूं ही आप्त मानना, अपने कुल का नेता यति होय वा अपने कुल के मानते आये होंय ऐसी परिपाटी के सत्य वक्ता वा आप धनवान होय, विभववान होय, अधिक धीमान् होय, पुण्यवान होय, ऐसा वक्ता इत्यादि विषैं कोई एक कूं ही वा द्वय कूं ही मुख्य मानना और कूं गौण मानना। जिनकों मुख्य वक्ता मानना, उन्हीं के पास कथा सुनना वा सुनने की अभिलाषा राखनी; और कूं न सुनना। सुनना तौ गौणपने तैं सुनना। तिनके निकट वा परोक्ष अपने अभिप्रेत वक्ता की प्रशंसा करनी, औरों की प्रशंसा न करनी। जो करनी तौ गौण-पणे करनी – इत्यादि आप्ताश्रय एकांत मिथ्यात्व भाव है। तातैं अन्य पंच तत्त्वनि सहित वक्ता कौं भी मानना वा सर्व ही जिनप्रणीत सत्य अर्थ के वक्ता कषाय भावनि करि रहित याके कल्याण के कारण हैं, तिस ही अपेक्षा सर्व वक्ता समान मानना। मुख्य गौण भेद वक्ता विषैं न मानना। उपदेश सुनने में तिन वक्तानि में महन्त होय, तिन पासि सुनना वा गौण पासि भी सुनना, ए सम्यक् भाव है।

बहुरि आगम ही को मुख्य मानना, अन्य पंच तत्त्वनि कों गौंण मानना। तिन विषैं भी प्रथमानुयोग ही कों वा करणानुयोग ही कों वा चरणानुयोग ही कों वा द्रव्यानुयोग ही कों मुख्य मानना और कों गौंण मानना। वा तिन विषैं भी एक-एक अनुयोग के अनेक शास्त्र हैं, तिन विषैं भी कोई कों मुख्य मानना, और कों गौण मानना इत्यादि आगमाश्रय एकान्त मिथ्यात्व भाव है। सर्व ही शास्त्र सामान्य करि आगम के अंग हैं अर समस्त आगम याके कल्याण का कारण होय है। आगम के एक, दोय आदि देश ही कल्याण के कारण नाहीं, तातैं सर्व ही आगम पढ़ना, सुनना, धारणा ए सम्यक् भाव है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जीवादि नव पदार्थ के ज्ञान ही कों मुख्य जानना। अन्य पंच तत्त्वनि कों गौण मानना। तिनं विषैं भी जीव ही कों मानना वा अजीव ही कों मानना वा आस्रव ही कों मानना, वा बंध ही कों मानना, वा संवर ही कों मानना। वा निर्जरा ही कों मानना, वा मोक्ष ही कों मानना, वा पुण्य ही कों मानना, वा पाप ही कों मानना, वा इन पदार्थनि कों अस्तिरूप ही मानना, वा नास्तिरूप ही मानना, वा नित्य ही मानना, वा अनित्य ही मानना, वा एकरूप ही मानना, वा अनेकरूप ही मानना, वा भेदरूप ही मानना, वा अभेदरूप ही मानना, वा कर्त्ता ही मानना, वा अकर्त्ता ही मानना, वा भोक्ता ही मानना, वा अभोक्ता ही मानना, वा ज्ञाता ही मानना, वा अज्ञाता ही मानना, वा गुणसहित ही मानना, वा निर्गुण ही मानना, इत्यादि भावरूप ही सर्वथा मानना। नव पदार्थनि विषैं जीव आदि एक ही कों वा दोय ही कों वा तीन आदि अष्ट पर्यन्त मानना, नव न मानना। वा अनेक विशेषणनि सहित वा अनेक धर्मकों धारैं ए नव पदार्थ तिन विषैं कोई धर्म सहित सर्वथा मानना, सो पदार्थाश्रय एकांत मिथ्यात्व भाव जानना। इत्यादि एकांत मिथ्यात्वभाव जानना।

अब विनय मिथ्यात्व भाव दिखाइये हैं – जहाँ योग्य-अयोग्य का विचार रहित देव, गुरु, धर्मादिक का विनय करि ही सिद्धि मानना और धर्मनि के सर्व ही अंगनि कों गौण मानना। मन करि, वचन करि, काय करि वा दान करि, पूजा करि विनय ही मैं संतुष्ट होना, आपकों कृतार्थ मानना, सो विनय मिथ्यात्व भाव जानना। यद्यपि विनय भी धर्म का बड़ा अंग है, तथापि और धर्म कों गौण करि याही तैं सिद्धि मानना, सो विनय मिथ्यात्व भाव है।

आगे संशय मिथ्यात्व भाव लिखिये हैं– देव विषें संशय धरै है। जिनमत विषें देव का स्वरूप सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, सर्व आवरण रहित, सर्व मोह भाव तथा सर्व कषाय भाव, तिन करि रहित ज्ञाता-दृष्टा, अपने स्वभाव सुख का भोक्ता, आनंदकंद, नित्य कहिये – सर्वदा काल अंत रहित, इत्यादि विशेषणनि सहित कह्या है। अर अन्य मत विषें देव का स्वरूप नाना प्रकार करि और भांति कहैं हैं। तिन में केई एक ऐसा स्वरूप कहैं हैं कि जो एक ब्रह्म है और कोई दूसरा पदार्थ नाहीं। ये नाना प्रकार पदार्थ भासैं हैं, सो ही भ्रान्ति करि भासैं हैं। कोई कहैं हैं कि इन नाना प्रकार पदार्थनि रूप आप ब्रह्म ही परिणयो है। कोई कहैं हैं कि सृष्टि न्यारी है, ईश्वर न्यारा है; यह सृष्टि ईश्वर करि रची है। कोई कहैं हैं कि ईश्वर,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

परं ब्रह्म, परमात्मा सर्व का ज्ञाता-दृष्टा, अनादि तत्त्व है और सृष्टि भी अनादि है। ए सर्व ही संसारी जीव जैसा-जैसा कृत्य करैं हैं; ताकै अनुसार स्वर्ग-नरकादि विषैं सुख-दुःख भोगवे हैं, अर कोई कहै है कि जीवनि के कर्तव्य के अनुसार ईश्वर स्वर्ग-नरकादि विषैं सुख-दुःख देय है। कोई कहै है कि जीव का कछु भी कर्तृत्व नाहीं; जो कुछ भली-बुरी प्रवृत्ति करावै है, सो ईश्वर ही करावै है। स्वर्ग-नरकादि विषैं ईश्वर ही धरै है। ईश्वर की इच्छा विना वृक्ष का पात भी नाहीं हिल सकै है; तातैं सर्व सृष्टि का कर्त्ता तथा सर्व शुभा-शुभ प्रवृत्ति का कर्त्ता ईश्वर ही है। केई अकर्त्ता माने हैं; अर केई ईश्वर कूं काम-क्रोधादि प्रवृत्ति सहित मानै हैं। सांसारिक सुख का भोक्ता मानै हैं। अर केई कहैं हैं कि संसारी जीवनि कूं ईश्वर ही शुभाशुभरूप प्रवर्ताय, ताही के अनुसार सुख-दुःख देय है। तातैं संसारी जीव ही संसारी सुख-दुःख के भोक्ता हैं, आप ईश्वर अभोक्ता है। इत्यादि नाना प्रकार ईश्वर मतीनि करि रचि नाना प्रकार प्रवृत्ति देखिये हैं, नाना प्रकार शास्त्र देखिये हैं।

बहुरि श्वेताम्बरादि मत विषैं केवली के कवलाहार मानै हैं वा एकादश परीषह मानै हैं। बहुरि स्त्री कों देवपद विषैं स्थापैं हैं। देव की स्थापना नाना प्रकार कुंडल, कटक, कटि-मेखलादि आभरण सहित स्थापैं हैं। इत्यादि जिनमत सौं विपरीत प्रवृत्ति देखिये हैं, तिनके अनेक शास्त्र रचना है।

कई अनीश्वरवादी हैं। केई ईश्वर कों मानते ही नहीं। तिनकी नाना प्रकार प्रवृत्ति अर नाना प्रकार शास्त्र देखिये हैं। बहुरि नास्तिकवादी सर्व प्रकार **"नास्ती"** स्थापैं है। न कोई ईश्वर, न कोई जीव, न बंध, न मोक्ष, न पुण्य, न पाप, न स्वर्ग, न नर्क, न परलोक, किछू भी नाहीं। तिनकी नाना प्रकार प्रवृत्ति देखिये हैं। नाना प्रकार शास्त्र रचना देखिए हैं। इत्यादि नाना प्रकार मत विषैं नाना प्रकार देव का स्वरूप कह्या है।

अर कोई मत वादी देव कूं स्थापैं ही नाहीं हैं, तातैं जिनमत विषैं कहा जो देव का स्वरूप, तैसा ही है कि अन्य मतकरि कह्या तैसा है? किछु निश्चय पड़ता नाहीं, ऐसैं निर्णय की बुद्धि रहित जो भाव, सो देवाश्रय संशय मिथ्यात्व भाव है।

बहुरि जिनमत विषैं गुरु का स्वरूप बाह्याभ्यन्तर परिग्रह रहित, परम दिगम्बर नग्न मुद्रा सहित वा सर्व काम-क्रोधादि भाव रहित कह्या है। अरु अन्य मत विषैं वा श्वेताम्बरादि मत विषैं वा जिनमत विषैं ही नाना प्रकार भेष कों धरैं बहुत हैं। परिग्रह

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

का संग्रह जिनके अर काम क्रोधादि सहित गुरु देखिये, सो कैसे हैं ? अरु जिनमत विषैं कह्या जो गुरु का स्वरूप, सो अबार दृष्टिगोचर आवता नाहीं; तातैं किछु निश्चय होता नाहीं, ऐसी गुरु के निर्णय की बुद्धि रहित भाव, सो गुर्वाश्रय (गुरु+आश्रय) संशयरूप मिथ्यात्व भाव जानना।

बहुरि जिनमत विषैं तो धर्म का स्वरूप बाह्याभ्यन्तर हिंसारहित कह्या है। बाह्य तो त्रस-थावर सब जीवनि की दया अरु अभ्यन्तर सर्व धर्म प्रवृत्ति भाव विषैं रागादिक कषायनि को अभाव, ऐसा स्वरूप कह्या है। अर अन्य मत विषैं वा श्वेताम्बर मत विषैं वा अबार दिगम्बर मत विषैं भी जो धर्म प्रवृत्ति देखिये हैं, सो सर्व बाह्याभ्यंतर हिंसासहित देखिये हैं। सो जैन शास्त्रनि में लिखी है जैसे है कि यह अबार प्रवर्त्तैं, हैं तैसे हैं ? सो कछु भासता नाहीं; ऐसा भ्रमरूप जो भाव सो धर्माश्रय संशय मिथ्यात्व भाव जानना।

बहुरि जिनमत विषैं तो मूल वक्ता का स्वरूप सर्वज्ञ, वीतराग कह्या है; अरु उत्तर वक्ता का स्वरूप भी ज्ञान, वैराग्य सहित कह्या। अरु अबार वर्तमान अन्य मत विषैं बड़े-बड़े पंडित संस्कृत, प्राकृत विद्या के धारक वा न्याय विद्या के धारक, छंद-अलंकारादि अनेक विद्या के पारगामी, बृहस्पति के सदृश कथन करनहारे, अपने ललित शब्दनि की गम्भीरता तैं सर्व सभा को मोहे हैं। अनेक सहस्र श्लोकनि का कण्ठाग्र है ज्ञान जिनकों, तिनके निकट अनेक वादी विलखे होय मद छांड़ि तिष्ठैं, बड़े विभववान् तिनकौं बड़े-बड़े राजादिक मानैं हैं। बड़ी संपदा के धनी, अनेक वस्त्राभूषण मण्डित ऐसे तो वक्ता देखिये हैं; परन्तु ज्ञान-वैराग्य सहित नाहीं, अनेक काम-क्रोधादि सहित देखिये हैं। बहुरि श्वेतांबर मत विषैं वा दिगम्बरादि मत विषैं भी ऐसे ही वक्ता देखिये हैं। ज्ञानी वैरागी तो कोउ दृष्टि पड़ता नाहीं, सो जिनमत विषैं कहे ते ही आप्त हैं; अरु ये नाहीं वा ये ही आप्त हैं; अरु जिन मत विषैं कहे सो नाहीं, ऐसा निश्चय हमारें तो भया नाहीं, ऐसे संदेहरूप आप्त विषैं भाव, सो आप्ताश्रय संशय मिथ्यात्व भाव जानना।

बहुरि जिनमत विषैं तो आगम का स्वरूप ऐसा कह्या है कि जो सर्व प्रमाण-नयादिक करि अबाधित होय अर सम्यग्ज्ञान वीतराग भाव का पोषक होय है। मिथ्यात्व, कषाय, विषय, अव्रत भाव हेय हैं जा विषैं, ऐसा है जिनागम। अरु अन्य मत तथा श्वेतांबरादिक के जे शास्त्र हैं, ते प्रमाण-नयादिक करि अबाधित

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

भी नाहीं, अरु सम्यग्ज्ञान तथा वीतराग भाव के पोषक भी नाहीं; किन्तु मिथ्यात्व, विषय, कषाय के ही पोषक हैं; परन्तु ते संस्कृत-प्राकृत रचित हैं, गंभीर हैं शब्द जिन विषैं, अनेक सहस्र हैं श्लोक जिन विषैं, तिनके कर्त्ता बड़े-बड़े आचार्य बतावैं हैं, अनेक बड़े-बड़े राजादिक मनुष्यनि करि मानिये हैं, ऐसे शास्त्रनि कों असत्य कैसे मानिये ? तातैं हमारे निश्चय भया नाहीं, कौन सा शास्त्र सत्य है अरु कौनसा असत्य है – ऐसा आगम विषैं संदेहरूप जो भाव, सो आगमाश्रय संशय मिथ्यात्व भाव जानना ।

बहुरि जिनमत विषैं नव तत्त्व कहे हैं । अन्य मत विषैं कोई विषैं पच्चीस तत्त्व कहै हैं । कोई विषैं सोलह तत्त्व कहे हैं । कोई मत विषैं एक ही तत्त्व कह्या अर कोई विषैं चार आदि तत्त्व कहे । इत्यादि मतनि विषैं नाना प्रकार तत्त्व रचना है । सो कौन मत के तत्त्व सत्य मानिये और कौन मत के कहे तत्त्व असत्य मानिये, ऐसा हमारे ताई तौ प्रतिभास्या नाहीं । अपने-अपने मतनि के शास्त्रनि विषैं अपने-अपने तत्त्वनि कों अनेक सहस्र श्लोकनि विषैं तत्त्वन की प्ररूपणा करि अपने-अपने कहे तत्त्वनि की सिद्धि करी है, तातैं हमारे संदेह प्रवर्त्तै; ऐसा जो पदार्थनि विषैं संशय रूप भाव, सो पदार्थाश्रय संशय मिथ्यात्व भाव जानना । इस प्रकार संशय मिथ्यात्व भाव का कथन किया ।

अब विपरीत मिथ्यात्व भाव प्ररूपिये हैं – जहां तत्त्व तो और स्वरूप तिष्ठैं हैं, अर ताकौं और स्वरूप जानना, और स्वरूप श्रद्धान करना, अन्यथा प्रवर्तना, सो विपरीत मिथ्यात्व भाव जानना । यथार्थ देव कूं कुदेव जानना, वा जिन विषैं देव का स्वरूप नाहीं, तिनकौं देव मानना, तैसैं ही श्रद्धान करना, प्रवर्तना; ताहीं अनुसार स्थापना करनी, स्वरूप रचना करि सेवा करनी, सो देवाश्रय विपरीत मिथ्यात्व भाव जानना ।

बहुरि यथार्थ गुरु कों कुगुरु जानना, जिन विषैं गुरुपना नाहीं तिनकों गुरु मानना, तैसैं ही श्रद्धान करना, तैसै ही तिनसौं प्रवृत्ति करनी, सो गुरु आश्रय विपरीत मिथ्यात्व भाव जानना ।

बहुरि सम्यग्ज्ञान वीतरागरूप धर्म का स्वरूप है, तिनकों तो कुधर्म जानना; अरु सम्यग्ज्ञान कहिये शास्त्रोक्त धर्म प्रवृत्ति, अरु वीतरागता कहिये निःकषाय भाव

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अर्थात् काम, क्रोध, लोभ आदि कोई भी कषाय धर्म विषैं न पोसने, ऐसा धर्म जीव के कल्याण के अर्थि है, सो तो न करना। कै तो मिथ्या शास्त्रनि करि रचित जो धर्म, ताविषैं प्रगट हैं हिंसादि पांच पाप अरु क्रोधादि तेरह कषाय, अरु पांचों इंद्रियनि के विषयनि का स्पर्श करना, कै मनोक्त क्रिया करना, कै पाखंडी गुरुनि करि कराये धर्म का सेवन करना, तिन विषैं नाना प्रकार विषय-कषाय पोषना, हिंसादि पंच पाप पोषना, ऐसे धर्म कौ कल्याण के अर्थि जानना, श्रद्धान करना, वा जिनोक्त शास्त्रनि सूं उल्टी जैनमत विषैं प्रवृत्ति करनी, जिनोक्त जैनाम्नाय रहित झूठी प्रवृत्ति करनी, पूजा करनी, प्रतिष्ठा करनी, तीर्थयात्रा करनी, प्रतिमा निर्मापण करनी, दान देना, तप करना, व्रत करना, संयम धारना, अनेक प्रकार यम-नेम धारना, परिग्रहादिक का प्रमाण करना, अनेक प्रकार खोटा भेष धरना, झूंठा शास्त्र रचना, तथा सांचे शास्त्र विषैं झूंठे श्लोक-काव्य बनाय अपने अभिप्राय कूं पोषने धर दैना वा शास्त्रनि का झूंठा अर्थ करना, कुपक्ष का पक्षी होना, पद उलंघि धर्म प्रवृत्ति जो पूजा, दान, तप, व्रत, संयमादिक अधिक वा हीन अङ्गीकार करना; अनेक प्रकार आखड़ी करनी इत्यादि झूठी प्रवृत्ति करनी, सब ही धर्माश्रय विपरीत मिथ्यात्व भाव जानना।

बहुरि जो सत्य समीचीन मोक्षमार्ग के उपदेश देनहारे ऐसे वक्ता आप्त कहिये, तिनकूं तौ कुआप्त मानना। तिनका कह्या तो श्रद्धान न करना, अरु जे विपरीत मार्ग के पोषक जैन धर्म सूं पराङ्मुख मिथ्यात्व, विषय-कषाय अर पांच पापनि सहित कुधर्म के पोषक कुशास्त्र के रचनहारे वा उपदेश देनहारे, तिनकों आप्त मानना, तिन करि कहे मार्ग कूं प्रवर्तना, सो आप्ताश्रय विपरीत मिथ्यात्व भाव जानना।

बहुरि जिनोक्त आगम कूं तौ कुआगम जानना। बहुरि अनेक प्रकार संभवै है प्रमाण-नयादिक की बाधा जिनकौं, विषय-कषाय के धारक मनुष्य करि रचित अर मिथ्यात्व, विषय-कषाय, पंच पापनि के पोषणरूप ही है प्रयोजन जिन विषैं, ऐसे कुशास्त्र, तिनकौं शास्त्र मानना। सत्य अर्थ कौ असत्य मानना, असत्य अर्थ को सत्य मानना, झूंठे अर्थ का पक्ष करना, अर सांचे अर्थ कूं झूंठा ठहरावना अर झूंठे अर्थ कूं सांचा ठहरावना, सम्प्रदाय का विच्छेद न देखना — इत्यादि आगमाश्रय विपरीत मिथ्यात्व भाव जानना।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जिनोक्त जे षट् द्रव्य, जीवादि सप्त तत्त्व, नव पदार्थ, पंचास्तिकाय इत्यादिकनि कूं तो कुतत्त्व मानना। अरु अन्य मतनि करि कहे जे नाना प्रकार भेदनि कौं धरैं; अरु नाना प्रकार स्वरूप सहित जे तत्त्व, तिन कूं स्वतत्त्व मानना; अरु जिनमत करि कहे तत्त्वनि कूं न मानना, तिनका स्वरूप अन्यथा धारना – इत्यादि पदार्थाश्रय विपरीत मिथ्यात्व भाव जानना। ऐसे विपरीत मिथ्यात्व का स्वरूप जानना।

अथ अनध्यवसाय (अज्ञान) मिथ्यात्व भाव लिखिये हैं – बहुरि जिनको बहुत काल होय गये हैं जैन शास्त्र सुणतां, तौ पण भी नहीं भया है हेयोपादेय, योग्य-अयोग्य, यथार्थ-अयथार्थ का ज्ञान जिनको; देव-कुदेव, गुरु-कुगुरु, धर्म-कुधर्म, वक्ता-कुवक्ता, शास्त्र-कुशास्त्र, तत्त्व-कुतत्त्व, सर्व ही हैं समान जिनके; बहुरि जिन-मत-अन्यमत, जिनमंदिर-अन्यमंदिर, जिनप्रतिमा-अन्यप्रतिमा, जिनलिङ्ग-कुलिङ्ग, पूजा-कुपूजा, दान-कुदान, पात्र-कुपात्र-अपात्र, क्रिया-अक्रिया-कुक्रिया, तीर्थ-कुतीर्थ, व्रत-कुव्रत, तप-कुतप, विनय-अविनय, मिथ्याचार-हीनाचार, अधिकाचार-शिथिला-चार, सदाचार-असदाचार सर्व हैं समान जिनकैं, अरु बराबर हैं यथार्थ-अयथार्थ शास्त्र जिनकैं, अरु बराबर हैं श्वेताम्बर आम्नाय अरु दिगम्बर आम्नाय जिनकैं, अरु अनेक प्रकार गुरु आम्नाय होय तो भी अशुद्ध ही धारै हैं पाठ व तिनका अर्थ, अरु सत्य पाठ अरु सत्य अर्थ सो भी समान हैं जिनकैं, अर समान है यथार्थ-अयथार्थ व्रत, तप, संयमादिक विषैं प्रवृत्ति जिनकैं, ऐसे विवेक रहित धर्म विषैं प्रवर्तक जीव, ते अनध्यवसाय मिथ्यात्व भाव सहित जानने।

इस ही प्रकार गृहित मिथ्यात्व भाव के पांच भेद संक्षेपता करि कहे, सो इन ही संक्षेपरूप भाव की दृष्टि करि सर्व मिथ्यात्व भावनि की उत्पत्ति का मूल कारण तौ दर्शन मोह है। तातैं भाव असंख्याते हैं। तिन प्रति दृष्टि धरते ही अनेक भाव दृश्यमान होय हैं। ए मिथ्यात्व भाव नामा कर्म है। ताका उदय स्थानक असंख्यात लोकप्रमाण हैं। ताही के अनुसार मिथ्यात्व भाव भी असंख्यात लोक प्रमाण हैं। बहुरि दर्शन मोह के अनंत स्पर्धक हैं।

स्पर्धक कहा, सो कहिये हैं। रस देने की शक्ति के अविभाग प्रतिच्छेद कहिये अंश, तिनकूं धरैं जे मिथ्यात्व कर्मरूप परिणये जे पुद्गल परमाणू, ते तौ वर्ग कहिये, सो एक-एक कर्म परमाणूरूप वर्ग विषैं शक्ति के अंश अनंतानंत हैं। बहुरि सम अविभाग प्रतिच्छेदनि कूं धरैं ऐसे अनन्तान्त वर्ग, तिनका समूह का नाम वर्गणा

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

है। सो सर्व तैं घाटि अविभाग प्रतिच्छेद धरैं वर्ग, ते जघन्य वर्ग कहिये। अर जघन्य वर्ग के समूह कों धरैं, सो जघन्य वर्गणा कहिये। बहुरि जघन्य वर्ग में जो अविभाग प्रतिच्छेद पाइये हैं, सो एक अविभाग प्रतिच्छेद वृद्धिकूं धरैं वर्ग, तिनके समूह का नाम द्वितीय ऐसे एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद बधतो-बधतो जिन वर्गनि विषैं पाइये हैं, तिनका समूह का नाम अन्य-अन्य वर्गणा है। ते अनंतानंत वर्गणा हैं। इन अनंतानंत वर्गणा के समूह का नाम स्पर्धक है। जघन्य वर्गणा के विषैं जेते अविभाग प्रतिच्छेदनि कूं धरया वर्ग हैं, तिनसौं एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद बधता-बधता धरचा द्वितीयादि वर्गणा विषैं वर्ग हैं। ऐसे ही जहां पर्यंत दूणां अविभाग प्रतिच्छेद कौ धरैं जिस वर्गणा विषैं वर्ग होंय, तिस वर्गणा सों दूसरा स्पर्धक कहिये। यह पहिली सर्व अनंती वर्गणा प्रथम स्पर्धक की जाननी। तैसैं ही जघन्य वर्गणा तैं तिगुणें अविभाग प्रतिच्छेद कूं धरैं वर्गणा हैं, सो तीसरे स्पर्धक की जाननी। ऐसे ही चौगुणा, पचगुणा आदि अविभाग प्रतिच्छेदनि कूं धरैं वर्गणा होंय, सौ चौथी पांचवीं आदि स्पर्धक की जाननी। प्रथम स्पर्धक का नाम जघन्य स्पर्धक है, जातैं जामें सर्व स्पर्धकनि सों घाटि शक्ति के अंश हैं, ऐसैं ही पूर्व स्पर्धक सों उत्तर स्पर्धक में शक्ति का अविभाग प्रतिच्छेद अनन्तानन्त बधते हैं। ऐसैं दर्शन मोह के स्पर्धक जघन्य सों ले उत्कृष्ट पर्यन्त अनन्त हैं।

तिन अनन्त स्पर्धक कों अनन्त का भाग दीजै जो प्रमाण आवै, सो एक भाग जुदा काढ़ि अवशेष बहुभाग प्रमाण तो शैलरूप हैं। शैल नाम पाषाण का है। इन विषैं बहुत अंश शक्ति का पाइये, प्रदेश रस देने विषैं बहुत कठोर हैं, तातैं इनको शैल सादृश्य कहे।

बहुरि जुदा राख्या जो एक अनन्तवां भाग प्रमाण, ताकौं फेर अनन्त का भाग दीयें जो प्रमाण आवै, सो एक भाग प्रमाण जुदा राखि बहुभाग प्रमाण स्पर्धक अस्थिरूप हैं। जातैं अस्थि नाम हाड़ का है, सो इन स्पर्धकनि विषैं शक्ति के अविभाग प्रतिच्छेद शैलरूप स्पर्धकनि सों अनन्तवें भाग प्रमाण हैं, तातैं कठोरता घाटि है, तातैं इनको अस्थिरूप कह्या।

बहुरि जुदा राखा जो एक अनंतवां भाग, ताकौं अनंत का भाग दीजै, तब बहुभाग प्रमाण स्पर्धक दारुरूप हैं। दारु कहिये काष्ट, सो इन स्पर्धकनि विषैं शक्ति के अंश अस्थिरूप स्पर्धकनि सों अनंतवें भाग हैं, तातैं कठोरता घाटि है, तातैं इनकों दारु समान कह्या।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि अवशेष रह्या एक भाग, तिस प्रमाण अनंतानंत स्पर्धक लतारूप हैं। लता नाम बेलि का है। इन विषैं काष्टरूप स्पर्धकनि सौं शक्ति के अविभाग प्रतिच्छेद अनंतवें भाग हैं, तातैं कठोरता घाटि है, तातैं इनको लता समान कहिये। ऐसे सर्व अनंत स्पर्धक चार प्रकार हैं – शैलरूप, अस्थिरूप, दारुरूप, लतारूप।

तहाँ सर्व तो शैलरूप अरु सर्व अस्थिरूप अरु दारुरूप स्पर्धकनि का अनंत भागनि विषैं एक भाग बिना बहुभाग तो मिथ्यात्वरूप हैं, मिथ्यात्व भाव उपजावने को कारण हैं। बहुरि दारु भाग का एक भाग का अनंत भाग कीजै, तहाँ बहुभाग सम्यङ्मिथ्यात्वरूप हैं; सो मिश्र भाव उपजावने का कारण है। तहां सम्यक्त्व और मिथ्यात्व दोनों लार ही मिलि एक मिश्र भाव होय है। बहुरि दारु को एक भाग अरु लता भाग का सर्व स्पर्धक सम्यक्प्रकृति मिथ्यात्व भावरूप हैं; ते देशघाती हैं। ते जीव कौं सम्यक्त्व भाव मूल सौं तो न घात सकें, तिस विषैं चल, मल, अगाढ़ादि दोष उपजावो करैं। ऐसे मिथ्यात्व तीन प्रकार है।

जिन जीवनि के शैलरूप, अस्थिरूप अरु दारु भाग के अनंत भाग विषैं एक भाग के बिना बहुभाग मिथ्यात्वरूप है, तिनके अनंत भाग विषैं एक भाग बिना बहुभाग स्पर्धकनि का उदय होय, ते जीव तौ धर्म-कुधर्म विषैं समझैं ही नाहीं। धर्म कहिये सम्यक् धर्म अरु कुधर्म कहिये मिथ्या धर्म, तिनके समझने योग्य ही नाहीं ऐसे एकेन्द्रिय, बेइंद्रिय, तेइंद्रिय, चौइंद्रिय, असैनी पंचेद्रिय अनंते जीव किंचित् ऊन संसारी राशि प्रमाण, अर समझने योग्य संज्ञी पंचेन्द्रिय असंख्याते जीव, तिन विषैं असंख्यात भाग विषैं एक भाग बिना बहुभाग प्रमाण, ते समझने विषैं बुद्धि ही न धर सकैं। अपने-अपने विषय-कषायादिरूप सांसारिक कार्य, तिन विषैं संतुष्ट रहैं, धर्म की कथनी ही अप्रिय लागै, परलोक की बात ही न करैं। निंद्य अमनोज्ञ पर्याय पाता विषैं ही निमग्न रहैं। इन किंचिदून सर्व संसारी अनंतानन्त जीवनि के तो अगृहीत मिथ्यात्वभाव ही है, ए तो उपदेश योग्य ही नाहीं।

बहुरि अवशेष रहे संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवनि विषैं असंख्याते भाग संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव असंख्यात प्रमाण, तिनकों यथायोग्य असंख्यात का भाग दीजै जो प्रमाण आवै, सो एक भाग जुदा राखि बहुभाग प्रमाण असंख्यात संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवनि कें दारु भाग के अनंत भाग विषैं बहुभाग बिना एक भाग प्रमाण अनंत स्पर्धक,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तिनकैं अनंत को भाग दीजै जो प्रमाण आवै, तिस एक भाग बिना बहुभाग प्रमाण स्पर्धकनि का उदय है। ताका माहात्म्यकरि सम्यक् धर्म तो अप्रिय लागै, अर मिथ्या धर्म प्रिय लागै। ताकरि मिथ्या धर्म को सेवैं, यथार्थ धर्म को न सेय सकैं। ये गृहीत मिथ्यात्व भाव के कारण मिथ्यात्व के स्पर्धक हैं। इनके स्थानक भी असंख्याते लोक प्रमाण हैं। तिन विषैं केई ऊपरले स्थानक तो ऐसे हैं, कि तिनके उदय होतैं तो सत्य धर्म सों द्वेष लागै अर मिथ्या धर्म सों आसक्त होय सेवैं; सो ये भी उपदेश योग्य नाहीं। इन जीवनि को मिथ्यात्व भाव छूटवो उपाय साध्य नाहीं है।

अर तिनतें नीचले केतेक स्थानक ऐसे हैं कि तिनके उदय सहित मिथ्यात्व धर्म विषैं मग्न रहैं, सत्य धर्म सों द्वेष न करैं। बहुरि तिनसों नीचले केतेक स्थानक ऐसे हैं कि तिनके उदय तैं गृहीत मिथ्यात्व धर्म मंद भाव सों सेवैं, आसक्त होय करि न सेवैं।

बहुरि तिनसों नीचले केई स्थानक ऐसे हैं कि तिनके उदय तैं जीव मिथ्यात्व धर्म कों छांड़ि तो न सकै, परन्तु यथार्थ धर्म कू सराहवै, अनुमोदना करे। इत्यादि जीव असंख्याते गृहीत मिथ्यात्व के जानने। सो ऐसे मिथ्यात्व के उदय सहित जीव हैं, ते उपदेशादि के उपाय योग्य हैं। इन जीवनि कों उपदेशादिक वा बाह्य कारण मिलें तो कोई जीव मिथ्यात्व धर्म को छोड़ि यथार्थ धर्म कों अङ्गीकार करै भी।

बहुरि अवशेष रहे संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव, तिनके असंख्यातवें भाग प्रमाण संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव, तिनके दारु भाग का अनन्तवां भाग प्रमाण नीचला स्पर्धक को उदय है, ते कोई जीव तो सत्य धर्म का उपदेश सुनै हैं, सत्य धर्म को पूछैं हैं, अयथार्थ धर्म कों छोड़ दे हैं, यथार्थ व्यवहार धर्म को बुद्धिपूर्वक अङ्गीकार करैं हैं, द्रव्यादि एकदेश अणुव्रतरूप धर्म के अनेक भेदनि कों ग्रहण करैं हैं, अर केई जीव धर्म बुद्धिपूर्वक यथावत् महाव्रत कूं धारैं हैं।

बहुरि केई बहुत ही मंद मिथ्यात्व के उदयरूप नीचले स्थानक कों उदय होते सम्यक्त्व कों सन्मुख होय हैं। पञ्च लब्धिरूप भाव कों प्राप्त होय, तीन करण-रूप भाव करि अनिवृत्तिकरण के अन्त पर्यन्त गुणश्रेणी निर्जरा आदिक अनेक आवश्यक करतो सन्तो दर्शन मोह कों उपशमाय कहिये उदय को अभाव करि अनिवृत्तिकरण का अनन्तरवर्ती समय उपशम सम्यक्त्व कों प्राप्त होय हैं। ये सर्व

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

मिथ्यात्व के नीचले स्थाननि के उदय सहित जीव सत्य धर्म कों आप ही तैं वा कुलाम्नाय तैं भी वा उपदेश थकी भी वा धर्म के बड़े प्रभावनादि अङ्ग, तिनकों देखते भी वा कोई विभववान पुरुष जे राजादिक, तिनकों धर्म विषैं तत्पर देखि वा ताकरि अणुव्रत वा महाव्रत के धारक महापुरुष, तिनके दर्शन थकी भी वा और अनेक प्रकार बाह्य कारणनि को निमित्त पाय अङ्गीकार करैं हैं।

अर जिनके तीव्रतर अर तीव्र मिथ्यात्व का उदय है, तिनकों उपदेश देना योग्य नाहीं। जातैं मिथ्यात्व के तीव्र उदय में यथार्थ उपदेश को ग्रहण नाहीं, उलटा उपदेश देनहारे के धर्म को विघ्न का कारण होय है। यो मिथ्यात्व भाव जीव कों सर्वथा अकल्याण का कारण है। तातैं जाकैं मंद उदय के औसर में याकों छोड़ना योग्य है। अर याका तीव्रतर व तीव्र उदय में छोड़ना असाध्य है। ये मिथ्यात्व चतुर्गति संसार का कारण है, अर मोक्ष के अभाव का कारण हैं। तातैं ये महा-पाप रूप ही है, हेय है।

अब मिथ्यात्व भाव, गुणस्थान तो प्रथम विषैं ही है अर मार्गणास्थाननि विषैं **गति** – ४, **इन्द्रिय** -- ५, **जाति** – ५, **काय** – ६, **योग** – आहारकद्विक विना १३, **वेद** – ३, **कषाय** – सर्व २५, **ज्ञान** – कुज्ञान ३, **संयम** – असंयम ही एक, **दर्शन** – चक्षु,-अचक्षु २, **लेश्या** – सर्व ६, **भव्य** – २, **सम्यक्त्व** – मिथ्यात्व, **संज्ञी** – संज्ञी-असंज्ञी २, **आहारक** – आहारक अनाहारक २, इन स्थानक विषैं मिथ्यात्व भाव प्रवर्तें है।

इति श्री भावदीपिका ग्रंथ के औदयिक भावाधिकार विषैं द्वितीय
मिथ्यात्व भाव अंतराधिकार पूर्ण भया।

—*—

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

कषाय भाव अंतराधिकार

(दोहा)

जिन कषाय विधि जगत यों, ताहि जयो जिनराय ।
तिन पद नमि गहि शरण जिन, हरो कषाय दुखदाय ।।

अब कषाय भावाधिकार प्ररूपिये हैं – चारित्र मोह कर्म के उदय तें उत्पन्न भयो सहज ही परम निराकुलित सुख का विध्वंसक अरु महा आकुलतारूप दुःख का कारण जीव का पर द्रव्यनि विषैं राग-द्वेष भाव, सो कषाय कहिये । तातैं कषाय के मूल भेद तो दोय हैं – एक राग, दूजा द्वेष । तहाँ पर द्रव्यनि सों जो रंजित भाव, सो राग कहिये; अरु पर द्रव्यनि विषैं अनरंजित भाव, सो द्वेष कहिये । तहाँ द्वेष कषाय के दोय भेद – क्रोध, मान । अरु राग कषाय के दोय भेद – माया, लोभ । ऐसे कषाय भाव चार प्रकार है । सो इन चारों ही प्रकार कषाय भावनि के उदय स्थानक तीव्रतर, तीव्र, मंद, मंदतर ऐसे – चार प्रकार प्रवर्तें हैं । सो एक-एक प्रकार में एक-एक कषाय के उदय स्थानक असंख्यात लोक प्रमाण हैं । सर्व मिलि चारों कषाय के भी स्थानक असंख्यात लोक प्रमाण हैं । तातैं असंख्यात के भेद बहुत हैं । तहाँ तीव्रतर स्थानक असंख्यात लोक प्रमाण हैं । तिनके असंख्यातवें भाग असंख्यात लोक प्रमाण तीव्र स्थानक हैं । तिनके असंख्यातवें भाग असंख्यात लोक प्रमाण मंद स्थानक हैं । अर तिनके भी असंख्यातवें भाग प्रमाण असंख्यात लोक प्रमाण मंदतर स्थानक हैं । ऐसे असंख्यात लोक प्रमाण कषाय भाव हैं । सो ही इनका कारण चारित्र मोह कर्म, ताका भी उदय स्थानक असंख्यात लोक प्रमाण है ।

बहुरि गुण (स्वभाव) वर्णन अपेक्षा चारों ही कषाय क्रोध, मान, माया, लोभ चार-चार प्रकार हैं । अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ । अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ । प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ । संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ – ऐसे सोलह भेदरूप कषाय भाव हैं । सो जैसें एक-एक अनंतानुबंधी आदि भेद क्रोध, मान, माया, लोभ – इन चार-चार कषायरूप

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रवर्तै, तैसैं ही एक-एक भेद नोकषाय भावरूप प्रवर्तें हैं। जो नोकषाय के भेद नव – हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पुरुषवेद, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद। ऐसे ही अनंतानुबंधी आदि एक-एक भेद के तेरह-तेरह भेद भये। तातैं चार भेदनि के बावन भेद भये।

तहाँ तीव्रतर अरु तीव्र स्थानकनि का एक भाग बिना बहुभाग विषैं तौ अनंतानुबंधी आदि चारों भेद प्रवर्तें हैं। बहुरि तीव्र स्थानकनि का असंख्यातवां भाग प्रमाण स्थानक अरु मंद स्थानक विषैं असंख्यात बहुभाग स्थानकनि कैं विषैं अप्रत्याख्यानादि तीन कषाय भाव प्रवर्तें हैं। बहुरि मंद स्थानकनि का असंख्यातवां भाग प्रमाण स्थानक का, सो भी असंख्यात लोक प्रमाण हैं; ताकूं असंख्यात का भाग दीजैं जो प्रमाण आवे, तिस एक भाग बिना बहुभाग विषैं प्रत्याख्यानादि दोय कषाय प्रवर्तें हैं। बहुरि अवशेष एक भाग अर सर्व मन्दतर स्थानकनि में एक संज्वलन कषाय भाव प्रवर्तें है।

तहां अनन्तानुबन्धी तो जीव के सम्यक्त्व गुण को आवरै है। अनन्तानुबंधी कषाय की यावत् प्रवृत्ति होय, तावत् जीव सम्यक्त्व कूं ग्रहण न करि सकै। अरु जो सम्यक्त्व का ग्रहण होय गया होय अरु अनन्तानुबंधी कषायभाव की प्रवृत्ति होय, तब ही सम्यक्त्व भाव का नाश होय जाय ऐसे जानना।

बहुरि अप्रत्याख्यान कषाय भाव देशसंयम गुण कूं आवरै है। बहुरि प्रत्याख्यान कषाय भाव जीव के सकल संयम कूं आवरै है। बहुरि संज्वलन कषाय भाव जीव के यथाख्यात चारित्र कूं आवरै है। ऐसे ये जीव के चार गुण के चार प्रतिपक्षी कषाय हैं।

अब कहे जे अनंतानुबंधी आदि चार भेद, तिनके विशेष बावन भेद, तिनका स्वरूप, तिनकी प्रवृति, तिनका कार्य, तिनकी प्रवृतिरूप कार्य का फल इत्यादि दिखाइये हैं।

तहां अपना स्वरूप जो ज्ञाता-दृष्टा भाव, तातैं छुड़ाय अरु पर स्वरूप जो राग-द्वेष भाव, तारूप करै, सो कषाय कहिये। अब तिस कषाय के वशवर्ती भये जीव पर द्रव्यनि विषैं किसी कूं इष्ट कल्पै है, अरु किसी कूं अनिष्ट कल्पै है। जिनकौं इष्ट कल्पै है, तिनसौं राग भाव करै है अरु जिनकों अनिष्ट कल्पै है, तिनसों द्वेष भाव करै है। बहुरि जिनकूं इष्ट कल्पै है, तिनके साधकनि सों राग करै है। बहुरि

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

जिनकूं अनिष्ट कल्पै हैं. तिनके साधकन सों द्वेष करै है। ऐसैं ही उत्तरोत्तर राग-द्वेष करता संता उत्पन्न भयी जो आकुलता भाव कौं धर्‌यां महा इच्छा, ताकरि दुःखी होय है। ऐसा तो सामान्य इच्छा का स्वरूप है।

बहुरि सो राग-द्वेष कों धर्‌यां इच्छा चार प्रकार प्रवर्तै है। अनंतानुबंधी रूप, अप्रत्याख्यानावरणरूप, प्रत्याख्यानावरणरूप, संज्वलनरूप।

अनन्तानुबन्धी कषाय का सामान्य स्वरूप

तहां राज विरुद्ध, लोक विरुद्ध धर्म विरुद्ध – ऐसैं तीन प्रकार अन्यायरूप कषाय प्रवृत्ति करै, सो अनन्तानुबन्धी कषाय जानना। अर जो प्रवृत्ति करता सन्ता राज करि दण्ड योग्य होय, सो राज विरुद्ध कहिये। अर जा करि लोकनि विषैं अपजस होय, पंचन्किरि दण्डनीय होय, सो लोक विरुद्ध कहिए। बहुरि जो धर्म प्रवृत्ति व लोक प्रवृत्ति राज विरुद्ध व लोक विरुद्ध तो न होय; परन्तु धर्म विरुद्ध होय, सो धर्म विरुद्ध कहिए। तातैं जो प्रवृत्ति राज विरुद्ध है, सो लोक विरुद्ध भी है अर धर्म विरुद्ध भी है। अर जो राज विरुद्ध नाहीं अरु लोक विरुद्ध ही है, सो भी धर्म विरुद्ध तो है ही। अरु जो प्रवृत्ति धर्म विरुद्ध ही है अरु राज विरुद्ध, लोक विरुद्ध नाहीं, सो धर्म विरुद्ध है ही। तहां तीनों ही प्रकार विरुद्ध, जैसे राजद्रोह, स्वामीद्रोह, मित्रद्रोह, विश्वासघात करना वा पहिले का उपकार भूलि कृतघ्नी होना – इत्यादि ये अनन्तानुबंधी के महा पापरूप कार्य हैं, तिनकूं करना, सो अनन्तानुबंधी कहिये।

बहुरि धाड़ा देना (डाका डालना) गैला मारना (रास्ते में लूट लेना) मनुष्यनि को मारना, गांव मारना, राज-काज बिगाड़ देना, सप्त व्यसन सेवना, राज विषैं पराई चुगली खाना इत्यादि, जिनकरि राज तैं दण्ड योग्य, ते सर्व अनन्तानुबंधी के राज विरुद्ध कार्य जानना। कुल, जाति, रीति सों आप उल्टा चालना, पितादिक का अपमान करना, अपनी बड़ाई करनी, पराई निंदा करनी, अपने व पर के विवाहादि कार्य बिगाड़ देना, अपने कुटुम्ब विषैं वा पड़ौसी मौहल्ला वा गांव आदिकनि सौं विरोध राखना, कटुक वचन कहना – इत्यादि लोक विरुद्ध अनन्तानुबंधी जानना।

मिथ्या देव, गुरु, धर्म, आप्त, आगम, पदार्थनि कूं यथार्थ जानना, तिनका यथार्थ श्रध्दान करना, तिनका दान, पूजन, नमस्कारादि कर विनय करना, अरु यथार्थ देव, गुरु, धर्माधिक कूं वा आप्त, आगम, पदार्थनि कूं अयथार्थ जानना, अयथार्थ श्रद्धान करना, तिनसौं अयथार्थ प्रवृत्ति करनी।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अयथार्थ पूजा करनी, अयोग्य द्रव्य चढ़ावना, अयोग्य अशुद्ध क्षेत्र विषैं रात्रि कौं आदि दे अयोग्य काल विषैं पूजा करनी। अशुद्ध शरीर, अशुद्ध वस्त्र, अशुद्ध सम्बन्ध इत्यादि बाह्य भाव की अशुद्धता सहित पूजा करनी। अरु अंतरंग भाव क्रोध, मान, माया, लोभ के वा सुजस बढ़ाई इत्यादिक के अभिनिवेश सहित अशुद्ध भाव तिन सहित पूजा करनी वा प्रमाद सहित पूजा करनी। प्रमाद कहिये पूजा समय – स्त्री कथा, भोजन कथा, राज कथा, चौर कथा ये चार विकथा करनी। वा पूजा समय क्रोध करना, मान करना, माया करनी, लोभ करना। वा पूजा समय स्पर्श आदि पांच इंद्रियनि के विषय पोषना। वा पूजा समय स्त्री पुत्रादिकनि सौं स्नेह (मोह) करना। तहां मन विषैं पूजा का अनादर भाव धरना वा निद्रा सहित होना वा मन, वचन, काय करि अविनय रूप प्रवर्त्तना। पूजा करनी भारी लागै, पूजा का काल भार्‍या लागै, पूजा विषैं द्रव्य खरचवो भार्‍यो लागै, वा पूजनादि क्रिया विषैं तौ मन कौं न ठहरावै, अन्य विषय-कषाय के कार्यनि विषैं मन कौं बुद्धि पूर्वक दौड़ावै – इत्यादि मन करि अविनय करना। बहुरि उस समय चकार-मकारादिक बचन बोलना।

वा अपने लौकिक विषय-कषाय, मोह के प्रयोजन का वचनालाप करना, वा अपनी प्रशंसा का वचन बोलना, वा अनादर भाव सौं स्तवनादि पाठ पढ़ना, वा स्तवनादि योग्य पाठ तो न पढ़ना, करणानुयोग का उपदेश करना, वा चरणानुयोग का उपदेश करना, वा द्रव्यानुयोग का उपदेश करना, वा प्रथमानुयोग का उपदेश करना, वा अपने आपको संबोधन रूप अध्यात्म पाठ इत्यादि पाठ पढ़ना।

वा देवके निकट गुरु के स्तवन का वा श्रुतस्तवन का वा धर्म के स्तवन का पाठ पढ़ना, वा शास्त्र के निकट देव-गुरु-धर्म के स्तवन का पाठ पढ़ना, वा तीर्थंकर के निकट अन्य तीर्थंकर के स्तवन का पाठ पढ़ना, वा प्रत्यक्ष पूज्य के निकट परोक्ष स्तवन पाठ पढ़ना, वा अशुद्ध पाठ पढ़ना, वा पढ़तां भूल जाना, वा आगला पाछै पढ़ना, पाछला आगे पढ़ना। वा पूर्व पाठ अपूर्ण छोड़ि उत्तर का प्रारंभ करना, वा बहुत सूक्ष्म वचन सहित स्तवन करना, वा बहुत ऊँचा स्वर करि पाठ पढ़ना – इत्यादि वचन कार अविनय करना।

वा काय करि पूज्य के बहुत निकट खड़ा रहना, वा बहुत दूर खड़े रहना, वा पूज्य के निकट बैठ जाना, सोय जाना, वा भित्ति आदिक के आश्रय बैठ जाना, नमस्कारादि करना, वा नमस्कारादि करते मस्तक, पीठ, गुदादि न नमावना; वा

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

उध्दतता सहित खड़े रहना; वा अंगनि कूं चलावना, निश्चल न राखना, वा दृष्टि चंचल राखना, वा चालना तो पीठि देई चालना, वा प्रदक्षिणा देतां बहुत शीघ्र चालना – इत्यादि कायकृत अविनय जानना।

बहुरि पूजन क्रिया विषैं बहुत सावद्य करना, अनछाण्यां पानी वा इकेवड़ा (एक पदर) पतला कपड़ा ताकरि छाण्यां पानी वर्तना, वा पानी बहुत बाहुल्यता सौं वर्तना, क्रिया सौं अधिक जल नांखना, अग्नि की बाहुल्यता करनी, वा बहुत दीपक जोवना, तैलादिक के दीपक जोवने। वा पूजन विषैं बहुत पुष्पनि का संग्रह करना, बिना देखी-बीधी आदि सदोष सामग्री चढ़ावना, इत्यादि सावद्य करना। वा प्रतिमा कूं कुंकुमादि के विलेपन सहित करना, वा पुष्पनि की माला सहित करना, वा चढ्या द्रव्य फेरि चढ़ावना, वा चढ़ि सामग्री कूं बेची ताकि सामग्री सों पूजा करनी, वा चैत्यालय के द्रव्य सौं पूजा करनी, पराये द्रव्य सों पूजा करनी, वा अन्याय करि उपार्जन किये द्रव्य सौं पूजा करनी, इत्यादि अक्रिया सहित देव-गुरु-धर्मादिक की पूजा करनी, सो अनन्तानुबंधी के धर्म विरुद्ध कार्य हैं।

बहुरि देव-गुरु-धर्मादिक के निकट चौरासी आसादना दोष लगावनी, वा तिनके निकट अन्य ग्रह व्यन्तरादिक वा देवी आदि की पूजा करनी, स्थापना करनी, तिनकी कथा-कहानी कहनी, स्तवन करना, जप करना, सो उत्कृष्ट अनंतानुबंधी का धर्म विरुद्ध कार्य है। इत्यादि देवाश्रय अनन्तानुबन्धी का धर्म विरुद्ध कार्य जानना।

बहुरि मिथ्या ज्ञान; मिथ्या श्रद्धान, मिथ्या प्रवृत्ति होते संते भी आपकों वा पर कों सम्यग्दृष्टि जानना वा आपकों व पर कों अन्य जीवनि पासि सम्यग्दृष्टि मनावना। बहुरि नहीं है शास्त्रोक्त बाह्याभ्यन्तर अणुव्रतरूप क्रिया विधान जिनके, तो पण भी जिनमत सौं विरुद्ध श्वेताम्बर, रक्ताम्बर, पीतांबरादिक के आश्रय नाना प्रकार भेष सहित आपकों वा पर कों अणुव्रती, महाव्रती मानना, वा अन्य पास मनावना, पूजावना, पूजना, दान लेना, वा दान देना, नाहीं मानै नाहीं पूजैं, तिनसौं विरोध करना – इत्यादि गुरु-आश्रय अनन्तानुबन्धी का धर्म विरुद्ध कार्य जानना।

बहुरि पूर्वोक्त अन्यथा पूजा करनी, चतुर्विध संघ बिना जे अन्य नाना प्रकार कुलिंग के धारक कुपात्र, तिनकों चार प्रकार वा दस प्रकार दान देना,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

वा शास्त्रोक्त रहित विषय-कषाय पोषने के अर्थि झूंठा अणुव्रत, महाव्रत ग्रहण करना, झूंठा तप करना, व्रत करना, करावना, तिनके आश्रय दान देना, वा लेना। विषय पोषने, वा पहले त्याग करना तथा पीछै ग्रहण करना। बाह्य प्रवृत्ति सांची दिखावनी, अंतरंग झूंठी प्रवृत्ति धरनी। पहिलें शास्त्र सौं अधिकाचार ग्रहण करना, पीछै छोड़ देना। जो धर्म अङ्गीकार करना, सो शास्त्रोक्त न करना, मनोक्त लोक रूढ़ि सहित करना। पूजा-प्रतिष्ठा, तीर्थयात्रादि सर्व कार्य अन्यथा करना, इत्यादि सो धर्माश्रय अनन्तानुबंधी का धर्म विरुद्ध कार्य जानना।

बहुरि झूंठा आप्त बनावना, मिथ्या उपदेश देना, अपने विषय-कषाय पोषतैं शास्त्र रचना, झूंठा मत चलावना, अपने विषय-कषाय पोषने, आपको महंत जानना, वा ऐसे वक्ता के मुख थकी उपदेश सुनना, तिनकरि कहे शास्त्रनि कूं बांचना, इन मतनि विषैं श्रद्धा करना, तिनकों महंत जानना, तिनके मन वांछित विषय-कषाय पोषने, सांचे आप्त करि कहे उपदेश विषैं श्रद्धा न करनी, इत्यादि आप्ताश्रय अनन्तानुबन्धी का धर्म विरुद्ध कार्य जानना।

मिथ्या शास्त्रनि कूं मानना, पढ़ना, पढ़ावना, श्रद्धान करना, वा सत् शास्त्रनि का मिथ्या अर्थ करना, मिथ्या अर्थ धारना, अन्य कै मिथ्या अर्थ का श्रद्धान करावना, कुपक्ष कौं ग्रहण करना, सुपक्ष को छोड़ देना, इत्यादि आगमाश्रय अनंतानुबन्धी का धर्म विरुद्ध कार्य जानना।

जिनेश्वर देव करि भाषित जो मोक्षमार्ग का कारण जीवादिक नव पदार्थ, तिनविषैं श्रद्धान न करना, अन्य कुदृष्टीनि करि भाषित नाना प्रकार भेद कूं लियां नाना प्रकार स्वरूप सहित जे तत्त्व, तिनविषैं श्रद्धा करनी। वा जिन-भाषित तत्त्वनि विषैं श्रद्धा न करनी, तिनका स्वरूप अन्यथा धारना, तिनसौं अन्यथा प्रवृत्ति करनी, वा तिन विषैं आस्तिक्य भाव न जोड़ना, नास्तिक भाव न छोड़ना। सीखवा माफिक सीख लेना, जानवा मात्र जान लेना, तिनमैं सों श्रद्धानपूर्वक आत्मज्ञान न करना – इत्यादि पदार्थाश्रय अनंतानुबन्धी संबंधी धर्म विरुद्ध कार्य जानना। सो राज विरुद्ध, लोक विरुद्ध, धर्म विरुद्ध कार्य अनन्तानुबन्धी की तेरह कषाय द्वारा होय प्रवर्तै हैं, सो ही कहिये हैं।

तहां प्रथम ही अनंतानुबंधी का क्रोध भाव कहिये हैं – आप करि प्रबल तैं क्रोध करना, वा राजादिक सों क्रोध करना, पराया धन, पराई स्त्री आदि वस्तुनि कूं

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ग्रहण करते संते कोई न ग्रहण करने देय, यह जाणि खिजाय तापर क्रोध करि ताको घात करना, वा अपना कोई प्रकार का जगत में अन्याय प्रगट करता संता कोई मान भङ्ग करै, तापरि क्रोध करि ताका घात करना। वा अनेक प्रकार व्यवहार विषैं मान-लोभादिक के अर्थ कोप करि वा धर्म विषैं परस्पर अदेखसका भाव करि क्रोध करि मनुष्य-तिर्यंचादिक का घात करना। वा मान लोभादिक के भङ्ग होता क्रोध करि गांव मारना, गैला मारना, गांव का खेतादिक (खलिहान) बाल दैना, इत्यादि अनन्तानुबंधी का राज विरुद्ध क्रोध जानना।

बहुरि अपने कुटुंबादिक विषैं वा अनेक प्रकार लौकिक व्यवहार कार्यनि के सम्बन्धीनि विषैं वा विवाहादिक कार्यनि विषैं जात्यादिक मनुष्यनि विषैं– इत्यादिकनि विषैं निरर्थक क्रोध किया करना, जो कार्य करना सो क्रोध तैं अभिनिवेश सहित करना। प्रयोजनवान जीव आय आपसों वचनालाप करै, ताकों क्रोध सहित उत्तर देना। ताका कार्य कर देना, परन्तु क्रोध सहित करना। वा अपना न्याय कार्य भी बिगाड़ देना, ता पीछे तासौं निःप्रयोजन क्रोध करना। वा अपना न्याय कार्य का, वा सौंप्या धनादिक भी न आता जाणि तासौं निरर्थक क्रोध करना। वा अपने आश्रित के पाप उदय आवता सन्ता वा आप कुविसनादिक अन्याय कर्मनि विषैं प्रवर्तै है, वा प्रयोजनभूत कार्यनि विषैं अज्ञानता तैं प्रवर्तै है, वा न प्रवर्तै है, तिनकी कोई शिक्षा दे तो तिन पर क्रोध करना। वा आपकैं पाप उदय आवतां संता, वा रोगादिक करि, वा वृद्ध अवस्था करि अशक्तता होते संते जो स्त्री-पुत्रादिक वैयावृत्य न करि सकै, मनवांछित भोजनादिक न दें, वा कह्या न माने, तिन पर क्रोध करना, इत्यादि अनंतानुबंधी का लोक विरुद्ध क्रोध जानना।

बहुरि क्रोध सहित धर्म की शिक्षा देनी तथा क्रोध करि धर्म कार्य करावना, वा शास्त्र का झूठा श्रद्धान-ज्ञान-प्रवृत्ति करावना, उपदेश देना, अर जो कोई न मानै, तापरि क्रोध करना। वा अपने प्रति कोई यथार्थ मार्ग का उपदेश दे, तापर क्रोध करना। वा धर्म कार्य विषैं अज्ञानता तैं प्रवर्तै है, शास्त्र का झूठा अर्थ कहै है, वा झूठा अर्थ धारै है, वा धर्म कार्यनि विषैं न प्रवर्तै है, ता प्रति कोई भली शिक्षा दे है वा धर्म विषैं मान-अपमान करै, तिन प्रति क्रोध करना। वा साधर्मीनि सूं क्रोध सहित चर्चा करनी, वा क्रोध सहित प्रवृत्ति करनी, वा आप धर्म विषैं प्रवर्तै है, धनादिक खर्चै है अरु अन्य कोई साधर्मी थोड़ा प्रवर्तै है, थोड़ा खरचै है, वा न प्रवर्तै है, न धन खर्च करै है, तिन विषैं क्रोध करना। वा क्रोध करि धनादिक

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

खरचावना, वा पहिला कूं नीचा पाड़वा कै अर्थि क्रोध करि पूजनादिक कार्य करना, तिन विषैं बहुत धन खरचना। वा तप व्रतादि विषैं भोजनादि को अंतराय होते संते वा धारने-पारने भोजनादिक विषैं काल की अधिक हीनता होते संते जो स्त्री किंकरादि विषैं रोष करना – इत्यादि अनंतानुबंधी का धर्म विरुद्ध क्रोध भाव जानना।

अब अनन्तानुबंधी मान भाव कहिये हैं – जहां आपकों दूसरे के पास बड़ा मनावने की बुद्धि वा दूसरे को नीचा पाड़ने की बुद्धि, ताका नाम मान कषाय कह्या है। जहां आपतैं प्रबल सैती अष्ट प्रकार मद करना वा राजादिकनि के निकट अष्ट प्रकार मद करना वा राजादिकों से अष्ट प्रकार मद करना, सो राज विरुद्ध अनंतानुबंधी मान भाव जानना।

कुल मद – जो हमारा पिता राजदिक है। **जाति मद** – जो हमारी माता राजादिक की बेटी है। **लाभ मद** – जो हमारैं धनादिक सामग्री निरखेद आय प्राप्त होय है। **ऐश्वर्य मद** – जो राज सामग्री व धनादिक प्राप्त होय है, सो सामग्री मद है। **बल मद** – जो सप्त प्रकार सामग्री – धन का बल, सामग्री बल, स्थान बल, बुद्धि बल, मंत्र बल, शरीर बल –इनका मद बल का मद है। **रूप मद** – जो हमारा रूप है, सो और कोई का नाहीं। **विद्या का मद** – जो हमारे तुल्य कोई पण्डित नाहीं। **तप मद** – जो हम बड़ा-बड़ा तप किया करैं हैं। ये अष्ट प्रकार मद जानना, बहुरि माता-पितादिक सों मद करना। वा लौकिक शास्त्र के किसबादि (कला) शास्त्र विद्या सिखावनहारा थकी मद करना, वा आजीवका कैं देनहारे प्रति मद करना, वा जिनतैं भली लौकिक शिक्षा पाइये हैं, ऐसे चतुर पुरुष, तिनसौं मद करना। वा विवाहादिक कार्यनि विषैं जात्यादिक सौं मद करना, वा अपने पद सौं अधिक मानरूप प्रवृत्ति करनी, वा अन्याय कार्य की सिद्धी करि मान करना, वा सप्त व्यसनादिक विषैं अधिकता को प्राप्त होय मद करना – इत्यादि अनंतानुबंधी का लोक विरुद्ध मान भाव जानना।

बहुरि देव-गुरु-धर्मादिक के निकट मद करना। वा साधर्मीनि सो मद करना वा पूजनादिक धर्म कार्यनि विषैं धनादिक खरचि मद करना। वा धर्म पद्धति विषैं मुखियापणां तैं प्राप्त होय मद करना। बहुत शास्त्र पढ़ मद करना। बहुरि अनेक प्रकार धर्म अंगनि विषैं मान के अभिनिवेश सहित धनादि खरचना। आप कू महान

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

मानना, अन्य साधर्मीनि कों आँप तें तुच्छ समझना। वा साधर्मीनि का अपमान करना। अनेक प्रकार वस्त्राभूषणादि पहरि साधर्मीनि विषें मद धारि बैठना, इत्यादि अनंतानुबंधी का धर्मविरुद्ध कार्य मान भाव जानना।

अब अनंतानुबंधी का माया कषाय भाव कहिये हैं – जहां मन विषें तो अन्य विचार करना, अरु वचन तें और ही कहना; अरु काय करि और ही करना; ताका नाम माया कषाय है। तहां आप तें प्रबल तें मायाचार करनी; वा पराया राज, पराया धन, पराई स्त्री आदि वस्तुनि के ठिगने अर्थि माया करनी; वा विश्वास उपजाय फेरि घात करना, वा अपने मान बढ़ावने अर्थि राज विरुद्ध मायाचारी करनी – इत्यादि राज विरुद्ध अनंतानुबंधी माया कषाय भाव जानना।

बहुरि माता-पिता आदिक सौं, मायाचारी वा सिरदार साह (सेठ), भागीदार, राजादि सूं मायाचारी करनी वा निरर्थक मायाचारी वचन कहना; अनंतानुबंधी माया कषाय भाव जानना।

बहुरि देव-गुरु-धर्मादिक विषैं मायाचारी करनी, सो धर्म विरुद्ध माया कहिए।

बाह्य तौ जैनी रहना, अरहंतादिक कूं देव मानना; अरु अंतरंग विषैं ग्रह, व्यंरादिक कौं दिहाड़ी, शीतलादिक कौं देव मानना। इनके अर्थि तन, मन, धन बहुत उल्लास सेती बहुत खरचना। सत्य अरिहंत देवादिक के अर्थ न खर्च करना वा उल्लास सहित थोड़ा खर्च करना, वा थोड़ा खरचना अरु बहुत प्रगट करना। वा दूसरे को देखता बहुत भक्ति करनी; अरु न देखतां न करनी – इत्यादि देव विषैं माया जाननी।

बहुरि उपासक तौ निर्ग्रंथ गुरु का रहना, अरु बाह्य कुलिंगी पाखंडीनि कूं सेवना वा गुरु के पास निंदा गर्हा मायाचारी सूं करनी इत्यादि गुरु विषैं माया है।

बहुरि व्रत, तप, संयम, आखड़ी, अनेक प्रकार यम-नियम बाह्य तौ यथावत दिखावना, अरु अंतरंग विषें यथावत न धारना – इत्यादि धर्म विषैं माया जाननी।

बहुरि सत्य कथा वक्ता के मुख थकी धर्म का तत्त्व का यथावत कथन सुनि श्रद्धान करनी, आरम्भ करना, व सराहना करना; अरु पीछै असत्य वक्ता करि कह्या तत्त्वनि का श्रद्धान करि, ताकी सराहना करनी। अरु सत्य वक्ता तथा सत्य कथन की निंदा करनी; इत्यादि आप्त विषैं माया जाननी।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि आगम विषैं निरूपण तो और ही भांति है अर ताका कथन और भांति करना। शास्त्र का अर्थ झूठा करना। अपने अभिप्राय कूं पोषता शास्त्र रचना, अरु शास्त्र विषैं नाम बड़े आचार्य का धरना। वा कपोल-कल्पित मिथ्या श्लोक, काव्य बनाय शास्त्र में धरना वा लोकनि कूं सुनावना; अर नाम शास्त्र का लेना, ये अमुक आचार्य के कीये आगम के शास्त्र का कह्या वचन है, श्लोक है, काव्य है, इत्यादि आगम विषैं माया जाननी।

बहुरि तत्त्वनि का स्वरूप और है; अरु लोकनि प्रति और ही प्रकार कहना, हेय को उपादेय कहना अरु उपादेय को हेय कहना, इत्यादि पदार्थनि विषैं माया जाननी।

आगै अनंतानुबंधी लोभ कषाय कहिये हैं – अति तीव्र अनंतानुबंधी लोभ कषाय कर्म के उदय के वशीभूत होता हुआ आतमा तीव्र लोभ को विस्तारै है। नाहीं दीखै है इस भव ? तथा पर भव संबंधी अकल्याण आप कूं, जो धनादिक की वांछा करत संतो अनंतानुबंधी के अनेक विषम कार्य करै है। चोरी करै है, धाड़ा दे है, गांव तथा गैला मारे है, मनुष्य मारै है, राजद्वार विषैं चोरी करै है, पराये मंदिर विषैं घुस जाय है; नाहीं धारे है आस जीतव्य की। बहुरि राजादिकनि की चाकरी करै है। तहां स्वामी के घर विषैं चोरी करना, स्वामी का बिगाड़ करि सोंक (रिश्वत) लेना वा झूठे का पक्षी होय सोंक लेना। झूठा दोष लगाय डर दिखाय धन खोंसि लेना। वा थोड़ी जमा विषैं बहुत इजारा बांधि रैयत को लूटि लेना। वा राजहिस्सा का सख्त हासिल लेना। प्रजा का धनादि खोंस लेना। लोभ के वशीभूत होय राजा-प्रजा का विध्वंस करना, वा राज का हासिल की चोरी करना। वा चोर के पास हिस्सा लेना। चोरी करावनी, गैला मरावना, धाड़ा दिवावना, गांव मरावना, मनुष्य मरावना, वा लोभ कषाय करि अंधा होता हुआ राजद्रोही, स्वामीद्रोही, धर्मद्रोही, मित्रद्रोही, कृतघ्नी होना – ऐसे महान पाप करै हैं। वा अनंतानुबंधी लोभ के वशीभूत हुआ थका गम्यागम्य कहिये ऐसा कार्य किसी की दृष्टि में न आया होय, न सुण्या होय, ऐसे कार्य कर बैठे है। इत्यादि राज विरुद्ध अनंतानुबंधी लोभ कषाय भाव जानना।

बहुरि लौकिक व्यवहार विषैं अन्याय लोभ करना। झूठा लेख लिखना, रकम चुरावना, लिखा सिवाय अधिक खेंचना। वा धन का संग्रह करना; अरु लौकिक व्यवहारादिक विषैं धन न खरचना। अपने विषय के अर्थि धन न खरचना,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सूम (कजूंस) रहना। अपनी आजीविका की बाहुल्यता होते संते भी विषम व्यवहार करना घर का सुख छोड़ि देशान्तर जाना। समुद्र में प्रवेश करना, विषम स्थान में जाना, वा और अनेक महा पाप के व्यवहार करना। अपना पद उलंघि निंद्य व्यवहार कार्य करना। अपने पास होते संते भी पराया देना न देना। राखि मेलने की बुद्धि से पराया करज लेना। धरोहर दबाना वा लोभ के वशीभूत होय अनेक विवाहादिक कार्य बिगाड़ देना। लोभ के वशीभूत भया अपने कुटुम्बादिकनि कौं दुःख देना। बहुत धन जाता जानि भी तुच्छ धन न देना। धनादिक के अर्थि अपना बहुत अपमान कराना, इत्यादि लोक विरुद्ध अनंतानुबंधी लोभ कषाय भाव जानना।

बहुरि परलोक के अर्थि धर्म विषैं धनादिक न खरचना, वा अपने पद-योग्य धन न खरचना; वा थोड़ा खरचना। वा धर्म कार्य तो बड़ा प्रारम्भ करना अरु धन सूमता सूं खरचना वा थोड़ा खरचना। कर्‌या जो धर्म कार्य विषैं लोभ के वशीभूत होता हुआ बिगाड़ देना। मैलापना दिखावना। पूजनादि धर्म कार्य विषैं सूमता सौं धन खरचना। लोभ के वशीभूत भया थका पंचनि में सूम बाजना, (कंजूस कहलाना) वा धर्म के आश्रय लोभ करना – इत्यादि धर्म विरुद्ध अनंतानुबंधी लोभ कषाय भाव जानना।

बहुरि राजादिक महंत पुरुषनि की हांसी करना, वा माता-पितादिक लौकिक गुरुजन की हांसी करना, वा परस्पर मर्मछेदन के वचन कहि हास्य करना-करावना। बिना उपाय अन्याय के विषय-कषाय कार्यनि की आप कूं प्राप्ति होय ताकरि प्रसन्न होना। मुनिजनां की हास्य करना, वा साधर्मीनि की हास्य करनी। धर्म स्थानकनि विषैं वा धर्म अंगनि विषैं हास्य क्रीड़ा करना – इत्यादिक अनंतानुबंधी का हास्य कषाय भाव जानना।

बहुरि सप्त व्यसननि विषैं अति आसक्त होय सेवना। पंच इन्द्रियनि के विषयनि विषैं बहुत आसक्त रहना। पांच इन्द्रियनि के न्याय मार्ग के विषैं भी धर्म, अर्थ, पुरुषार्थ बिगाड़ि अति आसक्त होय सेवना। धर्म विषैं भी विषय-कषाय पोषना, इत्यादि अनंतानुबंधी का रति कषाय भाव जानना।

बहुरि माता-पितादिकनि सौं रोगादिक अवस्था होते संते वा वृद्ध अवस्था होत संते अरुचि करना। पाप उदय होते संते बंधुजनादिक सौं, मित्र सौं,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

वा साधर्मीनि सौं, वा और कोई महत पुरुषनि सौं अरुचि करना, धर्म अंगनि सौं अरुचि करना कहिये छोड़ देना, अलहदा हो जाना, तिन विषैं उपकार न करना – इत्यादि सो अनंतानुबंधी अरति कषाय भाव जानना।

बहुरि व्यसनादिक के साधक का वियोग होतैं शोक करना, अन्याय कार्य जो प्ररूपा था, तिसका बिगाड़ होतैं शोक करना – इत्यादि अनंतानुबंधी का शोक कषाय भाव जानना।

बहुरि सप्त व्यसनादिक के निमित्त तैं भय के कारण उत्पन्न होते संते वा अन्याय कार्यरूप प्रवृत्ति के निमित्त तैं भय होते संते भयकंप होना वा दुष्टनि के भय तैं भयकंप होई अपना न्याय धर्म वा क्रिया धर्म वा आखड़ी धर्म वा अणुव्रत-महाव्रत धर्म छोड़ि देना। पद योग्य शक्त्यनुसार सम्यक्त्वादि धर्म अङ्गीकार न करना। अपने शरणे राख्या कों सोंपि देना। इत्यादि अनन्तानुबन्धी का भय कषाय भाव जानना।

बहुरि रोगादिक अवस्था होतैं मुनिजनादिक चतुर्विध संघ की वा साधर्मीनि की ग्लानी करनी। वा माता-पितादि लौकिक गुरुजन की ग्लानी करनी, तिनका वैयावृत्य न करना। लावारिस पाप का है उदय जिनकैं, नही मिलै है खानपान-वस्त्रादिक तिनकौं, अर रोग करि ग्रस्त है शरीर जिनका, ऐसे तिर्यंच, मनुष्यनि की ग्लानी करनी, तिनकी दया न पालनी, उपकार न करना। वा सधर्मीनि सूं वा धर्मावलम्बी जनों से ग्लानी भाव करना इत्यादि। अनन्तानुबंधी की जुगुप्सा कषाय जाननी।

द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अयोग्यता सहित स्त्रीनि सौं रमने की इच्छा वा रमना, सो अनन्तानुबन्धी का पुरुष वेद कषाय है।

बहुरि पर स्त्रीनि सौं रमना वा रमने की इच्छा करनी। वा द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अयोग्यता सहित स्व स्त्रीनि सू रमना वा रमने की इच्छा करनी। तहां पूर्ण गर्भवती स्त्री, प्रसूतीवान स्त्री, वा रजस्वला स्त्री, वा रोग सहित स्त्री, बालक स्त्री, वा कुमारी स्त्री इत्यादि स्त्री सौं रमना, सो द्रव्य की अयोग्यता जाननी।

बहुरि चैत्यालयादिक विषैं वा तीर्थक्षेत्र विषैं वा अशुद्ध क्षेत्र विषैं रमना, सो क्षेत्र की अयोग्यता है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि अष्टमी, चौदश वा चार परवनि विषैं, वा अष्टान्हिक विषैं, वा भादवां विषैं वा तीर्थंकरां का पञ्चकल्याणक काल जो दृश्यमान होय, प्रवृत्तिमान, होय तिन विषैं रमना, सो काल की अयोग्यता है ।

बहुरि तप के काल विषैं, वा व्रत के काल विषैं, वा शील-संयम आखड़ी के काल विषैं, वा राजादिक महंत पुरुषनि के मरण काल विषैं, वा साधर्मीनिके मरण काल विषैं, वा इष्ट के मरण काल विषैं, अति वृद्ध अवस्था विषैं इत्यादि भाव विषैं रमना, सो भाव की अयोग्यता कहिये । इत्यादि स्थान विषैं जो रमने की इच्छा, सो अनन्तानुबंधी का पुरुष वेद कषाय भाव जानना ।

बहुरि पर पुरुष सों रमने की इच्छा व रमना, वा बलवान पुरुष सों रमने की इच्छा वा रमना, वा द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अयोग्यता सहित रमने की इच्छा वा रमना, सो अनन्तानुबन्धी का स्त्री वेद कषाय भाव जानना ।

बहुरि स्त्री-पुरुष दोनों सूं रमने की इच्छा वा रमना, सो नपुंसक वेद कषाय भाव है । सो यह भाव सर्वथा प्रकार व्यक्तरूप बुद्धिपूर्वक कार्यरूप हूवो थको अनन्तानुबन्धी को भाव है । जातैं यह भाव अप्रत्याख्यानादि तीन कषायनि विषैं व्यक्तरूप बुद्धिपूर्वक कार्यरूप न होय है, इस भाव को अव्यक्त उदय होय है । यह अनन्तानुबंधी का नपुंसक वेद कषाय भाव जानना ।

ऐसें ये कहे जे अनन्तानुबन्धी के स्वरूप प्रगट बुद्धिपूर्वक कार्यरूप भाव, ते अनन्तानुबंधी चारित्र मोह के तीव्र उदय विषैं होय हैं, इन विषैं कृष्ण, नील कापोत लेश्या ही है । ये भाव नरक निगोद के कारण हैं, तातैं इन भावनि कौं प्रगट न होने देना, अरु इनके नाश का उद्यम करना, जातैं यह मनुष्य पर्याय पाई है, तातैं यहां इसके नाश करने के सर्व उपाय मिलै हैं ।

अरु यह मनुष्य पर्याय बिजली के चमत्कारवत् क्षणभंगुर है । तातैं ए पर्याय छूटें पीछे इनका उपाय होय सकता नाहीं । अरु अनंतानुबंधी के उत्कृष्ट कषाय भाव इस भव पर भव, विषैं सर्वत्र अकल्याण के कारण हैं । इस भव विषैं तौ राजादिकनि करि दंड पावै है, धन-संपदा कुटुंबादिक का वियोग होय है, स्थान तैं भष्ट होय है, अर लोक निंद्य होय है, दुःखी होय है, अरु आगामी नरकगति अरु निगोदादि तिर्यंचगति को कारण है, तातैं इनके छोड़ने का उपाय करना ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

इस अनंतानुबंधी का वासना काल संख्यात, असंख्यात, अनंत भव पर्यंत चला जाय है। एक बार किसी जीव पर किया जो क्रोधादिक भाव, सौ अनंत काल पर्यंत दुःखदाई है, तातैं इनके उपजने का कारण घटावना, इनके अभाव होने का कारण मिलावना, सुसंगति में रहना; कुसंगति में न रहना। इनके नाश का प्रथम उपाय तो यह है; पीछे जैसें बने तैसें इनके छोड़ने का उपाय करना।

बहुरि अनंतानुबंधी के मंद उदय में कार्य रहित आप गोचर भाव होय हैं। तहां छहों लेश्या पाइये हैं। ये भाव चारों गति के कारण हैं। बहुरि अनंतानुबंधी के मंदतर उदय में आपके अगोचर भाव होय हैं। तहां पीत, पद्म, शुक्ल तीन लेश्या ही पाइये हैं। जातैं मंदतर उदय में द्रव्य सम्यक्त्व अरु द्रव्य अणुव्रत, महाव्रत योग्य होय हैं, तातैं ये भाव मनुष्य-देव दोय गति कूं ही कारण हैं। अरु वर्तमान विषैं सर्व ही कषाय भाव दुःख ही के कारण हैं। अनंतानुबंधी कषाय गुणस्थान तो मिथ्यात्व अरु सासादन दोय विषैं ही हैं। बहुरि मार्गणास्थान विषैं **गति** – ४, **जाति** – ५, **काय** – ६, **योग** – आहारकद्विक विना १३, **वेद** – ३, **कषाय** –२५, **कुज्ञान** – ३, **असंयम** – १, **दर्शन** – चक्षु-अचक्षु दोनों, **लेश्या** – ६, **भव्य** – भव्य-अभव्य दोय, **सम्यक्त्व** – मिथ्यात्व अरु सासादन २, **संज्ञी** – संज्ञी-असंज्ञी २, **आहारक** – आहारक, अनाहारक २, विषैं प्रवर्तै है। ऐसें अनन्तानुबन्धी कषाय भाव जानना।

अप्रत्याख्यान कषाय का सामान्य स्वरूप

अप्रत्याख्यान कषाय भाव निरूपिये हैं – अनंतानुबंधी रहित अप्रत्याख्यानादि तीन कषाय का उदय होतैं यह जीव महापाप के कारण अन्यायरूप जो चंचल भाव, ताकूं छोड़ि विमलता को प्राप्त होय है। न्यायरूप निश्चल भाव विषैं तिष्ठै है। तहां यह जीव सम्यग्दृष्टी होय है। तहाँ सम्यक् भाव का ग्रहण है। सर्व ही तेरा प्रकार कषाय भाव न्यायरूप प्रवर्तै है। चारों कषायनि के कार्य तो होय हैं, परन्तु न्यायरूप होय हैं। पांचौं इंद्रियनि के विषय तो सेवै है, परन्तु न्यायपूर्वक सेवै है, सो भी द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की योग्यता सहित कार्य होय है। कषाय कार्यनि विषैं अर विषय कार्यनि विषैं अति आसक्त होय मूर्च्छा भाव कों न प्राप्त होय है। अयोग्य कार्यनि कूं कदाचित् भी न करै है। राज विरुद्ध, लोक विरुद्ध, धर्म विरुद्ध, ऐसे जे कषाय कार्य वा विषय कार्य वा सप्त व्यसनादि जाकैं सर्वथा न होय हैं, इस कषाय के होतें इतना सचेत रहै है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रथम ही अप्रत्याख्यान क्रोध भाव कहिये हैं – अपने राज्यादि न्याय कार्यनि विषैं क्रोध करै है। अपनी आज्ञा मानने योग्य हैं अर आज्ञा कूं न मानै हैं, ता (तिन) पर क्रोध भी करै है। अपने राज्यादि न्याय कार्य के बाधक, वा अपने धन, प्राण, संपदा, वस्त्रादिक के बाधक हैं, वा अपना मानभंग करनहारे हैं, वा प्रजा के बाधक हैं, वा कुटुम्बादिक के बाधक हैं, वा गरीब, दुखित, भुखित मनुष्यनि के वा तिर्यंचादिक जीवनि के सतावनहारे हैं, तिन पर क्रोध करे है। वा धर्म बाधक, चतुर्विध संघ कूं दु:ख देनहारे, वा मिथ्याधर्म के पोषक, वा सत्य धर्म के उत्थापक तिनपर क्रोध करै है। इत्यादि योग्य स्थानकों पर क्रोध भाव करै है, सो भी द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की योग्यता सहित करै है। क्रोध के वशीभूत न होय है। कार्य के अंत विषैं ही शांत होय है। याका वासना काल उत्कृष्ट छह मास पर्यन्त है। पीछे उपशांत ही होय है।

अब अप्रत्याख्यान मान कषाय भाव कहिये हैं – अपने पद योग्य मान करै है। राज विरुद्ध, लोक विरुद्ध, धर्म विरुद्ध मान नाहीं करै है। सो भी द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की योग्यता सहित करै है। बहुरि देव, गुरु, धर्मादिक के निकट अष्ट प्रकार मद नाहीं करै है। चतुर्विध संघ सों मद नाहीं करै है, तहां निर्मद होय है। बहुरि अपने पद के थांभने विषैं मान करै है; तहां प्राण जातां भी मान नाहीं तजै है। बिना प्रयोजन किसी का मान भंग नाहीं करै है। किसी सूं बिना प्रयोजन अदेखसका (ईर्षा) भाव नाहीं राखै। इत्यादि अप्रत्याख्यान मान कषाय भाव जानना।

अब अप्रत्याख्यान माया कषाय भाव कहिये हैं – अपने राज्यादि न्याय कार्य की सिद्धि के अर्थि माया करै है। दूसरे के ठिगने के अर्थि माया नाहीं करै है। अपना धन, सम्पदा, प्राणादि राखने के अर्थि माया करै है। वा अपने धर्म राखने के अर्थि माया करै है; सो भी द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की योग्यता सहित करै है। पराया धन, प्राण, स्त्री, संपदादि हरणै के अर्थि माया नाहीं करै है। इत्यादि माया करै है, सो अप्रत्याख्यान माया कषाय भाव जानना।

अब अप्रत्याख्यान लोभ कषाय भाव कहिये हैं – अपने राज्यादि न्याय कार्यनि विषैं लोभ करै है, तहां भी द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की योग्यता सहित करै है। अन्याय लोभ नाहीं करै है। बहुरि जिन कार्यनि विषैं महा पाप उपजैं, ऐसा न्याय लोभ भी नाहीं करै है। अपने यश होने का वा अपने धर्म वा धन का लोभ करै है; इत्यादि लोभ करै है; सो अप्रत्याख्यान लोभ कषाय भाव जानना।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अर जहां अपने राज्यादि कार्यनि विषैं मुख्य हैं, तिन प्रति वा अपने स्त्रीजन आदि परिवार विषैं हास्य कषाय करै है। वा अपने हास्य योग्य पुरुषनि प्रति हास्य करै है। सो भी द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की योग्यता देखि करै है। इत्यादि कषाय, सो अप्रत्याख्यान हास्य कषाय भाव जानना।

बहुरि अपने स्त्री-पुत्रादिकनि विषैं वा अपने योग्य पांच इंद्रियनि के विषय, तिन विषैं वा अपने योग्य विषय सामग्री वा राज्यादि सामग्री, तिन विषैं रति करै है, वा दान-पूजनादि धर्म अंगनि विषैं रति भाव करै है। सो भी अति आसक्त होय नाहीं करै है; किंतु द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की योग्यता सहित रति करै है। इत्यादि अप्रत्याख्यान रति कषाय भाव जानना।

बहुरि दुर्जन पापी पुरुषनि विषैं, राज के बाधक, प्रजा के बाधक, धर्म के बाधक, पराई चुगली खानहारे, पराई निंदा वा अपनी प्रशंसा करनहारे, मिथ्या मार्ग के पोषक, अन्याय के प्रवर्तक इत्यादि जीवनि विषैं अरति करै है। अन्याय के विषय विषैं वा अन्याय कषाय सामग्री वा विषय सामग्री, तिन विषैं, वा सप्त व्यसनादि विषैं वा सदोष वा अक्रिया करि निपजौ भोजनादि, खान-पान सामग्री, तिन विषैं वा मिथ्या मार्ग विषैं इत्यादिकनि विषैं अरति भाव करै है। ऐसा अप्रत्याख्यान अरति कषाय भाव जानना।

बहुरि अपने मानखंडादि विषैं, वा न्याय मार्ग तैं उल्लंघन भया होय, वा धर्म का उल्लंघन भया होय; तहां शोक करै है। इष्ट पुत्र, मित्र, स्त्री आदिक के वियोग विषैं भी मिथ्यात्व भाव रहित किंचित् काल शोक करै। साधर्मी गुरुजन के मरण विषैं, वा वियोग विषैं शोक करै। अपने धन, संपदादि, राज्यादि, विभूति वा अपने प्राण के जातां भी शोकवंत नाहीं होय है। इत्यादि अप्रत्याख्यान शोक कषाय भाव जानना।

बहुरि न्याय के उल्लंघन का तथा धर्म के उल्लंघन का है भय जिसकूं, वा पाप कार्य विषैं प्रवर्तन का, वा चतुर्गति संसार विषैं भ्रमण का है भय जाकूं, अर सप्त भय करि वर्जित होय, इस भव का नाहीं है भय जिनके, बहुरि पर भव संबंधी भी नाहीं है भय जिनकूं, बहुरि मरण का भी भय नाहीं, रोग का भी भय नाहीं, नाहीं है रक्षक कोई हमारा सो भय भी नाहीं, बहुरि धन-संपदा के चोर का भी भय नाहीं, अरु अकस्मात् भय भी नाहीं – ऐसा अप्रत्याख्यान भय कषाय भाव जानना।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि पर धन, पर स्त्री, वा अन्याय के कषाय वा अन्याय के विषय कार्यनि तैं है अहोठा भाव (ग्लानि) जिनकै, बहुरि पाप कार्यनि तैं, वा पापी पुरुषनि तैं मिथ्यात्व के पोषनहारे तिन विषैं धारैं हैं जुगुप्सा, वा पाप प्रवृत्ति विषैं वा पाप प्रवृत्ति के प्रवर्तनहारे विषैं, वा चतुर्गति संसार विषैं, अहोठा भाव कूं धारै हैं। बहुरि सदोष आहार वा अक्रिया करि जो निपजा भोजन, ताविषैं भी ग्लानि करै है। इत्यादि विषैं भी ग्लानि करै है, ऐसा जुगुप्सा का अप्रत्याख्यान कषाय भाव जानना।

बहुरि अपनी स्त्री सूं है रमने की वांछा जाकैं, वा अपनी स्त्री सहित रमण क्रीड़ा करै है; सो भी द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की योग्यता सहित रमै है, अति आसक्त होय मूर्छा भाव कों नाहीं धारै है। ऐसा पुरुष वेद अप्रत्याख्यान कषाय भाव जानना।

बहुरि अपने भर्तार सौं ही रमने की है वांछा जाकैं, सो भी द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव की योग्यता सहित रमै है। ऐसा अप्रत्याख्यान स्त्री वेद कषाय भाव जानना।

बहुरि नाहीं निपजै है स्त्री-पुरुष सों कार्यरूप रमने की वांछा जाकैं, ऐसा नपुंसकवेद अप्रत्याख्यान कषाय भाव जानना।

यह अप्रत्याख्यान कषाय का कथन सम्यक्त्व भाव कूं कारण ऐसै अप्रत्याख्यान कषाय के स्थानक, तिन विषैं उत्कृष्ट स्थानकनि की अपेक्षा किया है; जातैं इस कषाय के मन्द अर मन्दतर स्थानक उदासीन भाव कों भजैं हैं, तिन विषै तो बहु आरम्भ अरु बहु परिग्रह तैं उदासीन भाव प्रवर्तै है, देशसंयम अर सकलसंयम की है अभिलाषा जिनकैं, ते तो शनैः शनैः परिग्रह घटाय दे हैं, तहां राज्यादि बहु आरम्भ, बहु परिग्रह पाइये ही नाहीं।

ये अप्रत्याख्यान कषाय भाव वर्तमान तो दुःख ही के कारण हैं अर आगामी चारों गति के कारण हैं।

बहुरि अप्रत्याख्यान कषाय भाव, गुणस्थान तो मिश्र, असंयत दोनों विषैं ही प्रवर्तै है। अर मार्गणास्थान – **गति** – चार, **जाति** – पंचेन्द्रिय, **काय** – त्रस, **योग** – आहारकद्विक विना १३, **वेद** – ३, **कषाय** – २१, **सुज्ञान** – ३ (मति-श्रुत-अवधि) **संयम** – असंयम, **दर्शन** – चक्षु-अचक्षु-अवधि, **लेश्या** – ६, **भव्य** – १, अर **सम्यक्त्व** – औपशमिक-क्षायोपशमिक-क्षायिक ३, **संज्ञी** – १, **आहारक** – अहारक-अनाहारक २, इन विषैं प्रवर्तै है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रत्याख्यान कषाय का सामान्य स्वरूप

अब प्रत्याख्यान कषाय भाव प्ररूपण कीजिये हैं। अब अनंतानुबंधी अर अप्रत्याख्यान कषाय भाव सहित दोनों कषायों का तो भया है अभाव जाकैं, अरु प्रत्याख्यान सहित दोय कषाय का है उदय जाकैं, सो जीव सर्व सांसारिक विषय-कषाय कार्यनि तैं भया है उदास, परन्तु प्रत्याख्यान के उदय के जोर तैं सकल संयम कूं नाहीं ग्रहण कर सकै हैं। तातैं बहु आरम्भ, बहु परिग्रह का त्याग करि अल्पसा आरम्भ अरु अल्प सा परिग्रह प्रमाण सहित अंगीकार करै है। सो अल्पारम्भ, अल्प परिग्रह भी क्षुधादि रोग के अरु शीत-उष्णादि की निवृत्ति के अर्थ है; विषय सेवन के अर्थ नाहीं है। तहां तेरह प्रकार कषाय ऐसी अवस्था सौं प्रवर्तै है, सो ही कहिये हैं।

तहां प्रथम ही प्रत्याख्यान क्रोध कषाय भाव कहिये हैं – उद्यम करि त्रस स्थावर जीवनि की हिंसा के अर्थि क्रोध नाहीं करै है। अपने धन, प्राण की रक्षा के अर्थि क्रोध नाहीं करै है। कोई अपना लौकिक कार्य बिगाड़ दे है, तापर भी क्रोध नाहीं करै है। तो कहां क्रोध उत्पन्न होय है ? धर्म के बाधकनि विषैं, मिथ्यात्व के पोषकनि विषैं, चतुर्विध संघ कों कष्ट देनहारेनि विषैं इत्यादि धर्म पक्ष विषैं तो क्रोध उत्पन्न होय भी, अन्य लौकिक कार्यनि विषैं प्रत्याख्यान क्रोध की उत्पत्ति होय नाही, जातैं या कषाय के उदय में एकदेश जीव की शक्ति प्रगट होय है।

बहुरि प्रत्याख्यान मान कषाय भाव कहिये हैं – दूर भये हैं आठों ही प्रकार के मद जिनकें, अरु दूर भया हैं पर सों अदेखसा का भाव जिनकें, ताकरि बहुत प्रकार दूर भया है मान जिनकें, कोउक अल्प अंश मान के रहै है, ताकरि अपने देशसंयम भाव की रक्षा करै है। अनेक कष्ट, आताप आये भी कोई भी कष्ट निवारण की सामग्री काहू पास भी जांचै नाहीं। तथा अपनी हीनता काहु प्रकार भी प्रगट करै नाही। पैलो (दूसरा) चलाय आय उपकार करै ही है। कोई भी राजा-रंक सों आप कूं छोटा-बड़ा नाही मानै है। अपने पद कूं कोई प्रकार भी नीचा नाहीं दिखावै है। ऐसा प्रत्याख्यान मान कषाय भाव जानना।

बहुरि प्रत्याख्यान माया कषाय भाव कहिये हैं – सर्व प्रकार दूसरे कूं ठगने के अर्थि माया नाहीं करै है। कै तों अपने धन-प्राण की रक्षा के अर्थि कोई अवसर आय पड़ै तो माया करै, ना भी करै। वा अपना धर्म राखिने के अर्थि वा

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

धर्म के रक्षा के अर्थि वा चतुर्विध संघ की रक्षा के अर्थि वा पर जीवनि की रक्षा के अर्थि – इत्यादि कार्यनि के आश्रय माया कषाय भाव का सद्भाव है, और प्रकार नाहीं।

अब प्रत्याख्यान लोभ कषाय भाव कहिये हैं – जो आजीविका न्यायरूप प्रमाण सहित राखि है, ताहि विषैं न्यायरूप लोभ है। तिस मर्यादा को उलंघि लोभ नाहीं करै है वा अन्यायरूप लोभ नाहीं करै है। ना बनै तो अपना धन, प्राण, कुटुम्बादिक की रक्षा कौं भी लोभ करै हैं। अपने तथा पर के धर्म बधावने का भी लोभ है। अपने अपूर्व शास्त्र की सिद्धि का भी लोभ है – इत्यादि योग्य लोभ भाव पाइये है।

बहुरि अपने भावनि की विशुद्धता होते संते, श्री गुरु साधर्मी का संगम होते संते वा जिन धर्म की ब्रधवारी होते संतै वा शास्त्र के नवीन अर्थ की सिद्धि होते संतै – इत्यादि कार्यनि विषैं प्रसन्नता होय है, अन्य कार्यनि के विषैं प्रसन्नता न होय है। ऐसा प्रत्याख्यान हास्य भाव जानना।

बहुरि धर्म संबन्धी कार्यनि विषैं रतिभाव है, वा धर्म के धारकनि विषैं रतिभाव है, शास्त्र के अर्थ विषैं रतिभाव है, और ठौर रति भाव को अभाव है। ऐसा प्रत्याख्यान रति कषाय भाव जानना।

बहुरि सर्व सांसारिक कार्यनि सौं अरुचिता भजै है। वा धर्म के विध्वंसकनि विषैं वा मिथ्या धर्म के पोषकनि विषैं, इत्यादिकनि विषैं अरति भाव है। ऐसा प्रत्याख्यान अरति कषाय भाव जानना।

बहुरि धर्म कों विघ्न हौतै, वा साधर्मी को, वा चतुर्विध संघ कों उपद्रव होते संतै, वा गुरुजन साधर्मी का मरणादिक वियोग होतै संतै, वा अपने धर्म विषैं दोष लगते शोक होय है, और प्रकार शोक न होय है। इति प्रत्याख्यान शोक कषाय भाव जानना।

अपने संयम विषैं दोष लागने का है भय जिनकें, और प्रकार भय नाहीं प्रवर्तै है। ऐसा प्रत्याख्यान भय कषाय भाव जानना।

बहुरि सांसारिक सुख सौं है ग्लानि जिनकैं, वा मिथ्याधर्म सौं वा मिथ्याधर्म के धारकनि सौं, वा मिथ्याधर्म के पोषकनि सौं है अहोठा भाव जिनकैं – इत्यादि प्रत्याख्यान जुगुप्सा कषायभाव प्रवर्तै है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि मिट गये हैं सर्व काम विकार भाव जिनके, बुद्धिपूर्वक बार-बार कामचेष्टा नाहीं करै है। पुरुष वेद नामा मोहकर्म तीव्र उदय होय, तहां निज स्त्री का संबन्ध है तो विषय सेवन कदा काल उदासीन भाव युक्त करै भी अर जिनकें निज स्त्री का संबन्ध न होय, तो अपने सम्यग्यज्ञान भाव सौं काम कूं जीतैं, मंद पाड़े, तिनको फिर तीव्र उदय न होय। ऐसा पुरुष वेद प्रत्याख्यान कषाय भाव जानना।

बहुरि जे देश संयम कूं धारैं हैं, ऐसी जो कोऊ महाभाग्य स्त्री, तिनके स्त्रीवेद नामा मोह कषाय का तीव्र उदय होय, अरु निज भरतार का संबंध होय, तो भरतार की इच्छापूर्वक विषय सेवन होय। अरु जिनकें भरतार का संबन्ध नाहीं, तिनके स्त्री वेद का तीव्र उदय होय नाहीं, जातैं परिणाम जिनके अति विशुद्ध हैं, सो ही है वेद के जीतने का कारण जिनकों, ऐसा स्त्री वेद प्रत्याख्यान कषाय भाव जानना।

बहुरि नपुंसक वेद का है उदय जिनकैं, ऐसे प्रत्याख्यान कषाय भाव सहित पंचम गुणस्थानवर्ती देश संयमी जीव, तिनकैं भावनि की अति विशुद्धता थकी बुद्धिपूर्वक नपुंसक वेद के उदय का अभाव है। ऐसा प्रत्याख्यान नपुंसक वेद कषाय भाव जानना।

इत्यादि कथन किया, सो देश संयम योग्य स्थानक प्रत्याख्यान कषाय के असंख्यात लोक प्रमाण स्थानक हैं। तिन विषैं उत्कृष्ट अनुभाग सहित स्थानकनि के उदय की अपेक्षा कथन किया है। जातैं देश संयम के घातक सर्वघाती प्रत्याख्यान कषाय के असंख्यात लोक प्रमाण स्थानक तो अनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यान कषाय की लार ही उदय के अभाव कूं प्राप्त भये हैं। तिनका तो यहां उदय ही नाहीं। अरु मंद अनुभाग सहित उदय स्थाकन का उदय होतैं कार्य का सद्भाव होय नाहीं। बहुरि मंदतर स्थानकनि का उदय विषैं बुद्धिपूर्वक भी प्रत्याख्यान का भाव होता नाहीं, केवलीगम्य ही भाव होय हैं। तातैं कार्यरूप भाव तीव्र अनुभाग सहित उदय स्थानकनि विषैं ही होय हैं, तातैं दूसरी व्रत प्रतिमा विषैं देश संयम योग्य तीव्र स्थानकनि का उदय है।

बहुरि तीसरी सामायिक प्रतीमा सूं लगाय अष्टम आरंभ त्याग प्रतिमा पर्यन्त मंद अनुभाग सहित स्थाकन के उदय हैं। अरु परिग्रह त्याग नवमी प्रतिमा

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तैं लगाय दशमी एकादशमी प्रतिमा विषैं मंदतर अनुभाग सहित स्थानकनि का उदय जानना। यह प्रत्याख्यान कषाय भाव वर्तमान तौ दुःख ही के कारण हैं, अरु आगामी देवगति के कारण हैं।

बहुरि प्रत्याख्यान कषाय का गुणस्थान तो एकदेश संयम ही है। पंचम गुणस्थान विषैं ही प्रत्याख्यान कषाय भाव वर्तै है। अरु मार्गणास्थानकनि विषैं **गति** – मनुष्य-तिर्यंच, **जाति** – पंचेंद्रिय, **काय** – त्रस, **योग** – ९ चार मनोयोग, चार वचन योग, औदारिक काय **योग, वेद** – ३, **कषाय** – अनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यान आठ बिना १७, **ज्ञान** – सुज्ञान ३ (मति, श्रुत एवं अवधि) **संयम** – देशसंयम १, **दर्शन** – चक्षु, अचक्षु, अवधि; **लेश्या** – शुभ ३ (पीत, पद्म, शुक्ल) **भव्य** – १, **सम्यक्त्व** – ३ (औपशमिक, क्षायोपशमि, क्षायिक) **संज्ञी** – १, **आहारक** – १, इन विषैं प्रवर्तै है।

संज्वलन कषाय का सामान्य स्वरूप

अब संज्वलन कषाय भाव प्रारंभ करते हैं। तहां सकल संयम के घातक संज्वलन कषाय के सर्वघाती स्थानकनि का तो अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान कषायनि की लार ही उदय का अभाव भया, अरु जहां मंद अरु मंदतर अनुभाग कों धरैं ऐसे स्थानकनि का जिन जीवनि के उदय होय, ते जीव सकल संयम कूं अङ्गीकार करैं हैं। तिन स्थानकनि विषैं उत्कृष्ट स्थानकनि का तो प्रमत्त जो षष्ठम गुणस्थान, ता विषैं ही उदय है, तहां किंचित् प्रमाद उपजै है। तहां आहार-विहारादि कार्यरूप प्रवर्तै है। तहां चारित्र का कारण जो शरीर, ताकी रक्षा के अर्थि तो आहारादि रूप प्रवृत्ति करै है। बहुरि मोह के अभाव कै अर्थि वा तीर्थयात्रा वा गुरु-पूजनादि कै अर्थि विहारादि रूप प्रवृत्ति करै। जिनमत के प्रवर्तन के अर्थि वा जीवनि के उपकार निमित्त उपदेशादि प्रवृत्ति करै है। बहुरि इन ही प्रवृत्तिनि विषैं पंचाचार वा अट्ठाईस मूलगुणादिरूप प्रवर्तै है। इन त्रयोदश प्रकार संज्वलन कषाय विषैं केई कषाय कार्यरूप होय भी प्रवर्तै है।

बहुरि सप्तम गुणस्थान सौं लेय सूक्ष्म साम्पराय दशम गुणस्थान पर्यन्त तेरह कषायनि का यथा संभव मंद अरु मंदतर स्थानकनि का उदय है। तहां कार्यरूप वा बुद्धिपूर्वक इन कषायनि का उदय ही नाहीं। अति मंद प्रमाद उपजावने की

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

शक्ति रहित अबुद्धिपूर्वक उदय होय है। ऐसा इन संज्वलन कषायनि का संक्षेपरूप कथन किया।

यह संज्वलन कषाय भाव वर्तमान तो दुःख ही का कारण है। अरु आगामी देव गति को कारण है। बहुरि संज्वलन कषाय भाव प्रमत्त, अप्रमत्त, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्म साम्पराय, इन पांच तो गुणस्थानकनि विषैं प्रवर्तै है। बहुरि मार्गणानि विषैं **गति** – मनुष्य, **जाति** – पंचेन्द्रिय, **काय** – त्रस, **योग** – मनोयोग४, वचनयोग४, औदारिक काय योग, आहारक, आहारकमिश्र, **वेद** –३, **कषाय** – १३, **ज्ञान** – केवल बिना ४ (मति, श्रुत, अवधि, मनः प्रर्यय) **संयम** – सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहार विशुद्धि, सूक्ष्मसाम्पराय। **दर्शन** – चक्षु, अचक्षु अवधि, **लेश्या** – ३ पीत, पद्म, शुक्ल। **भव्य** – १, **सम्यक्त्व** – ३ औपशमिक, क्षायोपशमिक, क्षायिक, **संज्ञी** – आहारक, इन मार्गणा विषैं प्रवर्तै है। ऐसे इन चार कषाय भावनि का निरूपण किया। सो ये भाव हेय जानि तजने।

इति श्री भावदीपिका ग्रंथ के औदयिक भाव विषैं तीसरा कषाय भाव अंतराधिकार समाप्त हुआ।

कषाय भावों से.........

तथा जब इसके कषाय का उदय हो, तब कषाय किये बिना रहा नहीं जाता। बाह्य कषायों के कारण मिलें तो उनके आश्रय कषाय करता है, यदि न मिलें तो स्वयं कारण बनाता है। जैसे व्यापारादि कषायों का कारण न हो तो जुआ खेलना व क्रोधादिक के कारण अन्य अनेक खेल-खेलना, दुष्ट कथा कहना-सुनना इत्यादि कारण बनाता है। तथा काम-क्रोधादि पीडा करें और शरीर में उनरूप कार्य करने की शक्ति न हो तो औषधि बनाता है। और अन्य अनेक उपाय करता है। तथा कोई कारण बने ही नहीं तो अपने उपयोग में कषायों के कारणभूत पदार्थों का चिंतवन करके स्वयं ही कषायोंरूप परिणमित होता है। इस प्रकार यह जीव कषाय भावों से पीड़ित हुआ महान दुःखी होता है।

– पं. टोडरमल, मोक्षमार्ग प्रकाशक : तीसरा अधिकार

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

लेश्या भाव अंतराधिकार

(दोहा)

लेश्या अशुभ मिटाय कें, शुभ लेश्यामय होई ।
कर्म मल्ल क्षय कर नमूं, ठये अलेश्या सोई ।।

अब लेश्या भावाधिकार प्रारंभ करते हैं – कषाय रंजित योगनि की प्रवृत्ति का नाम लेश्या है, जातैं आत्मा कूं कर्मनि सैती लिप्त करैं ऐसे योग अर कषाय; तातैं इनका नाम लेश्या है । नाम कर्म के उदय तैं द्रव्य मन, द्रव्य वचन, द्रव्य काय, निपजें हैं । तिनकी चेष्टा कहिये प्रवृत्ति होते संतें आत्मा के प्रदेश चंचल होय हैं । प्रदेश चंचल होतें कर्म के ग्रहण की शक्ति निपजै है । ताकरि कर्म वर्गणानि का ग्रहण होयहै। आत्मा के प्रदेशों से एक क्षेत्रावगाह संयोग होय है । तातैं इनका नाम योग है । इन योगन की कषाय सहित प्रवृत्ति, ताकौं लेश्या कहिये । ऐसा लेश्या का स्वरूप है, सो ही शास्त्रनि विषैं कह्या है ।

बहुरि योग कषायनि की प्रवृत्ति तीव्र, मध्य, मंद, मंदतर इन चार प्रकार होय है । ताकै अनुसार आत्मा पंच पापरूप कार्य विषैं प्रवर्तै है । हिंसा, अनृत, (असत्य) स्तेय, अब्रह्म, परिग्रह – विषय-तृष्णा इन पंच पापरूप जो तीव्र, मध्य, मंद, मंदतर, कार्य; ताके अनुसार कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म, शुल्क ऐसे दृष्टान्त पूर्वक लेश्या के छह नाम कहे हैं ।

बहुरि कषाय चार प्रकार है – क्रोध, मान, माया, लोभ ।

सो ये क्रोधादि कषाय उत्कृष्ट अनुभाग कों धरैं उदय होय हैं; तब आत्मा उत्कृष्ट पंच पाप मन, वचन, काय करि करै है, तहां तिस भाव का नाम कृष्ण लेश्या कहिये, तातैं ये कषाय भाव महा पापरूप हैं, तातैं इनकों कृष्ण लेश्या कहिये ।

बहुरि जहां क्रोधादि कषाय मध्य अनुभाग कौ धरैं उदय होंय हैं; तब आत्मा मन, वचन, काय करि किछु घाटि पंच महापाप करै है । तहां तिस भाव का नाम नील लेश्या है । जातैं ये कषाय भाव कृष्ण लेश्या सों किछु घाटि महा पापरूप हैं, तातैं याकौं नील कहिये ।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जहां क्रोधादि कषाय तासौं भी नीचला मध्य स्थानकनि विषैं मध्य अनुभाग कौं धरैं उदय होय हैं, तब आत्मा मन, वचन, काय करि जघन्य पंच पाप करै है। तहां आत्मा का किछु ज्ञान चमकै है। जैसे कापोत कहिये कबूतर, ताकी पंख काली हैं; तथापि ता विषैं सफेदी का अंश चमके है। तैसैं जो ज्ञान पंच पाप रूप कालिमा सहित है; तैसैं आत्मा का ज्ञान अंश चमके है; तथापि पंच पापरूप कालिमा सहित है, किछु कार्य कारी नाहीं, तातैं याकौं कापोत लेश्या कहिये।

बहुरि जहां क्रोधादिक कषाय मंद अनुभाग कौं धरैं उदय होय, तब आत्मा मन, वचन, काय करि पंच पाप मंद करै है। तहां किछु धर्मानुराग युक्त होय, तिस भाव का नाम पीत लेश्या कहिये।

बहुरि जहाँ क्रोधादि कषाय अति मंद अनुभाग कौं धरैं उदय होय, तब आत्मा मन, वचन, काय करि पंच पापनि कौं अति मंद करै है। तहाँ किछु अधिक हीन त्याग भाव प्रवर्तै है। तहां तिस भाव का नाम पद्म लेश्या कहिये।

बहुरि जहां क्रोधादि कषाय मंदतर अनुभाग कौं धरैं उदयरूप होय, तब आत्मा बुद्धि पूर्वक पंच पापनि कूं नाहिं करै है। सर्व लौकिक कार्यनि विषैं उदासीन भाव धरै है। तहां आत्मा के तिस भाव कौं शुक्ल लेश्या कहिये।

अर क्रोधादि चार कषाय चार प्रकार होय प्रवर्तै हैं। अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ; अप्रत्याख्यान क्रोध, मान, माया, लोभ; प्रत्याख्यान क्रोध, मान, माया, लोभ; संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ – ऐसे सोलह भेद कषाय भाव के भये।

जहाँ अनंतानुबंधी सहित अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान, संज्वलन कषाय प्रवर्तैं हैं; तहां कृष्णादिक छहों लेश्या पाइये हैं, सो लेश्या अनंतानुबंधी की कहिये। तहाँ कृष्णादि एक-एक लेश्या क्रोधयुक्त कृष्ण लेश्या, मानयुक्त कृष्ण लेश्या, मायायुक्त कृष्ण लेश्या, लोभयुक्त कृष्ण लेश्या ऐसे – एक-एक के चार-चार प्रकार हैं। ऐसे अनंतानुबंधी विषैं लेश्या के चौबीस भेद भये। तैसें ही अप्रत्याख्यान कषायनि विषैं कृष्णादि छहों लेश्या पाइये हैं, तातैं अप्रत्याख्यान विषैं भी चौबीस भेद हैं। बहुरि प्रत्याख्यान वा संज्वलन कषायनि विषैं पीत, पद्म, शुक्ल ये तीन लेश्या ही पाइये है। तातै इन विषैं क्रोध, मान, माया, लोभ करि १२–१२ भेद हैं। ऐसे लेश्या भाव के ७२ भेद भये।

बहुरि लेश्या के असंख्यात लोक प्रमाण भेद हैं। जातैं कषायनि के उदय स्थानक असंख्यात लोक प्रमाण हैं; ते ही लेश्या के स्थानक जानने।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

लेश्या का स्वरूप, लक्षण तथा कार्य

अब कहे जे लेश्या के बहत्तर भेद तिनका स्वरूप, लक्षण, कार्य, फल इत्यादि निरूपण कीजिये हैं। प्रथमहिं अनंतानुबंधी के चौबीस भेद कहिये हैं।

अनंतानुबंधी कषाय अपेक्षा लेश्या

तिनहिं विषैं अनंतानुबंधी की कृष्ण लेश्या कहिये हैं – कृष्ण लेश्या वाला जीव अतिप्रचंड क्रोधी होय, बैर न छोड़े। भिड़ने का तथा लड़ने का जाका सहज स्वभाव होय, झूंठ वचन बोले; बहुरि दयाधर्म करि रहित होय। अदेखसका भाव बहुत होय, पराया पुण्य उदय तथा पुण्य सामग्री कूं देखि न सकै। बहुत छल-बल करि युक्त होय, ताकरि किसी के बसि न होय। निःशंक होय, स्वच्छन्द होय। कोई का कह्या न माने, वा ज्ञान-चातुर्य करि रहित होय। क्रिया रहित, दया रहित, अशुद्ध, निःशंक जाका खान-पान होय। सप्त व्यसननि विषैं आसक्त होय, स्पर्शादि पांच इन्द्रियनि के विषयनि विषैं अति लंपट होय, बहुत मानी होय, पैले का (दूसरे का) मान भंग करै, अपना मान पोषै, बहुत मायावी होय, बहुत लोभी होय, पराये धन-संपदा हरने की जाकैं शाश्वती वांछा रहै। बहुत कामी होय, पराई स्त्री सौं विषय सेवन की वा हरने की जाकैं सदा काल वासना रहै। पूर्वापर विचार रहित होय, मूर्ख होय, क्रिया करि भ्रष्ट होय, जाकै अभिप्राय को और न जानैं। पंच पाप जे हिंसा, झूंठ, चोरी, कुशील, परिग्रह इनके करने की सदा काल वांछा प्रवर्तै इत्यादि लक्षण करि युक्त होय। बहुरि बड़े पंच पाप के कार्य रूप प्रवर्तै। लोभ के अर्थि वा मान के अर्थि, विषय के सेवन के अर्थि, वा बिना प्रयोजन ही हिंसा करनी, मनुष्य कूं मारना, तिर्यंच विनाशना, गैला मारना, संग्राम करना, मरना, मारना, अपघात करना, परघात करना, अनेक प्रकार जीवनि कों दुःख देना, सताना, वा अनेक प्रकार अन्यायरूप हिंसा का कारण आरम्भ करना – इत्यादि हिंसा महा पाप करना।

बहुरि अनेक प्रकार झूंठ बोलना, बहुरि चोरी करना, अंड़ा देना, धाड़ा देना, गैला लूटना, पराये घर सूं वस्तु आदि उठाय लावना, भीले मारना (?) रकम चुराना, परस्त्री तथा पर पुत्रादिक हर लावना, जोरावरी करि खोंस लेना, पराय

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

धन खोंस लेना – इत्यादि चोरी करनी। पर स्त्री सौं विषय सेवना, बहुरि हिंसा, झूठ, चोरी करना और अनेक प्रकार अन्याय करि पाप करि परिग्रह का संग्रह करना इत्यादि पंच पाप क्रोध युक्त होय करि निःशंक करना। वा मायाचारी करना, तहां – अन्याय रूप पंच पाप निःशंक करना, वा पैला पास करावना, वा पंच पाप करनेवाले की सराहना करना, प्रसन्न होना – इत्यादि महा पाप रूप अनंतानुबंधी की कृष्ण लेश्या जानना।

बहुरि अन्य धर्म बुद्धि पंडित की ईर्षा करि ताका अपमान करने के अर्थि, वा अपना मान पोषने के अर्थि वा लोभादि के अर्थि, शास्त्र का अर्थ अन्यथा करना, झूठा उपदेश देना, मिथ्या शास्त्र बनावना, अन्य कृत शास्त्र विषैं अपना अभिप्राय पोषना, श्लोक-काव्यादि मेलना – इत्यादि कार्य करि भव-भव विषैं जीवनि का घात करना, आपका घात करना, आपके-परके पंच पापनि की संतति खड़ी करनी; सो भी महापाप का मूल अनंतानुबंधी की कृष्ण लेश्या जाननी।

बहुरि जिन-मंदिर में रहना, स्त्री आदिन सों विषय करना, सोवना, भोजनादि करना, पंच इंद्रियनि का विषय सेवन करना, सप्त व्यसन सेवना, झगड़ा करना, संग्राम करना, विवाहादि कार्य करना, अपने तिर्यंचादिकनि कूं मंदिर में बांधना, अपना धन-धान्यादि सामग्री मंदिर में धरनी। बहुरि देव-गुरु-धर्मादिक का अविनय करना, निर्माल्य द्रव्य खाना, जिन-मंदिर का द्रव्य चुराकर ले जाना; सो भी अनंतानुबंधी कृष्ण लेश्या जाननी – इत्यादि अनंतानुबंधी की कृष्ण लेश्या के पंच पापनिरूप कार्य जानना। ऐसैं पंच पापनिरूप मन, वचन, काय की प्रवृत्ति क्रोध की वासना सहित प्रवर्तै हैं, वा क्रोध सहित प्रवर्तै, सो अनंतानुबंधी की क्रोधयुक्त कृष्ण लेश्या कहिये।

बहुरि जो मान की वासना सहित प्रवर्तै, वा मान सहित प्रवर्तै है; सो अनंतानुबंधी की मानयुक्त कृष्ण लेश्या कहिये।

बहुरि जो माया की वासना सहित प्रवर्तै, वा माया सहित प्रवर्तै; सो अनंतानुबंधी की मायायुक्त कृष्ण लेश्या कहिये।

बहुरि जो लोभ की वासना सहित प्रवर्तै, वा लोभ सहित प्रवर्तै है; सो अनंतानुबंधी की लोभयुक्त कृष्ण लेश्या कहिये।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अब अनतानुबंधी की नील लेश्या कहिये हैं – नील लेश्या वाले के सर्व लक्षण कृष्ण लेश्या वाले के लक्षणवत् समान जानने। विशेष इतना कि नील लेश्या वाला आलसी होय, निद्रा जाकैं बहुत होय, दूसरे के ठगना जाकैं बहुत होय, कुटुम्ब विषैं जाकैं स्नेह बहुत होय, पंच इंद्रियनि के विषयनि विषैं अति आसक्त होय, तथा धन-धान्यदिक विषैं अति आसक्त होय, ताकी रक्षा विषैं तत्पर होय, भय करि युक्त होय, बहुरि पच्चीस विकथा विषैं आरूढ़ होय।

तहां पच्चीस विकथा के नाम – १. स्त्री कथा २. अर्थ कथा – धनादिक की कथा ३. भोजन कथा ४. राज कथा ५. चोर कथा ६. बैर करनहारी बैर कथा ७. पराया खंडन रूप पराई खंड कथा ८. देश कथा ९. भाषा-कहानी आदि कथा १०. पराया गुण प्रकट न होय ऐसी गुण बंध कथा ११. धियाड़ी, शीतला, चंडी, मुंडी आदि की कथा सो देवी कथा १२. कठोर वचनरूप निष्ठुर कथा १३. दुष्टता रूप पर पैशुन्य कथा १४. कामादिरूप कंदर्प कथा १५. देश-काल विपरीत सो देश-कालानुचित कथा १६. निर्लज्जता रूप सो भंड कथा १७. मूर्खतारूप सो मूर्ख कथा १८. अपनी बड़ाईरूप सो आत्म प्रशंसा कथा १९. पराई निंदारूप सो परपरिवादक कथा २०. पराई घृणारूप सो पर जुगुप्सा कथा २१. पर कों पीड़ा देनहारी रूप सो पर पीड़ा कथा २२. लड़नेरूप सो कलह कथा २३. परिग्रह कार्यरूप सो परिग्रह कथा २४. खेती का आरम्भरूप सो कृष्यारंभ कथा २५. नृत्य-संगीत-वादित्रादिरूप संगीत-वादित्रादि कथा।

इत्यादि विशेष नील लेश्या वाले विषैं और प्रवर्त्तै हैं, तातैं कृष्ण लेश्या वालों की अपेक्षा याको पंच पापनि विषैं कषाय भी थोड़ा लागै है; तातैं पंच पापनि रूप याके कार्य भी किछू हीण होय हैं; यातैं याको नील लेश्या कहिये हैं।

बहुरि आजीविका के निमित्त नाना प्रकार खोटा भेष धारना, तहां पंचेद्रियनि के विषय पोषनें, धन-संचय करना, दश प्रकार परिग्रह राखना, आपको पूज्य मानना, बलात्कारै पुजावना, जो भक्ति करै तासौं संतुष्ट होना, ना करै तासों द्वेष करना वा लोभ के अभिनिवेश सहित धर्म प्रवृत्ति करनी – इत्यादि कार्य करना, सो भी नील लेश्या जाननी।

इत्यादि कार्य अन्याय वा पांच पाप सहित जहां मन, वचन, काय करि वा कृत, कारित, अनुमोदना करि क्रोध की वासना सहित वर्तै, वा क्रोध सहित वर्तै, सो अनंतानुबंधी की क्रोधयुक्त नील लेश्या कहिये।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जहाँ मान के अभिनिवेश सहित वा मान सहित वर्तै, तहां अनंतानुबंधी की मानयुक्त नील लेश्या कहिये।

बहुरि जहां माया के अभिनिवेश सहित वा माया सहित प्रवर्तै, सो अनंतानुबंधी की मायायुक्त नील लेश्या कहिये।

बहुरि जहाँ लोभ की वासना सहित प्रवर्तै वा लोभ सहित प्रवर्तै; सो अनंतानुबंधी की लोभयुक्त नील लेश्या कहिये।

अब अनंतानुबंधी की कापोत लेश्या कहिये हैं – निरर्थक पैला (दूसरे के) ऊपर क्रोध किया करै, पैला की बहुत प्रकार निंदा करै, पैला ने बहुत प्रकार दुखावै, शोक जाकैं प्रबल होय, भय जाकैं बहुत होय, अदेखसका भाव जाकैं बहुत होय, पैला की पुण्य सामग्री वा पैला का पुण्य उदय सुहावैं नाहीं, पैला का अपमान करना, अपनी बड़ाई करनी, किसी का विश्वास न करना अरु अपनी कोई वाजवी निंदा करै तो भी न सुहावैं, जो कोई अपनी बड़ाई करै तापर संतुष्ट होय अपनी-पराई हानि-वृद्धि न समझै, युद्ध विषैं मरण कूं चाहै, अपनी प्रशंसा करने वाले कों बहुत धन देना, जस-बड़ाई के अर्थ धन खरचना, विवाहादिक कार्यनि के विषैं बहुत धन खरचना, शरीरादिक की रक्षा के अर्थि वा बल-पराक्रमादिक के अर्थि धन खरचना, जस-बड़ाई के अर्थि संग्राम विषैं युद्ध करना, मरना, मारना, मानादिक के अर्थि अपघात करना, जस-बड़ाई के अर्थि दान देना, जस-बड़ाई मानादिक के अर्थि पूजा करना, प्रतिष्ठा करना, जिन-मंदिर बनवाना, तीर्थयात्रा करनी, शील पालना, संयम धारना, तप करना, शास्त्राभ्यास करना – इत्यादि धर्मकार्य करना। कार्य-अकार्य कों न जानै, हेय-उपादेय कों न जानै, न्याय-अन्याय तथा पांचों इंद्रियनि के विषयनि विषैं अति आसक्त रहै, तिनके अर्थि बहुत धन खरचै, सप्त व्यसन सेवै, तहां बहुत धनादिक लगावै, बहुरि अनेक प्रकार नृत्यादि कौतूहल करना-कराना, कौतूहल देखने विषैं आसक्त रहना, अपने पुण्य उदय विषैं बहुत मग्न रहना, वा अपने आजीविका के कार्यनि विषैं मग्न रहना, आसक्त रहना, परलोक के अर्थि धर्म की वासना ही न धरनी, धनादिक उपजावने कों वा आजीविकादिक उपजावने कों, वा विवाहादिक कार्य वा विषयादिक कार्यनि के अर्थि बहुत वांछा सहित अहर्निश निःशंक संकल्प-विकल्प किया करै। लौकिक कार्यनि के आश्रय पैला का (दूसरे का) जस करना, बड़ाई करनी। बहुरि स्त्री-पुत्रादिक जे कुटुम्ब, तिनसों अधिक स्नेह करना, पुत्रादिकनि को शृंगार करना, स्त्री कों शोभा

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सहित राखणी, आप शोभा सहित रहना, हवेली बनवानी, बाग बनवाना, कूवा, तालाब, कुंड बनवाना – इत्यादि कार्यनि विषैं क्रोधादि कषाय जघन्य होय प्रवर्तें, तिनके अर्थि पंच पाप जघन्य सेवन करै, सो कापोत लेश्या कहिये।

तहां ए कहे कार्य, ते वा इनके अर्थि पंच पाप, तहां क्रोध सहित होय, सो अनंतानुबंधी की क्रोधयुक्त कापोत लेश्या है।

अर जहां मान सहित होय, सो अनंताबंधी की मानयुक्त कापोत लेश्या कहिये।

अर जहां माया सहित होय, सो अनंतानुबंधी की मायायुक्त कापोत लेश्या कहिये।

अर जहां लोभ सहित होय, सो अनंतानुबंधी की लोभयुक्त कापोत लेश्या कहिये।

अब अनंतानुबंधी की पीत लेश्या कहिये हैं – मंद भये हैं क्रोधादि कषाय भाव जाकैं, अर नहीं है उद्यम करि पंच पाप करने की वांछा जाकैं, अर उपजा है पर भव संबन्धी नरकादिकनि का दुःख का भय जाकैं, अर उत्पन्न भई है पर भव संबंधी स्वर्गादिकनि के विषैं विषयनि की चाह जाकैं, वा तिनही के हेत कार्य-अकार्य कों विचारै है, हेय-उपादेय को विचारै है, सेवन योग्य तथा न सेवने योग्य का ज्ञान करै है, जाकूं पुण्यरूप सुकार्य जानै, ताकूं तो करै अर जाकूं पापरूप अकार्य जानै, सो न करै। जाकूं त्यागने योग्य जानै, ताकूं त्यागै अर जाकूं उपादेय जानै, ताकों ग्रहण करै अर जाकूं सेवन योग्य पदार्थ जानै, ताकूं सेवै; न सेवने योग्य होय, ताकूं न सेवै। सर्व विषैं समदर्शी होय। काहू सो द्वेष भाव व ईर्षा भाव नाहीं करै है। सर्व जीवनि पर दया भाव राखै। बहुरि कषाय रहित परलोक के अर्थि दुखित-भुखित जीवों की रक्षा करै। जिनकों पूज्य मानै, तिनकों दान देय; मन, वचन, काय, जाका मद रहित कोमल होय; मन तो जाका पाप के विचार रहित होय, अर वचन जाका मिष्ट होय, काय जाकी विनय युक्त होय, नरकादिक के दुःख सों डरि छोड़े हैं पंच पाप अर सप्त व्यसनादिक जानै, बहुरि स्वर्गादिक के सुख के अर्थ करे हैं जिनभाषित दान-पूजादिक षट् आवश्यक जानै, तथा मंद भये हैं चारों ही कषाय जाकै, बहुरि आपकूं प्राप्त भये जे पंच इंद्रियनि के भोग, तिनकूं पंच पाप रहित वा हठ रहित मगन होय आसक्त होय न सेवै है, कौतूहलादि करि प्रसन्न रहै, पराये धनादि भोग सामग्री देखि अदेखसका भाव नाहीं करै है, इच्छा नाहीं करै है, कौतूहलादिक के निमित्त

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

वा दुखित जीवनि के निमित्त वा सम्यक्त्व संयमादि के धारक जीवनि के दुःख निवारण के अर्थि दुष्टनि कों दुःख भी देय, संग्राम भी करै – इत्यादि भाव पीत लेश्या के हैं।

सो ये कार्य जहां दुःख सों खुणास (भय) खाय सांसारिक सुख के अर्थि धर्म कार्य करै, सो क्रोध के अभिनिवेश सहित होय वा क्रोध सहित होय, सो अनंतानुबंधी की क्रोधयुक्त पीत लेश्या कहिये।

अर जहां मान के अभिनिवेश सहित होय वा मान सहित होय, सो अनंतानुबंधी की मानयुक्त पीत लेश्या कहिये। यहां स्वर्गादिक विषैं अपना मान बधावने का अभिप्राय जानना।

अर जहां माया सहित होय तहां माया कहिये। एक तो स्वजन-परजन के भय थकी धर्म कार्य दानादिक तें प्रच्छन्न – गुप्त करै अर चौड़े और भांति करै। बहुरि एक माया अंतरंग तो स्वर्ग की चाह सहित अभिप्राय कों धारै है, अर मुख थकी मोक्ष के अर्थि विस्तारै, सो अनंतानुबंधी की मायायुक्त पीत लेश्या कहिये। यहां स्वर्गादिक विषैं अपने विषय सेवने का अभिप्राय जानना।

अर जहां लोभ के अभिनिवेश सहित होय वा लोभ सहित होय, सो अनंतानुबंधी की लोभयुक्त पीत लेश्या कहिये, इहां स्वर्गादिक के सुख का लोभ जानना।

अब अनंतानुबंधी की पद्म लेश्या कहिये हैं -- परभव विषैं नरकादिक संबंधी दुःख निवारण के अर्थि अर स्वर्गादिक के सुख के अर्थि त्याग दिये हैं एकदेश, सर्वदेश विषय सुख जानैं (जिसने), त्याग दिये हैं एकदेश, सर्वदेश सांसारिक कषाय के कार्य जानैं; अर उपशम गये हैं क्रोध, मान, माया, लोभ व छह हास्यादिक वा तीन वेद ऐसें तेरह कषाय जाकैं; बहुरि भले-पुण्य कार्य करने का ही है परिणाम जाकैं, अर शुभ कार्यनि के करने रूप ही है उद्यम जाकैं। बहुरि अणुव्रत, महाव्रत का जाकैं ग्रहण होय; अत्यंत कष्टरूप जो परिषह आप के प्राप्त होय, तिनकों समभाव सों सहै। बहुरि मुनिजन तथा गुरुजन की सेवा विषैं प्रीतिवन्त होय – इत्यादि भाव पद्म लेश्या के जानने।

बहुरि मिलै भोगनि को भोगवै है, आसक्तता नाहीं धारै है। किसी कों दुःख नाहीं देय है, किसी कों सतावै नाहीं है, चंचलता रहित धीर है मन जिनका, तथा कृपणता रहित उदार है चित्त जिनका, बहुरि अलभ्य सामग्री की वांछा नाहीं करै है, परोपकार करने विषैं तत्पर है, गुण ही का है ग्रहण जिनके, किसी का दोष ग्रहण कर पराई निंदा नाहीं करै है, किसी के पास हीनता नाहीं करै है – इत्यादि भाव पद्म लेश्या के हैं।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

जहां क्रोध सहित कषाय अति मंद होय प्रवर्तै, तहां पद्म लेश्या कहिये। सो ए भाव जहां सांसारिक दुःख सौं खुणास (भय) खाय, तहां पैदा होय है; वा जहां क्रोध सहित प्रवर्तै; तहां अनंतानुबंधी की क्रोधयुक्त पद्म लेश्या कहिये।

अर जहां स्वर्गादिक विषैं मान बधावने के अर्थि होय वा इन भावनि विषैं जिस काल मान वर्तै; सो अनंतानुबंधी की मानयुक्त पद्म लेश्या कहिये।

बहुरि जहां ए भाव प्रवर्तै तो हैं, परन्तु अंतरंग स्वर्गादिक के सुख के अर्थि अर मुख थकी मोक्ष के अर्थि कहना वा जिस काल माया कषाय सहित प्रवर्तै; सो अनंतानुबंधी की मायायुक्त पद्म लेश्या कहिये।

बहुरि जहां स्वर्गादिक के लोभ की वासनायुक्त होय वा तिस काल लोभ कषाय सहित होय; सो अनंतानुबंधी की लोभयुक्त पद्म लेश्या कहिये।

अब अनंतानुबंधी की शुक्ल लेश्या कहिये हैं – नहीं है इस भव संबंधी सुख-दुःख विषैं हरष-विषाद जाकैं, अर नहीं है पर भव संबंधी दुःख का भय अर सुख की वांछा जाकैं, अर सम भाव की प्राप्ति भई है अर मिट गये हैं त्रयोदश प्रकार कषाय जाकैं, अर मिट गया है पुत्र-कलत्रादिक सों स्नेह भाव जाका, अर नहीं करै है पक्षपात काहू सौं, अर नहीं करै है पराई निंदा वा प्रशंसा, अर समान हैं बैरी-मित्र, सुख-दुःख राजा-रंक, रत्न अर ठीकरी जाकैं, अर समान है जीवो अर मरवो इत्यादि जाकैं, अर नहीं है, इष्ट-अनिष्ट पदार्थनि विषैं राग-द्वेष जाकैं, अर धारै है शील, व्रत, तप, संयम, अणु-व्रत, महाव्रतादिक बुद्धिपूर्वक जानैं, तिनकौं भली-भांति निःशंकता सहित समभाव सों पालै है। नहीं लगावैं हैं दोष जिनकौं, अर नहीं है इस भव, पर भव संबंधी इष्ट-अनिष्ट पदार्थनि सों राग-द्वेष जाकैं – इत्यादि भाव शुक्ल लेश्या के हैं।

बहुरि जहां भले भोगनि विषैं अति मंद राग प्रवर्तै है, भोगनि के उपार्जन करने की उपाय करि नाहीं है वाँछा जिनकी, अर अति निश्चल है मन, वचन, शरीर की चेष्टा जिनकी, अर नाहीं प्रवर्तै है अष्ट प्रकार मद विषैं कोई भी मद जिनकै, अर नाहीं प्रवर्तै है कोई भी हीणता जिनकैं, अर सप्त भय करि वर्जित है चित्त जिनका, अर गुण विषैं ही है राग अर ग्रहण जिनकैं – इत्यादि भाव शुक्ल लेश्या के हैं।

अर जहां क्रोधादिभाव अति मंद होय प्रवर्तै, तहां शुक्ल लेश्या कहिये।

अर जहां इन भावनि विषैं जिस समय क्रोध प्रवर्तै, सो अनंतानुबन्धी की शुक्ल लेश्या को क्रोध है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अर जिस काल इन भावनि विषैं मान प्रवर्तै है, सो अनंतानुबंधी की शुक्ल लेश्या को मान भाव है।

बहुरि जिस काल इन भावनि विषै माया कषाय प्रवर्तै है, सो अनंतानुबंधी की शुक्ल लेश्या को माया भाव है।

बहुरि जिस काल इन भावनि विषैं लोभ कषाय प्रवर्तै है,सो अनंतानुबंधी की शुक्ल लेश्या को लोभ भाव है।

अप्रत्याख्यान कषाय अपेक्षा लेश्या

अब अप्रत्याख्यान की लेश्या के चौबीस भेद कहिये हैं – जहां न्यायरूप विषय कार्य, वा कषाय कार्य, धर्म कार्य वा पांचों पाप प्रवर्तैं, बहुरि सम्यग्दर्शन की प्राप्ति हो जाय, जातैं इहां सम्यक्त्व का घातक अनंतानुबंधी चारित्र मोह के उदय का अभाव है, तहां अप्रत्याख्यान क्रोधादि भाव को प्राप्त होय प्रवर्तैं; तहां अप्रत्याख्यान का लेश्या भाव जानना। जातैं कार्य के अंत जाकै क्रोधादि कषाय भाव शांतता नैं प्राप्त होय, दयाधर्म करि सहित होय, सत्यवादी होय, पराये पुण्य उदय विषैं अदेखसका भाव नाहीं करै, सुज्ञान, चातुर्यता करि मंडित होय, क्रियावान, शुद्ध भोजन को भक्षक होय, सप्त व्यसनादि करि वर्जित होय, अष्ट मद कर रहित होय, सरल होय, अन्याय लोभ कर रहित होय, देव-गुरु-धर्मादिक का भक्त होय, शरणागत प्रतिपालक होय, उदार होय – इत्यादि भावनि सहित अप्रत्याख्यान कषाय प्रवर्तैं हैं।

तहां प्रथम ही अप्रत्याख्यान की कृष्ण लेश्या कहिये हैं – जहां न्याय कषाय कार्यनि के अर्थि, वा विषय कार्यनि के अर्थि, मरना-मारना, संग्राम करना, अति प्रचंड क्रोधादि कषाय करना, अपना घात करना, पैला का घात करना, झूठ बोलना, चुरा लावना, चुरा मंगावना, स्व-स्त्री सों आसक्त होय भोग करना, अनेक स्व-स्त्रीनि सों भोग करने की वांछा करनी, तातैं अनेक स्त्री परणनी, अपने मिले भोगनि विषैं अतृप्त होना, न्याय पूर्वक बहुत परिग्रह बधावना, अपने न्यायरूप कार्यनि के बाधकनि कों वा प्रजा के बाधकनि कों अनेक दण्ड देना, राजनि सूं लड़ना, मरना-मारना, मुलक बाहर करना, जावत वश में न आवै तावत् अदेखसका भाव राखना, पांच इंद्रियनि के न्याय विषयनि कूं आसक्त होय सेवना, कौतूहल करना – इत्यादि न्याय कषाय कार्यनि विषैं वा विषय कार्यनि विषैं वा तिनके अर्थि पंच पापनि विषैं निःशंक होय प्रवर्तना, सो कृष्ण लेश्या कहिये।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

इन कार्यनि विषैं क्रोध कषाय सहित होय प्रवर्तै, सो अप्रत्याख्यान कषाय का क्रोधरूप कृष्ण लेश्या कहिये।

जो मान कषाय सहित प्रवृत्ति होय, सो अप्रत्याख्यान मानरूप कृष्ण लेश्या कहिये।

अर जहां माया सहित प्रवृत्ति होय, सो अप्रत्याख्यान की मायारूप कृष्ण लेश्या कहिये।

अर जहां लोभ सहित प्रवृत्ति होय, सो अप्रत्याख्यान की लोभरूप कृष्ण लेश्या कहिये।

अब अप्रत्याख्यान की नील लेश्या कहिये हैं – जहां कृष्ण लेश्या करि कहे जे कार्य, तिन विषैं किछु मंद कषायरूप आलस सहित प्रवर्तै; किछु पूर्वापर विचार सहित भी प्रवर्तै, सो नील लेश्या कहिये।

अर जहां क्रोध सहित प्रवर्तै, सो अप्रत्याख्यान की क्रोधरूप नील लेश्या है।

अर जहां मान सहित प्रवर्तै, सो अप्रत्याख्यान की मानरूप नील लेश्या है।

अर जहां माया सहित प्रवर्तै, सो अप्रत्याख्यान की मायारूप नील लेश्या है।

बहुरि लोभ सहित प्रवर्तै, सो अप्रत्याख्यान कषाय की लोभरूप लेश्या कहिये।

अब अप्रत्याख्यान की कापोत लेश्या कहिये हैं – जो अपने कार्य का बिगाड़ करै, ता ऊपर क्रोध करै। दोष सहित होय, ताकी निंदा करै। जो महा दोषवान पुरुष है, ताको पराभव करै। इष्ट वियोग विषैं शोक करै। जहां अपना पराभव होता दीखे, तहां भयवन्त होय। पंच पापरूप मंद भावनि सहित प्रवर्तै। अपने न्याय कार्य के बाधक थकी अदेखसका भाव राखै। अपने न्याय कार्यनि विषैं मर्यादारूप क्रोध, मान, माया, लोभरूप भी प्रवर्तै। अपनी न्यायरूप आजीविका कै अर्थि असि, मसि, कृषि, वाणिज्य, शिल्पादिक तथा सर्व दास कर्म, पशुपालनादि षट् कर्मनि विषैं प्रवर्तै। न्यायरूप आजीविका कार्य करै। न्यायरूप अपने पंचेद्रिय के विषय सेवै। विवाहादि कषाय कार्य भी करै – इत्यादि प्रवृत्ति विषैं प्रवर्तना, कापोत लेश्या जानना।

अरु जहां इन कार्यनि विषैं क्रोध सहित प्रवर्तै, सो अप्रत्याख्यान क्रोध युक्त कापोत लेश्या कहिये।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अरु जहां मान सहित प्रवर्तै, सो अप्रत्याख्यान मानयुक्त कापोत लेश्या कहिये ।

अरु जहां माया सहित प्रवर्तै, सो अप्रत्याख्यान की मायायुक्त कापोत लेश्या कहिये ।

बहुरि जहां लोभ सहित प्रवर्तै, सो अप्रत्याख्यान की लोभयुक्त कापोत लेश्या कहिये ।

अब अप्रत्याख्यान की पीत लेश्या कहिये हैं – जहां क्रोधादि कषाय मन्द होय प्रवर्तै, राज्यादिक जे आजीविका के कार्य, वा संग्राम-विवाहादिक कषाय कार्य, वा विषय कार्य, तिनसौं उदास भाव होय । अरु पूजा, प्रभावना, तीर्थयात्रा, तप, संयमादि विषैं रुचि होय, तहां हर्षकरि प्रवर्तै । अणुव्रत-महाव्रत ग्रहण करने की अरु संसार के छोड़ने की वांछा प्रवर्तै । हिंसा, अनृत, स्तेय, काम सेवन, जहां मंद होय, परिग्रह के भार को छोड़ो चाहै । पात्र विषैं चार प्रकार दान देने की निरंतर प्रवृत्ति होय – इत्यादि भाव पीत लेश्या विषैं प्रवर्तै हैं ।

जहां इन भावनि रूप प्रवर्तना क्रोध कषाय सहित होय, तहां अप्रत्याख्यान की क्रोध सहित पीत लेश्या कहिये ।

अरु जहां मान सहित प्रवृत्ति होय, सो अप्रत्याख्यान की मानयुक्त पीत लेश्या कहिये ।

बहुरि जहां माया सहित प्रवर्तै, सो अप्रत्याख्यान की माया सहित पीत लेश्या कहिये ।

अरु जहां लोभ सहित प्रवर्तै, सो अप्रत्याख्यान की लोभ सहित पीत लेश्या कहिये ।

अब अप्रत्याख्यान की पद्म लेश्या कहिये हैं – भये हैं क्रोधादि कषाय अति मंद जहां, अरु त्याग दिये हैं आजीविका के कार्य वा कषाय कार्य वा इंद्रियन के विषय, अरु निरन्तर प्रवर्तै हैं देश संयम वा सकल संयम के ग्रहण करने की वांछा, अरु मुनिजन तथा गुरुजन वा चतुर्विध संघ का वैयावृत्य करने विषैं तत्पर होय, अरु भया है समभाव उत्पन्न जहां, इत्यादि भाव पद्म लेश्या के हैं ।

जहां इन भावनि विषैं क्रोध कषाय प्रवर्तै, सो अप्रत्याख्यान की क्रोधयुक्त पद्म लेश्या कहिये ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अरु जहां मान कषाय प्रवर्तै, सो अप्रत्याख्यान की मानयुक्त पद्म लेश्या कहिये।

जहां माया सहित प्रवर्तै, सो अप्रत्याख्यान की मायायुक्त पद्म लेश्या कहिये।

अरु जहां लोभ सहित प्रवर्तै, सो अप्रत्याख्यान की लोभयुक्त पद्म लेश्या कहिये।

अब अप्रत्याख्यान की शुक्ल लेश्या कहिये हैं – क्रोधादि कषाय जहां बहुत मंद होय, सर्व कटुंबादिक सों स्नेह का अभाव होय, सर्व सामग्री विषैं अरुचि होय, मन-वचन-काय अति निश्चल होय, विषय-वासना कौ जहां अभाव होय, सप्त भय वर्जित होय, इस भव, पर भव विषैं भोगने की वांछा रहित होय, अरु सर्व पदार्थनि विषैं राग-द्वेष रहित समभाव होय – इत्यादि भाव शुक्ल लेश्या के हैं।

अरु जहां क्रोध सहित प्रवर्तै, सो अप्रत्याख्यान की क्रोधयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये।

अरु जहां मान सहित प्रवर्तै, सो अप्रत्याख्यान की मानयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये।

अरु जहां माया सहित प्रवर्तै, सो अप्रत्याख्यान की मायायुक्त शुक्ल लेश्या कहिये।

अरु जहां लोभ सहित प्रवर्तै, सो अप्रत्याख्यान की लोभयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये।

अरु अनंतानुबंधी की पीत, पद्म, शुक्ल लेश्या विषैं अनंतानुबंधी अति मंदरूप प्रवर्तै है, तहां तत्त्व श्रद्धानरूप द्रव्य सम्यक्त्व होय है; ताका महात्म्य थकी अणुव्रत-महाव्रत बुद्धि पूर्वक मोक्ष के अर्थ ही धारै है अरु विधि पूर्वक अंतरंग, बाह्य निर्मल दोष रहित पालै है; तथापि अनंतानुबंधी के मंद उदय के महात्म्य थकी वा मिथ्यात्व के मंद उदय थकी अंतरंग अभिप्राय में अबुद्धि पूर्वक कोई अंश अन्यथा अभिप्राय को वा अन्यथा प्रवृत्ति को चाल्यो जाय है; ता थकी मोक्षमार्ग का अभाव ही है।

प्रत्याख्यान कषाय अपेक्षा लेश्या

अब प्रत्याख्यान विषैं कषायनि की अपेक्षा लेश्या के बारह भेद कहिये हैं – जातैं प्रत्याख्यान कषाय भावनि विषैं कृष्ण, नील, कापोत तीन लेश्या का अभाव है, अरु पीत, पद्म, शुक्ल – इन तीन लेश्याओं का सद्भाव है; तातैं बारह भेद हैं।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

संज्वलन कषाय सहित प्रत्याख्यान कषाय अति मंद कषायनि के स्थानकनि विषैं प्रवर्तें। प्रत्याख्यान कषाय सहित जीव संसार, शरीर, भोग सों विरक्त होय। बहुरि बहुत आरम्भ, परिग्रह छोड़ि अल्प आरम्भ, अल्प परिग्रह विषैं तिष्ठैं। एकादश प्रतिमा का ग्रहणरूप जो देश संयम, ताकौ ग्रहण करै, जातैं इहां देश संयम के घातक अप्रत्याख्यान चारित्र मोह के उदय का अभाव है।

अब प्रत्याख्यान पीत लेश्या कहिये हैं – बहुरि सकल संयम लेने की जाकै वांछा होय। बहुरि च्यारि प्रकार हिंसा विषैं उद्यमी हिंसा, संकल्पी हिंसा, विरोधी हिंसा – इन तीन हिंसाओं का तो अभाव होय; अरु आरंभी हिंसा, भोजनादि क्रिया विषैं वा अल्पारंभ के अर्थि अल्प विहारादिक कार्यनि विषैं वा धर्म कार्यनि के विषैं प्रवृति अल्प होय है, सो यतनाचार पूर्वक है। लौकिक कार्यनि विषैं अरुचि है। धर्म कार्यनि विषैं प्रीति सहित है। पांचों इंद्रियनि की प्रवृत्ति राग मिटाने अर्थि है वा धर्म अर्थि है, विषय के अर्थि नाहीं है। इत्यादि लक्षणनि सहित प्रत्याख्यान कषाय प्रवर्तें है। जहां इन कार्यनि विषैं प्रवृत्ति होय है, सो पीत लेश्या कहिये।

जहां पीत लेश्या क्रोध सहित होय, सो प्रत्याख्यान की क्रोधयुक्त पीत लेश्या कहिये।

जहां मान सहित होय, सो प्रत्याख्यान की मानयुक्त पीत लेश्या कहिये।

अरु जहां माया सहित होय, सो प्रत्याख्यान की मायायुक्त पीत लेश्या कहिये।

अरु जहां लोभ सहित होय, सो प्रत्याख्यान की लोभयुक्त पीत लेश्या कहिये।

अब प्रत्याख्यान की पद्मलेश्या कहिये हैं – जहां पूर्वोक्त कार्यनि विषैं त्यागरूप भाव प्रवर्तें है, सो पद्म लेश्या कहिये हैं।

तहाँ जो लेश्या क्रोध सहित प्रवर्तें, सो प्रत्याख्यान की क्रोधयुक्त पद्म लेश्या कहिये।

अरु जहां मान सहित प्रवर्तें, तहां प्रत्याख्यान की मानयुक्त पद्म लेश्या कहिये।

अरु जहां माया सहित प्रवर्तें, तहां प्रत्याख्यान की मायायुक्त पद्म लेश्या कहिये।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अरु जहां लोभ सहित प्रवर्तै, सो प्रत्याखान की लोभयुक्त पद्म लेश्या कहिये ।

अब प्रत्याख्यान की शुक्ल लेश्या कहिये हैं – पूर्वोक्त कार्यनि विषैं जहां सम-भाव होय, राग-द्वेष रहित निश्चल भाव होय; सो शुक्ल लेश्या कहिये ।

सो शुक्ल लेश्या जहां क्रोध कषाय सहित होय, सो प्रत्याख्यान की क्रोधयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये ।

अरु जहां मान कषाय सहित होय, सो प्रत्याख्यान की मानयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये ।

अरु जहां माया सहित होय, सो प्रत्याख्यान की मायायुक्त शुक्ल लेश्या कहिये ।

अरु जहां लोभ सहित होय, सो प्रत्याख्यान की लोभयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये ।

संज्वलन कषाय अपेक्षा लेश्या

अब केवल संज्वलन कषाय सहित लेश्या के बारह भेद कहिये हैं –

अब संज्वलन कषाय की पीत लेश्या कहिये हैं – जहां क्रोधादि कषाय अति मंद वा मंदतर स्थाननि विषैं प्रवर्तै है, संज्वलन कषाय सकल संयम का घातक नाहीं, यथाख्यात चारित्र का घातक है; तातैं सकल संयम का ग्रहण होय, जातैं सकल संयम का घातक प्रत्याख्यान कषाय के उदय का अभाव है । अट्ठाईस मूलगुण वा पंचाचारादि रूप प्रवृत्ति होय । षष्ठम गुणस्थान सौं लेय दशम गुणस्थान पर्यंत आरूढ़ होय । सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहार-विशुद्धि, सूक्ष्मसाम्पराय, ये चार संयम होय । चौरासी लाख उत्तरगुण युक्त होय । द्वाविंशति परीषह विषैं सहनशील होय – इत्यादि भावयुक्त मुनि होय । जहां ये भाव प्रवृत्तिरूप हैं, तहां पीत लेश्या कहिये ।

अरु जहां क्रोध कषाय सहित प्रवर्तै, सो संज्वलन की क्रोधयुक्त पीत लेश्या कहिये ।

अरु जहां मान कषाय सहित प्रवर्तै, सो संज्वलन की मानयुक्त पीत लेश्या कहिये ।

अरु जहां माया सहित प्रवर्तै, सो संज्वलन की मायायुक्त पीत लेश्या कहिये ।

अरु जहां लोभ सहित प्रवर्तै, सो संज्वलन की लोभयुक्त पीत लेश्या कहिये ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अब संज्वलन कषाय की पद्म लेश्या कहिये हैं – जहां पूर्वोक्त भाव त्याग रूप प्रवर्तै, सो पद्म लेश्या कहिये ।

अरु जहां क्रोध सहित प्रवर्तै, सो संज्वलन की क्रोधयुक्त पद्म लेश्या कहिये ।

अरु जहां मान सहित प्रवर्तै, सों संज्वलन की मानयुक्त पद्म लेश्या कहिये ।

अरु जहां माया कषाय सहित प्रवर्तै, सो संज्वलन की मायायुक्त पद्म लेश्या कहिये ।

अरु जहां लोभ सहित प्रवर्तै, सो सज्वलन की लोभयुक्त पद्म लेश्या कहिये ।

अब संज्वलन कषाय की शुक्ल लेश्या कहिये हैं – जहां पूर्वोक्त प्रवृत्ति का अभाव होय, उपयोग की राग-द्वेष रहित प्रवृत्ति होय, तहां मन, वचन, काय की निश्चलता होय इत्यादि भाव सो शुक्ल लेश्या कहिये ।

अरु जहां क्रोध कषाय प्रवर्तै, सो संज्वलन की क्रोधयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये ।

अरु जहां मान कषाय सहित प्रवर्तै, सो संज्वलन की मान कषाययुक्त शुक्ल लेश्या कहिये ।

अरु जहां माया कषाय सहित प्रवर्तै, सो संज्वलन की मायायुक्त शुक्ल लेश्या कहिये ।

अरु जहां लोभ कषाय सहित प्रवर्तै, सो संज्वलन की लोभयुक्त शुक्ल लेश्या कहिये ।

बहुरि कषाय रहित गुणस्थान जे उपशांत कषाय एकादशम वा क्षीण कषाय द्वादशम वा सयोगकेवल त्रयोदशम – इन तीन गुणस्थाननि विषैं जो शुक्ल लेश्या कहिये हैं, सो योगों की अपेक्षा उपचार करि कहिये है । ऐसे ये बहत्तर भेद कहे । अब इनके अंतर्भूत अनेक भेद कहे हैं, ते सर्व लेश्या भाव जानने ।

लेश्या भावनि का फल

अब इन लेश्या भावन का फल कहिये हैं – अनंतानुबंधी की उत्कृष्ट कृष्ण लेश्या भाव करि तो आत्मा उत्कृष्ट स्थिति वा उत्कृष्ट अनुभाग सहित नरकायु को बांधै है । अरु इस ही लेश्या सहित जीव मरण को पाय सप्तम नरक विषैं उपजै है । अरु अनुत्कृष्ट कृष्ण लेश्या भाव करि आत्मा अनुत्कृष्ट स्थिति-अनुभाग सहित नरक गति तथा नरकायु बांधै है । अरु इस ही लेश्या में मरण करै तौ पंचम नरक के

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अंत के पाथड़े से लगाय छटवें नरक के अंत पाथड़ा पर्यन्त उपजै है । बहुरि अजघन्य कृष्ण लेश्या भाव करि आत्मा मनुष्य-तिर्यंच आयु बांधि मनुष्य-तिर्यंच दोय गति विषैं उपजैं है । अर जघन्य कृष्ण लेश्या भाव करि जीव देवायु बांधि भवनत्रिक-देव गति विषैं उत्पन्न होय है।

बहुरि अनंतानुबंधी नील लेश्या के उत्कृष्ट भाव करि जीव मध्य स्थिति अनुभाग सहित नरकायु बांधै है ।

बहुरि याही लेश्या में मरण करै तो पंचम नरक विषैं उपजे है। अरु अनु-त्कृष्ट नील लेश्या के भाव करि आत्मा मध्य स्थिति-अनुभाग सहित नरकायु को बंध करै है ।

बहुरि इस ही लेश्या में मरण करि तृतीय नरक के अंत पाथड़े सों लेय चतुर्थ नरक के अंत पर्यंत उपजै है ।

बहुरि जघन्य नील लेश्या भाव करि जीव मनुष्य-तिर्यंच आयु बांधै है । मरण करि मनुष्य-तिर्यंच गति विषैं ही उत्पन्न होय है । अर जघन्य नील लेश्या भाव करि जीव देवायु को बांध करि भवनत्रिक देव गति विषैं ही उपजैं हैं ।

बहुरि अनंतानुबंधो कापोत लेश्या के उत्कृष्ट भाव करि जीव मध्य स्थिति-अनुभाग सहित नरकायु बांधि मरण करि तृतीय नरक विषैं उपजैं है । बहुरि अनु-त्कृष्ट कापोत लेश्या भाव करि आत्मा अतिमान (परिवर्तमान) जघन्य स्थिति-अनुभाग सहित नरकायु का बंध करि मरण को पाय प्रथम नरक सौं लगाय दूसरे नरक पर्यंत उपजै है। बहुरि कापोत लेश्या के अजघन्य भाव करि जीव मनुष्य-तिर्यंच आयु बांधि मनुष्य-तिर्यंच गति विषैं उत्पन्न होय है । बहुरि कापोत लेश्या के जघन्य भाव करि देवायु को बांध करि भवनत्रिक देवनि विषैं उपजै है ।

बहुरि अनंतानुबंधी पीत लेश्या के भावनि करि मनुष्य, तिर्यंच तो देवायु बांधि मरण करि कल्पवासी देव होय हैं । अर देव याही लेश्या के स्थाननि थकी मनुष्य-तिर्यंच आयु बांधि मरण करि मनुष्य-तिर्यंच दोनों गति विषैं उपजै हैं ।

बहुरि अनंतानुबंधी पद्म लेश्या भाव करि मनुष्य-तिर्यंच तो देवायु बांधि मरण करि कल्पवासी देव होय हैं । अर देव याही लेश्या भाव करि मनुष्य-तिर्यंच आयु बांधि मरण करि मनुष्य-तिर्यंच दोनों गति विषैं उपजै है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि अनंतानुबंधी शुक्ल लेश्या भाव करि मनुष्य-तिर्यंच तो देवायु बांधि मरण करि कल्पवासी देव होय हैं अर देव याही लेश्याभाव करि मनुष्य गति, मनुष्य आयु बांधि मनुष्य गति विषैं उपजै हैं।

बहुरि अप्रत्याख्यान की छहू लेश्या भाव करि मनुष्य-तिर्यंच के तो देवगति, देवायु का ही बंध है, अर मरण विषैं विशेष है। कृष्ण, नील लेश्या भावनि विषैं तो मरण ही नाहीं। बहुरि कापोत लेश्या के उत्कृष्टादि भावनि सहित जीव प्रथम नरक विषैं उपजै। अर मध्य भावनि विषैं मर्‍यो जीव भोगभूमि विषैं तिर्यंच होय, अर जघन्यादि भावनि सहित मर्‍यो जीव भोगभूमि विषैं मनुष्य होय।

बहुरि पीत, पद्म, शुक्ल लेश्या भावनि करि मर्‍यो जीव कल्पवासी देव ही होय। बहुरि नारकी कृष्ण, नील, कापोत लेश्या भाव करि मनुष्य आयु ही बांध मनुष्य गति विषैं ही उपजै है। अर देव पीत, पद्म, शुक्ल, लेश्या भावनि करि मनुष्य आयु ही बांधैं हैं अर मरण करि मनुष्यगति विषैं ही उपजै हैं।

बहुरि प्रत्याख्यान की पीत, पद्म, शुक्ल तीनों लेश्या भावनि करि मनुष्य वा तिर्यंच, देव आयु ही बांधै हैं अर मरण करि उत्तम कल्पवासी देवनि विषैं उपजै है।

बहुरि संज्वलन की पीत, पद्म लेश्या वाला मनुष्य मुनि पद विषैं तिष्ठता देव आयु ही बांधै है, अर मर करि कल्पवासी उत्तम देव इंद्रादिक होय है। अर शुक्ल लेश्या वाला उत्तम देव आयु बांधि, मरण करि कल्पातीत जो नौ ग्रैवक वा नौ अनुदिश विमान वा सर्वार्थसिद्धि सहित पंच अणुत्तर विमान, तिन विषैं उपजै है। अर वर्तमान विषैं कृष्ण, नील, कपोत ए तीन लेश्या तो दुख ही की कारण है। अर पीत, पद्म, शुक्ल तीनों लेश्या सुख ही की कारण हैं।

बहुरि कृष्ण, नील, कापोत ए तीन लेश्या भाव, गुणस्थान तो असंयत पर्यन्त हैं, मार्गणास्थान विषैं **गति** – ४, **जाति** – ५, **काय** – ६, **योग** – आहारकद्विक विना १३, **वेद** – ३, **कषाय** – २५, **ज्ञान** – ६ कुज्ञान – ३ एवं **सुज्ञान** – ३, **संयम** – असंयम १, **दर्शन** – केवलदर्शन विना ३, **लेश्या** – स्वकीय, **भव्य** – भव्य अभव्य २, **सम्यक्त्व** – ६, **संज्ञी** – संज्ञी-असंज्ञी २, **आहार** – आहारक, अनाहारक २ इन विषैं पाइये है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि पीत-पद्म दोय लेश्या भाव, गुणस्थान तो सप्तम पर्यन्त, अर मार्गणा **गति** – नरकगति बिना ३, **जाति** – पंचेंद्रिय १, **काय** – त्रस १, **योग** – १५ **वेद** – ३, **कषाय** – २५, **ज्ञान** – ७, **कुज्ञान** – ३, सुज्ञान – केवल बिना ४, **संयम** – सूक्ष्म साम्यपराय अरयथाख्यात बिना – ५, **दर्शन** – केवल दर्शन विना, ३, **लेश्या** – स्वकीय १, **भव्य** – भव्य, अभव्य – २, **सम्यक्त्व** – ६, **संज्ञी** – १, **आहार** – आहारक, अनाहारक – २, इन विषैं पाइये हैं।

बहुरि शुक्ल लेश्या भाव, गुणस्थान तो सयोग केवली पर्यन्त १३, अर मार्गणाः-**गति** – नरक गति बिना ३, **जाति** – पंचेंद्रिय १, **काय** – त्रस १, **योग**–१५, **वेद** – ३, **कषाय** – २५, **ज्ञान** – ८, **संयम** – ७, **दर्शन** – ४, **लेश्या** – स्वकीय १, **भव्य** – भव्य, अभव्य २, **सम्यक्त्व** – ६, **संज्ञी** – १, **आहार** – आहारक, अनाहारक २, इन विषैं पाइये है।

इति श्री भावदीपिका ग्रंथ के औदयिक भावाधिकार विषैं
चौथा लेश्या भाव अंतराधिकार समाप्त भया।

वेदभाव अंतराधिकार

(दोहा)

वेद भाव सब, नाशिके, अवेद भावमय होय।
क्षीण किए सब कर्मरिपू नमूं तास पद दोय॥

आगे वेद भावाधिकार कहते हैं –

वेद नामा मोहकर्म के उदय तैं जीव कैं वेदभाव होय है। ताकरि जीव काम विकार कूं प्राप्त होय है। काम के पंच-बाणन करि बेधो थक्यो दुःखी होय है, तौ पण भी रति नामा मोहकर्म के उदय करि काम की बधावनहारि जो स्त्री आदि सामग्री तासौं सुख मानै है।

काम के पंच बाणनि के नामः–शोषण कहिये शरीर का कृश होना। **संतापन** कहिये शरीर वा परिणाम संताप युक्त होना। **उच्चाटन** कहिये भोजनादि विषैं अरुचि होना। **मोहन** कहिये विज्ञान चातुर्यता करि रहित होना। **वशीकरण** कहिये परवश होना – आपकी सुध रहित होना।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि काम के दश वेगनि के नाम:–चिंता १, दर्शन की इच्छा २, दीर्घोच्छ्-वास ३, अरति ४, शरीरदाह ५, मंदाग्नि ६, मदोन्मत्तता ७, शुक्र मोचन ८, मूर्च्छा ९, मरण १० । बहुरि अनेक प्रकार शृंगार हास्यादि चेष्टा करना इत्यादि वेदभाव के लक्षण हैं । सो वेद भाव तीन प्रकार है – पुरुष वेद, स्त्री वेद, नपुंसक वेद ।

तहां पुरुष वेद मोह कर्म के उदयतैं पुरुष वेद भाव होय है । ताकरि स्त्री सों रमने की इच्छा होय है ।

अर स्त्री वेद नामा मोह कर्म के उदयतैं स्त्री वेदभाव होय है, ताकरि पुरुष सों रमने की वांछा होय है ।

बहुरि नपुंसक वेदनामा मोह कर्म के उदय तैं नपुंसक वेद होय हैं, ताकरि स्त्री–पुरुष दोनों विषैं रमने की वांछा उपजै है । ए तीनों ही वेद वर्तमान विषैं तो दुःख ही के कारण हैं । अर आगामी नरक निगोद के कारण हैं ।

बहुरि ए तीनों वेद भाव, **गुणस्थान** तो अनिवृत्तिकरण नवम पर्यंत प्रवर्ते हैं ।

बहुरि **मार्गणा – गति** विषैं पुरुष वेद अर स्त्री वेद दोय तो नरक बिना तीन गति विषैं पाइयै हैं । अर नपुंसक वेद, देवगति बिना तीन गति विषैं पाइये है ।

अर जाति विषैं चौइंद्रिय पर्यंत चार जाति विषैं नपुंसक वेद भाव ही है । अर पंचेन्द्रिय जाति विषैं तीनों वेद भाव पाइयें ।

काय विषैं पंच प्रकार स्थावरनि विषैं तो नपुंसक वेद भाव है । अर त्रस-काय में द्वीन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय बिना पंचेन्द्रिय त्रसकाय में तीनों ही वेद भाव हैं ।

योगनि विषैं सामान्य पनै तो तीनों ही वेद भावनि की अपेक्षा हैं; द्रव्य की अपेक्षा नाहीं । **कषाय** २५, ज्ञान – पुरुष वेद विषैं तो केवल बिना ७ पाइये; अर स्त्री नपुंसक वेद विषैं मनःपर्ययज्ञान बिना छह ही ज्ञान पाइये ।

अर **संयम** – सूक्ष्म साम्पराय वा यथाख्यात बिना ५, अर **दर्शन** – केवल बिना ३, लेश्या – छह, भव्य – अभव्य २, सम्यक्त्व ६, संज्ञी-असंज्ञी २, आहारक – अनाहारक २, इन विषैं पाइये है ।

इति श्री भावदीपिका ग्रंथों के औदयिक भावाधिकार विषैं
पांचवां वेद भाव अंतराधिकार समाप्त भया ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

असंयम भाव अंतराधिकार

(दोहा)

असंयम भाव परभाव कों, मेटि रु संयम भाव ।
स्वभाव भाव कों सिद्ध करि, नमौं मुक्ति के राव ।।

असंयम भावाधिकार प्रारम्भ करते हैं –

अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण चारित्रमोह कर्म के उदय तैं जीव के असंयम भाव होय है । तहां पांच इंद्रिय अर छठे मन की स्वच्छंद प्रवृत्ति होय; जातैं पांच इंद्रिय, छठे मन का विषय स्वच्छंद होय सेवै है । नाहीं है हेय उपादेय का विचार जहाँ, अर नाहीं है त्यजन-ग्रहण की प्रवृत्ति जहाँ, बहुरि नाहीं है षट काय के जीवनि की दया जाकैं, ऐसी जहां निःशंक प्रवृत्ति होय, सो असंयम भाव कहिये । सो असंयम भाव दोय प्रकार है – एक तो अनंतानुबंधी चारित्रमोह के उदय तैं होय है । तहां तो योग्य-अयोग्य, न्याय-अन्याय, हेय-उपादेय के विवेक रहित विषय कार्यनि विषैं वा कषाय कार्यनि विषैं प्रवर्तै है । स्वच्छंद, दया रहित होकर त्रस-स्थावर जीवनि की हिंसा करैं है; ऐसा असंयम भाव है ।

बहुरि दूसरा असंयम भाव अप्रत्याख्यानावरण चारित्रमोह कर्म के उदय तैं होय है । तहां विषय कार्य वा कषाय कार्य वा त्रस-स्थावर जीवनि की हिंसा, न्याय-अन्याय, योग्य-अयोग्य, के विचार सहित होय है । तहां त्यजन-ग्रहण की प्रतिज्ञा तो नाहीं कर सकै है, परन्तु हेय-उपादेय के विचार सहित होय है । तातैं अपने पद योग्य न्याय कार्यनि विषैं तो प्रवर्तै है । अर पद योग्य अन्याय कार्यनि विषैं नाहीं प्रवर्तै है । ऐसा असंयम भाव तो अप्रत्याख्यान के उपर ले स्थाननि विषैं होय है । अर प्रत्याख्यान के मंद उदय में किंचित् त्यजन-ग्रहण रूप प्रतिज्ञा, व्यसनादिक का त्याग, अभक्ष्य उदंबरादिक का त्याग रूप इत्यादि प्रतिज्ञा भी होय है । परन्तु पंच पापनि का एक देश वा सर्व देश त्याग नाहीं कर सकै है । तातैं असंयम ही कहिये हैं ।

ये असंयम भाव वर्तमान विषैं भी दुःख रूप हैं; अर आगामी चतुर्गति संसार के कारण हैं । बहुरि ये असंयम भाव जो अनंतानुबंधी चारित्रमोह के उदय जन्य हैं; सो तौ मिथ्यात्व अरु सासादन दोय गुणस्थान विषैं पाइये । अर दूसरा असंयम भाव अप्रत्याख्यानावरण मोह कर्म उदयजन्य है; सो मिश्र गुणस्थान अर असंयत इन दोय गुणस्थान विषैं पाइये; तातैं सामान्य असंयम भाव, तौ आदि के चार गुणस्थान विषैं पाइये । अर मार्गणा विषैं **गति – ४, जाति – ५, काय – ६,**

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

योग-आहारकद्विक बिना १३, **वेद** – ३, **कषाय** – २५, **ज्ञान** – ६, (कुज्ञान ३, सुज्ञान ३,) **असंयम** – १, **दर्शन** – ३, चक्षु, अचक्षु अवधि **लेश्या** – ६, **भव्य** – भव्य-अभव्य – २, **सम्यक्त्व** – छह ६, **संज्ञी** – संज्ञी-असंज्ञी २, **आहारक** – आहारक – अनाहारक २, इन विषैं प्रवर्तें है ।

इति श्री भावदीपिका ग्रंथ के औदयिक भावाधिकार विषैं
छठवां असंयम भाव अन्तराधिकार पूर्ण भया ।

अज्ञान भाव अंतराधिकार

(दोहा)

अनादि अज्ञान विभाव को, मूल नाश कर देव ।
केवलज्ञान स्वभाव कों, प्रगट कियो स्वयमेव ।।

अब अज्ञान भावाधिकार लिखते हैं –

ज्ञानावरण, दर्शनावरण कर्म के क्षयोपशम तैं जो ज्ञान भाव जीव कैं प्रगटे है; सो तो क्षायोपशमिक भाव कहिये । अर ज्ञानावरण, दर्शनावरण के उदय तैं जो ज्ञान अभाव रूप है, सो अज्ञान भाव कहिये । तातैं जीव को संपूर्ण ज्ञान भाव तो केवलज्ञान है । ता विषैं जो ज्ञान के उपरि ज्ञानावरण, दर्शनावरण कर्म के सर्वघाति स्पर्धकनि का उदय है, ताको तो अभाव है; जेते ज्ञान के ऊपर ज्ञानावरण, दर्शनावरण कर्म के देशघाति स्पर्धकनि का उदय है, सो ज्ञान विलास खुला है; ताकों क्षायोपशमिक भाव कहिये । सो अज्ञान भाव क्षीणकषाय द्वादशम गुणस्थान के अंत पर्यंत जानना । तहां संपूर्ण ज्ञानावरण, दर्शनावरण कर्म के क्षय होतैं संपूर्ण ज्ञान-भाव केवलज्ञान जीव को प्रगट होय है । तहां सयोगकेवली त्रयोदशम गुण स्थान विषैं अज्ञानभाव का अभाव है । तातैं अज्ञान भाव गुणस्थान तौ क्षीणकषाय पर्यन्त बारा विषैं पाइये । अर मार्गणा – **गति** – ४, **जाति** – ५, **काय** – ६, **योग** – १५, **वेद** – ३, **कषाय** – १५, **ज्ञान** – केवलज्ञान बिना ७, **संयम** – सर्व, **दर्शन** – केवल बिना ३, **लेश्या** – ६, **भव्य** – भव्य-अभव्य २, **सम्यक्त्व** – ६, **संज्ञी** – संज्ञी, असंज्ञी २, **आहार** – आहारक । अनाहारक दोय; इन विषैं पाइये है । ये अज्ञानभाव वर्तमान काल विषैं भी दुःखरूप हैं अर आगामी चतुर्गति संसार का कारण हैं ।

इति श्री भावदीपिका ग्रंथ के औदयिक भावाधिकार विषैं
सातवां अज्ञान भाव अंतराधिकार समाप्त भया ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

असिद्ध भाव अंतराधिकार

(दोहा)

सब कर्मनि को नाश करि, असिद्धभाव क्षय कीन ।
स्वभाव भाव की सिद्धि तैं, सिद्ध नमूं गुण लीन ।।

अब असिद्ध भावाधिकार लिखते हैं –

जावत सर्व कर्मनि का क्षय न होय तावत् सम्पूर्ण स्वभाव भाव की असिद्धि है, तातैं असिद्ध भाव कहिये । जावत् असिद्ध भाव है, तावत् जीव संसार विषैं तिष्ठैं है । बहुरि जिस समय असिद्ध भाव का अभाव होय, ताही समय जीव संपूर्ण स्वभाव भावमई होय; मुक्त होय है । बहुरि असिद्ध भाव के अभाव का कारण जिन धर्म है; तातैं सत्य जिन धर्म कों कारणरूप जान, ग्रहण करि असिद्ध भाव का अभाव करना योग्य है । जिन जीवनि कैं असिद्ध भाव का अभाव भया है, तिनकैं जिन धर्म के प्रसाद करि ही भया है; अन्य धर्म असिद्ध भाव के अभाव के कारण नाहीं । तातैं भली भांति सत्यधर्म जो जिनधर्म ही सेवने योग्य है । अर असिद्ध भाव का नाश करना सर्व ग्रंथनि का तात्पर्य है । ये असिद्ध भाव वर्तमान विषैं दुःख का कारण हैं, अर आगामी चतुर्गति रूप संसार का कारण हैं ।

बहुरि ये असिद्ध भाव **गुणस्थान** तो सर्व गुणस्थान, अयोग केवली गुणस्थान पर्यंत पाइये; बहुरि सर्व **मार्गणास्थान** विषैं पाइये हैं ।

ये आठ अधिकार औदयिक भावाधिकार विषैं कहे हैं ।

इति श्री भावदीपिका ग्रंथ के औदयिक भावाधिकार विषैं
अंतिम आठवाँ असिद्ध भाव अंतराधिकार पूर्ण भया ।

भेद विज्ञानतः सिद्धाः सिद्धाः ये किल केचन ।
अस्यैवाभावतो बद्धा बद्धा ये किल केचन ।।

जो कोई सिद्ध हुए हैं, वे भेदविज्ञान से सिद्ध हुए हैं; और जो कोई बंधे हैं, वे उसी के (भेद विज्ञान के ही) अभाव से बंधे हैं ।

श्रीमद् अमृतचन्द्राचार्यदेव, आत्मख्याति टीका, कलश – १३१

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पांचवाँ अधिकार : क्षायोपशमिक भावाधिकार

(दोहा)

अष्टादश भावनि सहित, वर्तै जीव विभाव।
नाम क्षयोपशम तास हर बंदू चितधरि चाव ।।१।।

अब क्षायोपशमिक भावाधिकार लिखिये हैं –

प्रथम ही सामान्य क्षायोपशमिक भाव का स्वरूप कहिये हैं – जीव के स्वभाव भाव के अभाव का कारण जो प्रतिपक्षी कर्म, ताका जहां सर्वघाती स्पर्द्धकनि का उदय है; तहां तौ प्रतिपक्षी गुण का सम्पूर्ण अभाव प्रवर्तै है। अर जहां स्वभाव गुण के प्रतिपक्षी कर्म के सर्वघाती स्पर्धकनि के तौ उदय का अभाव होय, जातैं उदय कों प्राप्त भये जे सर्वघाती स्पर्धक, ते बिना रस दिये ही प्रदेश उदय होय खिर जाँय, अरु सत्ता में तिष्ठते जे सर्वघाती स्पर्धक ते उपशांतकरण कों प्राप्त होय; जातैं तिनकी उदीरणा होय उदय में न आय सकैं; अर देश घाती स्पर्द्धकनि का उदय होय, ताकरि किंचित् शक्ति कों धरैं, किंचित् गुण का प्रगटपना होय; वाका नाम क्षयोपशम भाव कहिये। ऐसा सामान्य क्षायोपशमिक भाव का स्वरूप जानना।

अब क्षायोपशमिक भाव के भेद अष्टादश हैं – तहां ज्ञान सात प्रकार – कुमतिज्ञान, कुश्रुतज्ञान, कुअवधिज्ञान, सुमतिज्ञान, सुश्रुतज्ञान, सुअवधिज्ञान, अर मनःपर्ययज्ञान। क्षयोपशम लब्धि पांच प्रकार – दान लब्धि, लाभ लब्धि, भोग लब्धि, उपभोग लब्धि, वीर्य लब्धि। क्षायोपशमिक सम्यक्त्व; देश संयम, क्षयोपशम चारित्र; दर्शन ३, ऐसे ये अठारह भाव हैं। तिनका भिन्न-भिन्न वर्णन कीजिये हैं।

तिन विषैं प्रथम ही क्षायोपशमिक ज्ञान भावाधिकार प्ररूपिये हैं –

जीव कौं जानना मात्र ऐसा जो सामान्य ज्ञान भाव, पारिणामिक भाव, ताका पंच प्रकार कर्म का वश थकी पांच अवस्था होय हैं। तहाँ मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान तौ अपने-अपने प्रतिपक्षी कर्म के क्षयोपशम तैं होय हैं। केवलज्ञान प्रतिपक्षी कर्म के क्षय तैं होय है; सो ही कहिये हैं।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

कुज्ञानअन्तराधिकार

(दोहा)

निज ज्ञान भाव मिथ्यात्व तें, उलट भयो दुःख दाय।
तिस मिथ्यात्व ध्वंसक प्रभू, नमूं चरन चित लाय॥१॥

अब कुज्ञानाधिकार कहिए हैं –

तहाँ प्रथम ही मिथ्यात्व निमित्त करि उत्पन्न भये ऐसे कुमति कुश्रुति और कुअवधि ऐसे तीन कुज्ञान हैं—

प्रथम कुमतिज्ञान का वर्णन करिये हैं – तहां प्रथम ही मतिज्ञान का वर्णन कीजिये हैं। जो पांच तौ द्रव्येन्द्रिय अरु अनिंद्रिय कहिये द्रव्यमन, इनके द्वारा होय जो आत्मा के ज्ञान की प्रवृत्ति, ता ज्ञान के भाव का नाम मतिज्ञान कहिये। सो मतिज्ञान के भेद ३३६ हैं, सो कहिये हैं। ज्ञेय प्रति जीव का मतिज्ञान ऐसे प्रवर्ते है। पहले तौ अवग्रह होय। अवग्रह कहिये पदार्थ कों किंचित् विशेष सहित जानै। जैसे दूर आकाश में तिष्ठता पदार्थ को ऐसा देखा कि जो ये कछु श्वेत वस्तु है। पीछे संशय उपजा, जो यह बगुल की पंक्ति है कि ध्वजा है। इस ज्ञान का नाम ईहा है। पीछे निश्चय भया कि बगुल की पंक्ति ही है या ध्वजा ही है, इस ज्ञान का नाम अवाय होय है। बहुरि निश्चय भया पदार्थ कों केताक काल न भूलना; इस ज्ञान का नाम धारणा है। इस प्रकार अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा ये ज्ञान का च्यार भेद भये।

अवग्रह मतिज्ञान के मूल दोय भेद है – अर्थावग्रह व्यंजनावग्रह। तहां इन्द्रिय और मन के द्वारा जो पदार्थ जीव के व्यक्त रूप होय, प्रगट रूप होय, बुद्धि पूर्वक ताकौं जाने कि जो मेरे स्पर्श भया, मैं आस्वाद्या; मोकूं बास आई, मैं देख्या, मैं सुन्या, मैं मन करि जान्या, ऐसा ज्ञान का नाम तो अर्थावग्रह है। अरु जो इंद्रिय और मन करि पदार्थ का अबुद्धि पूर्वक ज्ञान जो पदार्थ सो अव्यक्त भड़भेट भया ऐसा सूक्ष्म ज्ञान, जो आपके बुद्धि गोचर भया नाहीं, तृणस्पर्शवत् रहा है जैसें – कोमल तृण स्पर्श तौ भया; पर आपको गम्यमान नाहीं भया, ऐसा सूक्ष्म शब्दादि का समूह प्रति अव्यक्त ज्ञान, ताकौं व्यंजनावग्रह कहिये।

सो प्रथम ही तौ अर्थावग्रह ज्ञान के भेद दोय सौ अठ्यासी कहिये हैं। अर्थावग्रह कों अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा इन चार करि गुणौं, च्यार ही भये। इनकों पांच इन्द्रिय अरु मन इन छह करि गुणें, चौबीस भेद भये। बहुरि मतिज्ञान का विषयभूत ज्ञेय बारह – बहु, अल्प, बहुविधि, एकविधि, निसृत, अनिसृत, क्षिप्र,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अक्षिप्र, उक्त, अनुक्त, ध्रुव, अध्रुव ऐसे बारह – इन थकी चौबीस को गुणें, दोय सो अठासी भेद तौ अर्थावग्रह के भए। बहुरि व्यंजनावग्रह ज्ञान के अवग्रह ही होय; ईहादि तीन न होय। तातैं अवग्रह कौं स्पर्शन, रसना, घ्राण, श्रोत्र, इन चार इन्द्रियानि सौं गुणें, तो चार ही भेद भये। जातैं नेत्र इन्द्रिय के अरु मन के अर्थावग्रह ही है; व्यंजनावग्रह नाहीं। जातैं ये अपने दूर तिष्ठतै विषय को प्रगटपने ही ग्रहण करै है। जातैं इनका विषय अबद्धस्पर्श है। अबद्धस्पर्श कहिये विषय और विषयी के भड़भेंट न होय। अर इन चार इंद्रिय का विषय बद्धस्पर्श कहिए विषय अर विषयी के भड़भेंट भया। अपने विषय का ज्ञान होय है। तातैं पहिले तो विषय का सूक्ष्म ज्ञान होय; पीछैं स्थूल होय तब बुद्धिपूर्वक प्रगट होय। तातैं तहां पर्यंत सूक्ष्म रहै; व्यक्त न होय। वा सूक्ष्म ज्ञान ही होय अर ज्ञान ज्ञेय का संबंध छूट जाय तहां व्यंजनावग्रह कहिये। तातैं चार इन्द्रिय करि बहु आदि बारह ज्ञेय कौं गुणैं, अडतालीस भेद व्यंजनावग्रह का भयो, ऐसे मतिज्ञान के भेद – तीन सौ छत्तीस भये। बहुरि ये बारह प्रकार ज्ञेय अनेक भेद रूप हैं। तातैं जितना मतिज्ञान का विषय भूत ज्ञेय तितने ही मतिज्ञान के भेद जानने।

कुश्रुतज्ञान

अब कुश्रुतज्ञान कहिए है – श्रुतं मतिपूर्वम्, पहिले मतिज्ञान होय, तब श्रुत ज्ञान होय; ऐसा सिद्धान्त का वचन है। सो श्रुतज्ञान दोय प्रकार है – एक अक्षरात्मक, एक अनक्षरात्मक। तातैं वर्ण सौं वर्णांतर का, शब्द सौं शब्दान्तर का, पद सौं पदांतर का, अर्थ सौं अर्थान्तर का ज्ञान होय, ताकौं श्रुतज्ञान कहिये। जैसे ककार वर्णको देखा, सो तौ मतिज्ञान कहिये। बहुरि ताकरि ककारवर्ण को ज्ञान होय, ताकरि ककार वर्ण मांडै, सो श्रुतज्ञान कहिये।

बहुरि जीव ऐसा पद देख्या, सुन्या, सो मतिज्ञान कहिये। ताकरि जीव द्रव्य कों जानै सो श्रुत ज्ञान कहिये सो यह तो अक्षरात्मक श्रुतज्ञान कहिए। बहुरि अर्थ सौं अर्थान्तर को ज्ञान होय, सो अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान कहिए। जैसे भय के कारण वा दुखदायक पदार्थ जो सिंहादिक वा शत्रु आदि, तिनको देख्या, सो मतिज्ञान कहिए। यह मोकूं सुखदायी नाहीं; तिन सौं भाग जाना, लुक (छुप) जाना, सो श्रुतज्ञान कहिए। वा शीत-उष्ण का स्पर्शन भया, सो मतिज्ञान कहिए। ये सुखदायी नाहीं, तिनसों दूर रहना, भागना, सो श्रुतज्ञान कहिये। सो इनको अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान जानना। ऐसें श्रुतज्ञान दोय प्रकार जानना।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

कुअवधिज्ञान

अब कुवधिज्ञान कहिए – जहां द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादा पूर्वक रूपी पुद्गल द्रव्य को वा पुद्गल द्रव्य के संबंध को धरैं, संसारी जीव द्रव्य को प्रत्यक्ष जानै, सो अवधिज्ञान कहिये । जेता-जेता द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादा लिये अवधिज्ञान की शक्ति उत्पन्न भई होय, तेता-तेता अपने विषय योग्य द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादा लिये जानै – ऐसा अवधिज्ञान का स्वरूप है ।

ये मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान क्षायोपशमिकभाव हैं । अपने अपने प्रतिपक्षी कर्म का जेता-जेता क्षयोपशम होय; तेता-तेता ये ज्ञान प्रगट होय है ।

जेता मतिज्ञानावरण अर वीर्यान्तराय कर्म का क्षयोपशम होय, तेता मतिज्ञान प्रगट होय । जेता श्रुतज्ञानावरण अर वीर्यान्तराय का क्षयोपशम होय, तेता श्रुतज्ञान प्रगट होय । जेता अवधिज्ञानावरण अर वीर्यान्तराय का क्षयोपशम होय, तेता अवधिज्ञान प्रगट होय ।

ये तीनों ही ज्ञान दर्शनमोह का उदय करि उत्पन्न भया जो जीव के तत्त्वज्ञान रहित अतत्त्वश्रद्धान रूप मिथ्यात्व भाव ता सहित होय प्रवर्तें । तहां इनकों कुमति ज्ञान, कुश्रुत ज्ञान, कुअवधि ज्ञान कहिये ।

अर ये ही ज्ञान जहां मिथ्यात्व भाव रहित सम्यक्त्व भाव अर तत्त्वज्ञान सहित होय प्रवर्तें; तहां इन ही को सुज्ञान कहिये । ये तीनों कुज्ञान भाव वर्तमान भी दु:ख के कारण हैं, अर आगामी चर्तुगति संसार का कारण हैं ।

बहुरि ये तीनों कुज्ञान भाव गुणस्थान तौ मिथ्यात्व अर सासादन दोय विषैं पाईये हैं । अर मार्गणा **गति** – ४, **जाति** – ५, **काय** – ६, **योग** – आहारकद्विक बिना १३, **वेद** – ३, **कषाय** – २५, **ज्ञान-स्वकीय कुज्ञान** – ३, **असंयम** – १ **दर्शन** – चक्षु अचक्षु २, **लेश्या** – ६, **भव्य** – भव्य, अभव्य २, **सम्यक्त्व** – मिथ्यात्व, सासादन २, **संज्ञी** – संज्ञी-असंज्ञी २, **आहार** – आहारक, अनाहारक २ ।

इति श्री भावदीपिका ग्रंथ के क्षायोपशमिक भावाधिकार विषैं
प्रथम कुज्ञान अंतराधिकार पूर्ण भया ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सुज्ञान अन्तराधिकार

(दोहा)

सम्यक् सहित प्रमाण जे, च्यार ज्ञान तैं धीर ।
घाती कर्म को ध्वंस करि, नमूं केवली वीर ॥१॥

अब सुज्ञानाधिकार लिखिए हैं –

मतिज्ञानः–तीन सौ छत्तीस [३३६] भेद युक्त मतिज्ञान अपना स्वभाव जो सम्यक् भाव ता सहित होते संते सुज्ञान होय प्रमाणता को प्राप्त होय है । जीव को सुखदाई होय है; मोक्ष का कारण होय है ।

श्रुतज्ञानः– बहुरि याही मतिज्ञान पूर्वक उत्पन्न भया जो श्रुतज्ञान, सो भी प्रमाणता को प्राप्त होय है । सो प्रमाण श्रुतज्ञान के दो भेद – अंगप्रविष्ट अर अंगबाह्य ।

तहां अंग प्रविष्ट के द्वादश भेद हैं – आचारांग, सूत्रकृतांग, स्थानांग, समवायांग, व्याख्याप्रज्ञप्त्यंग, ज्ञातृधर्मकथांग, उपासकाध्ययनांग, अन्तःकृतदशांग, अनुत्तर-उपवाददशांग, प्रश्न व्याकरणांग, विपाकसूत्रांग, दृष्टिवादांग ।

अथ अंगबाह्य प्रकीर्णक के भेद १४ कहिए हैं – सामायिक, स्तवन, वन्दना, प्रतिक्रमण, वैनयिक, कृतकर्म, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, कल्पव्यवहार, कल्पाकल्प, महाकल्प, पुंडरीक, महापुंडरीक, निषधिक ।

ये दोनों मिल सम्पूर्ण श्रुतज्ञान के भेद होय हैं । सो सम्पूर्ण श्रुतज्ञान के अपुनरुक्त अक्षर एक घाटि इकट्ठी प्रमाण हैं ।

इकट्ठी कहा कहिये, सो कहिये हैं । पैंसठ हजार पांच सौ छत्तीस [६५५३६] ते पण्णट्ठी कहिये । बहुरि पण्णट्ठी प्रमाण कों पण्णट्ठी प्रमाण तैं गुणैं, बादाल होय है। [६५५३६×६५५३६=४२९४९६७२९६] इन दोनों सम प्रमाण कूं गुणैं चार सौ उनतीस कोडि गुणचास लाख सडसठ हजार दोय सौ छिणवै होय हैं । तहाँ बादाल प्रमाण को बादाल प्रमाण सौं गुणिये, तब इकट्ठी होय है । तिस इकट्ठी प्रमाण में सूँ एक अक्षर घटाय दीजै, तब [१८४४६७४४०७३७०९५५१६१५] इतने अक्षर प्रमाण होय । इतना अक्षर प्रमाण सर्व श्रुत का जानना ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि एक पद के अक्षर सोला सौ चौंतीस कोड़ि तिरयासी लाख सात हजार आठ सौ अठासी होय [१६३४८३०७८८८] है। इनका भाग सर्व श्रुत के अक्षरनि कौं दीजिए, तब एक सौ बार कोड़ि तिरयासी लाख अठावन हजार पांच [११२८३५८००५] पद भये। अवशेष अक्षर रहे जे आठ कोड़ि एक लाख आठ हजार एक सौ पिछहत्तर [८०१०८१७५] है, इन अक्षरनि कौं बत्तीस का भाग दीये, तब पचीस लाख तीन हजार तीन सौ अस्सी [२५०३३८०] तो श्लोक भये; अर पन्द्रह अक्षर अधिक रहै, इतने श्लोकनि प्रमाण चौदा प्रकीर्णक जाननी।

बहुरि एक पद के श्लोक इक्यावन कोड़ि आठ लाख चौरासी हजार छह सौ साड़ा एकीस होय [५१०८८४६२१½] होय।

तहां **प्रथम ही आचारांग सूत्र** के अठारह हजार पद [१८०००] हैं। ता विषैं मुनि के आचार का वर्णन है। कैसें चलिये, कैसें खड़ा रहिये, कैसें बैठिये, कैसें सोइये, कैसें वचन बोलिये, कैसें खाइये, कैसें मल-मूत्र खेपिये; ए सप्त प्रकार मुनि पद विषैं प्रवृत्ति है; तिनका वर्णन है।

सूत्रकृतांग दूसरा अंग – ताकै छत्तीस हजार पद [३६०००] तिन विषैं संक्षेप अर्थ को सूचै ऐसा जो परमागम, ताके निर्विघ्न अध्ययन की सिद्धि कै अर्थि ऐसी जे कारणभूत वैनयिक क्रिया विशेष; तिनका वर्णन है।

स्थानांग तीसरे अंग – ताके बयालीस हजार पद [४२०००] हैं। ता विषैं जीव पुद्गल के एक-एक स्थानक बधता वर्णन है। जैसे जीव संग्रह नय करि एक है; और व्यवहार नय की अपेक्षा करि जीव संसारी अर सिद्ध – ऐसे दोय स्थानक हैं। उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य – ऐसे तीन हैं, अर गति अपेक्षा चार है। उपशमादि अपेक्षा करि पंच भाव युक्त हैं – ऐसे पांच हैं। छह दिशा विषैं श्रेणीबद्ध गमन करन हारे हैं; ऐसे छह हैं। अर सप्त भंग वाणी करि उपयुक्त – ऐसे सात हैं। आठ कर्म की अपेक्षा करिए, तब आठ हैं। नौ पदार्थ रूप है विषय जाका, ऐसे अपेक्षा करि नव स्थानक हैं। बहुरि ऐसें ही पुद्गल सामान्यपने करि एक, अर विशेषपने अणु-स्कंध दोय भेद रूप है। इत्यादि एक-एक स्थानक बधता-बधता अनेक भेद का वर्णन है।

बहुरि समवायांग नाम चौथे अंग विषैं द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की समानता का वर्णन है। ताकै पदनि की संख्या एक लाख चौंसठ हजार [१६४०००] हैं।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तहां द्रव्य विषैं धर्म द्रव्य, अधर्म द्रव्य, संसारी एक जीव, वा मुक्त एक जीव वा लोकाकाश ए प्रदेशनिकरि समान हैं।

क्षेत्रापेक्षया प्रथम नरक के प्रथम पाथड़े को सीमन्तकनामा इन्द्रक बिला, अढाई दीप, प्रथम स्वर्ग के प्रथम पटल का ऋजु नामा इंद्रक विमान, सिद्ध शिला, सिद्ध क्षेत्र ये पंच क्षेत्र पैंतालीस लाख योजन प्रमाण समान हैं। बहुरि सातवें नरक का इंद्रक बिला, जम्बूदीप, सर्वार्थसिद्धि ए तीन स्थानक एक लाख योजन के समान प्रमाण वाले हैं।

बहुरि कालापेक्षया करि समय-समय समान है, आवली-आवली समान है। प्रथम नरक, भवनवासी, व्यंतरदेव इन विषैं दश-दश हजार वर्ष की जघन्य आयु समान है। सप्तम नरक विषैं वा सर्वार्थसिद्धि विषैं तैतीस सागर उत्कृष्ट आयु समान है; इत्यादि।

बहुरि भावापेक्षा करि केवल ज्ञान,केवल दर्शन समान है; इत्यादि समानता के अनेक भेद का वर्णन है।

बहुरि व्याख्याप्रज्ञप्ति नामा जो पंचम अंग – ताके पद दोय लाख अट्ठाईस हजार हैं। ता विषैं गणधर महाराज भगवान प्रति साठ हजार [६००००] प्रश्न किये – जीवादि द्रव्य अस्तिरूप हैं कि नास्तिरूप हैं? नित्य हैं कि अनित्य हैं? एक हैं कि अनेक हैं? व्यक्त हैं कि अव्यक्त हैं? इत्यादि प्रश्न अनेक कीये, तिनका भगवान ने उत्तर दीया, तिनका वर्णन है।

बहुरि ज्ञातृधर्म कथा नामा षष्ठम अंग है – ताकैं पांच लाख छप्पन हजार पद [५५६०००] हैं, ता विषैं नाथ जो परम यथार्थ भट्टारक श्री तीर्थंकर देव, तिनका धर्म तथा जीवादि पदार्थ का स्वभाव, तिनका वर्णन है। वा रत्नत्रय तथा दशलाक्षणीक आदि धर्म, तिनका वर्णन है। वा तीर्थंकर, चक्रवर्ती आदिक शलाका पुरुषनि की धर्म संबंधी कथा, तिनका वर्णन है – इत्यादि कथन है।

बहुरि उपासकाध्ययन नामा सातमां अंग – ताके पद ग्यारह लाख सत्तर हजार [११७००००] हैं। तहां उपासक जे श्रावक, चतुर्विधसंघ को दान पूजादिक करि सेवैं – तिनका कथन का वर्णन है। ता विषैं दर्शन प्रतिमा कूं आदि देइ एकादस प्रतिमा रूप श्रावक के आचार का वर्णन है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि अंतःकृतदशांग नामा अष्टम अंग – ताके पद तेईस लाख अट्ठाईस हजार संख्या प्रमाण [२३२८०००] हैं। ता विषैं एक-एक तीर्थंकर के बारे (काल में) दश दश अंतःकृतकेवली भये, तिनका ज्ञान कल्याणक अर निर्वाण कल्याणक साथ ही भये, तिनका वर्णन है।

बहुरि अनुत्तर उपपाददशांग नवमां अंग – ताके पद बाणवै लाख चवालीस हजार [९२४४०००] हैं। ता विषैं एक-एक केवली के समय दश-दश मुनि घोर उपसर्ग जीति, अनुत्तर विमानन विषैं उपजे, तिनका वर्णन है।

बहुरि प्रश्नव्याकरण दशम अंग – ताके पद संख्या तिराणवे लाख सोलह हजार [९३१६०००] हैं। तिस विषैं कोऊ लौकिक जीव आय प्रश्न पूछैं, आगामी शुभाशुभ को, वा गई वस्तु को, वा मूठी की आदि प्रच्छन्न वस्तु को, ताका उत्तर देने के विधान का वर्णन है। वा आक्षेपणी – धर्म की स्थापक, विक्षेपणी – अधर्म की उत्त्थापक, संवेगणी – धर्म का फल तथा धर्मात्मा सूं प्रीति वा रुचि की बढ़ावनहारी, निर्वेदनी – संसार शरीर भोगन सूं वैराग्य करावनहारी, ऐसी जे चार सुकथा, तिनका वर्णन है।

बहुरि विपाकसूत्र नामा ग्यारवां अंग – ताकै पदनि की संख्या एक कोड़ि चौरासी लाख [१८४०००००] हैं। ता विषैं कर्म का विपाक तीव्र, मंद जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट ताका सविस्तार वर्णन है।

ऐसें चार कोड़ि पंद्रह लाख दोय हजार [४१५०२०००] पद तो ग्यारह अंगन के हैं।

अर अवशेष एक सौ आठ कोड़ि अड़सठ लाख छप्पन हजार पाँच [१०८६८५६००५] पद, **दृष्टिवाद नामधेय बारहवां अंग का है**। इसमें मिथ्या दर्शन का निराकरण किया है। तिन विषैं दृष्टिवाद नामा बारहवां अंग का पाँच भेद हैं। जैसे – परिकर्म, सूत्र, प्रथमानुयोग, पूर्वगत, चूलिका। तिनमें परिकर्म के पदनि की संख्या एक कोड़ि एक्यासी लाख पाँच हजार [१८१०५०००] है। प्रथम तो ता विषैं गुणाकार, भागहार, वर्ग, वर्गमूल, घन, घनमूल, संकलन, व्यकलनरूप गणित ज्ञान के कारण – ऐसे करण सूत्र, तिनका वर्णन है।

बहुरि परिकर्म के भेद पांच – चन्द्र प्रज्ञप्ति, सूर्य प्रज्ञप्ति, जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति, द्वीप-समुद्र प्रज्ञप्ति, व्याख्या प्रज्ञप्ति। तहाँ प्रथम चंद्र प्रज्ञप्ति के छत्तीस लाख पाँच

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

हजार प्रमाण [३६०५०००] पद हैं, ता विषैं चन्द्रमा के विभव आदि का वर्णन है।

बहुरि दूसरे सूर्य प्रज्ञप्ति के पाँच लाख तीन हजार प्रमाण [५०३०००] पद हैं। ता विषैं सूर्य के विभवादि का वर्णन है।

बहुरि तीसरा जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति है, ताकै पद तीन लाख पच्चीस हजार [३२५०००] हैं। ता विषैं जम्बूद्वीप का वर्णन है।

बहुरि चौथा द्वीप-समुद्र प्रज्ञप्ति है। ताके बावन लाख छत्तीस हजार [५२३६०००] पद हैं। ता विषैं असंख्यात द्वीप-समुद्र का वर्णन है।

बहुरि पाँचवाँ व्याख्याप्रज्ञप्त्यंग है। ताकै चौरासी लाख छत्तीस हजार [८४३६०००] पद हैं। ता विषैं जीव-अजीवादि रूपी, अरूपी, पदार्थनि का वर्णन है। वा भव्य, अभव्य जीवनि के प्रमाण का वर्णन है।

बहुरि दूसरा भेद सूत्र – ताकै पद अठासी लाख [८८०००००] हैं। ता विषैं मिथ्यादृष्टि कुवादीनि के तीन सौ त्रेसठ [३६३] भेदनि का वर्णन है। कुवादी कहिये सर्वथा एकान्तवादी, सर्वथा वाद करि कहे हैं जीव अस्ति ही है, जीव नास्ति ही है, नित्य ही है, अनित्य ही है, एक ही है, अनेक ही है, व्यक्त ही है, अव्यक्त ही है, ज्ञात ही है, अज्ञात ही है, पर-प्रकाशक ही है, स्व-प्रकाशक ही है, अबन्ध ही है, बंधा ही है, कर्त्ता ही है, अकर्त्ता ही है, भोक्ता ही है, अभोक्ता ही है, गुण सहित ही है, निर्गुण ही है – इत्यादि एकान्तवाद का वा तिनके निराकरण का कथन है।

बहुरि तीसरा भेद प्रथमानुयोग – ताके पदनि की संख्या पांच हजार [५०००] हैं। ता विषैं त्रैसठ शलाका पुरुषन के चरित्र का वर्णन है।

बहुरि चौथा भेद पूर्व गत – ताकै साढ़ै पिच्यानवैं कोड़ि पांच [९५५००००००५] पद हैं। ताकै भेद चौदह – १. उत्पादपूर्व, २. आग्रायणी, ३. वीर्यानुवाद, ४. अस्ति-नास्तिप्रवाद, ५. ज्ञानप्रवाद, ६. सत्यप्रवाद, ७. आत्मप्रवाद, ८. कर्मप्रवाद, ९. प्रत्याख्यान १०. विद्यानुवाद, ११. कल्याणवाद, १२. प्राणवाद, १३. क्रियाविशालवाद, १४. लोक बिंदुसार, ऐसें चौदह पूर्व जानने।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

इन चौदह पूर्वनि विषैं एक सौ पिच्याणवें १९५ वस्तु हैं। तहां प्रथम पूर्व विषैं दश वस्तु हैं। दूसरे विषैं १४, तीसरे विषैं ८, चौथे विषैं १८, पाचवें विषैं १२, छठें विषैं १२, सातवें विषैं १६, आठवें विषैं २०, नवमें विषैं ३०, दशमें विषैं १५, ग्यारहवें विषैं १०, बारहवें विषैं १०, तेरहवें विषैं १०, चौदहवें विषैं १० – ऐसे चौदह पूर्व विषैं एक सौ पिच्याणवें वस्तु हैं।

बहुरि एक-एक वस्तु विषैं बीस-बीस प्राभृत हैं। तहां एक सौ पिच्याणवें के बीस करि गुणें तीन हजार नव सौ [१९५×२०=३९००] प्राभृत भये। बहुरि एक-एक प्राभृत विषैं चौबीस-चौबीस प्राभृतप्राभृत हैं। तहां तीन हजार नव सौं कूं चौबीस करि गुणें तिरानवें हजार छह सौ [३९००×२४=९३६००] प्राभृतप्राभृत चौदह पूर्वनि विषैं जानने।

अब प्रथम उत्पाद पूर्व के एक कोड़ि [१००००००००] पद हैं। ता विषैं उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य आदि अनेक धर्म का कथन है। तहां जीवादि वस्तुनि का नाना प्रकार नयविवक्षा करि क्रमवर्ती, युगपत अनेक धर्म, तिन करि भये जे उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य तीनों काल अपेक्षा नव धर्म भये। इन धर्म रूप परिणया वस्तु, सो भी नव प्रकार होय है। उपजा, उपजै है, उपजेगा; नष्ट भया, नष्ट होय है, नष्ट होयगा; स्थिर भया, स्थिर होय है, स्थिर होगा – ऐसे नव प्रकार द्रव्य भया। इन एक-एक द्रव्य के उत्पन्नादि नव-नव धर्म, ऐसैं नव कौं नव करि गुणें इक्यासी भेद लिये द्रव्य, ताका वर्णन है।

बहुरि दूसरा पूर्व आग्रायणी – ताकै पदनि की संख्या छिनवै लाख [९६०००००] हैं। ता द्वादशांग विषैं प्रधानभूत जो वस्तु, तिनका ज्ञान होय है। जातैं ऐसैं सात सौं सुनय अर दुरनय, बहुरि सप्त तत्त्व, नव पदार्थ, षट् द्रव्य इत्यादिकनि का वर्णन है।

बहुरि तीसरा पूर्व वीर्यानुवाद – ताकै पद सत्तर लाख [७००००००] हैं। ता विषैं जीवादि वस्तुनि की शक्ति – सामर्थ्य, ताका वर्णन है। तहां आतमा का वीर्य, पर का वीर्य, क्षेत्र वीर्य, काल वीर्य, भाव वीर्य, तप वीर्य इत्यादि द्रव्य, गुण, पर्यायनि का शक्ति रूप वीर्य का वर्णन है'

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि चौथा पूर्व अस्ति-नास्ति प्रवाद – ताके पद साठ लाख [६००००००] हैं। ता विषैं अनंतगुणात्मक जो जीवादिक वस्तु, तिनका अस्ति-नास्ति, नित्य-अनित्य आदि अनेक स्वभाव, तिन करि सप्त भंग थकी वस्तु कों साधकरि सिद्ध करी है। तहां सप्त भंग के नाम अस्ति-नास्ति भाव की अपेक्षा – अस्ति, नास्ति, अस्ति-नास्ति, अवक्तव्य, अस्ति अवक्तव्य, नास्ति अवक्तव्य, अस्ति-नास्ति अवक्तव्य –ऐसें वस्तु सप्त भंग स्वरूप है। यहां हरेक भंग के आदि में "स्यात्" पद लगाना। अर जो वस्तु कों सर्वथा अस्ति ही है, वा नास्ति ही है, वा अस्ति-नास्ति ही है, वा अवक्तव्य ही है, वा अस्ति अवक्तव्य ही है, वा नास्ति अवक्तव्य ही है, वा अस्ति-नास्ति अवक्तव्य ही है – ऐसा एक-एक नयकूं ही एकांत करि मानैं है, सो ही मिथ्यात्व भाव है। अर अनेकांत का आश्रय करि स्यादस्ति, स्यान्नास्ति, स्यादस्ति-नास्ति, स्यादवक्तव्य, स्यादस्ति अवक्तव्य, स्यान्नास्ति अवक्तव्य, स्यादस्ति-नास्ति अवक्तव्य ऐसैं कथंचित् प्रकार अस्ति है, कथंचित् प्रकार नास्ति है; कथंचित् प्रकार अस्ति नास्ति है; कथंचित् प्रकार अवक्तव्य है। ऐसै ही नित्य-अनित्य भावनि करि साधिये। तहां स्याद्वाद सम्यक्वाद है – ऐसा कथन या पूर्व विषैं हैं।

बहुरि पांचवां पूर्व ज्ञान प्रवाद – ताके पद एक घाटि एक कोड़ि [९९९९९९९] है। ता विषैं आठ ज्ञान का स्वरूप, भेद, स्वामी, विषय, फल, प्रमाण, अप्रमाण इत्यादि ज्ञान का वर्णन हैं।

बहुरि छठा पूर्व सत्य प्रवाद – ताके पद एक कोड़ि अर छह [१००००००६] प्रमाण है। ताकै विशेष सत्य वचन की मुख्यता लिये वर्णन है। ताके अर्थ वचन-गुप्ति, वचन संस्कार के कारण, वचन के प्रयोग, बारा प्रकार भाषा, दश प्रकार सत्य वचन, बहुत प्रकार मिथ्या वचन, बारा प्रकार भाषा वचन, बोलने वाले जीवनि के भेद इत्यादि कथन है। सत्य बोलना वा मौन धरना, सो वचनगुप्ति कहिये।

बहुरि वचन संस्कार के कारण दोय – स्थान और प्रयत्न। तहां स्थान आठ प्रकार – हृदय, कंठ, मस्तक, जिह्वामूल, दन्त, नासिका, तालु, ओठ।

बहुरि प्रयत्न चार प्रकार है – अंग का अंग तें स्पर्श भयैं बोलिये सो स्पृष्टता। किंचित् स्पर्श भयैं बोलिये सो ईषत् स्पृशता। अंग को उघाड़ि बोलिये सो विवृतता। अङ्ग कूं अङ्ग तें ढकि बोलिये सो ईषत् विवृतता।

बहुरि वचन प्रयोग दोय प्रकार – सुष्टरूप भला वचन, दुष्टरूप बुरा वचन।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बारा प्रकार भाषा "इसने ऐसा किया है" ऐसा अनिष्ट वचन, सो अभ्याख्यान कहिये। जाकरि विरुद्ध होय, सो कलह वचन है। पर का दोष प्रगट करनहारा वचन, सो पैशून्य वचन। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चार प्रकार पुरुषार्थ रहित वचन, सो परताप वचन। इंद्रियनि के विषयनि विषैं रति उपजावै, सो रति वचन। इंद्रियनि के विषयनि विषैं अरति उपजावै, सो अरति वचन कहिये। बहुरि व्यवहार विषैं ठगनेरूप वचन, सो निष्ठुर वचन। तप-ज्ञानादि विषैं अविनय का कारण वचन, सो अप्रणति वचन। चोरी का कारण, सो मोष वचन। भला मार्ग का उपदेशरूप वचन, सो सम्यग्दर्शन वचन। मिथ्या मार्ग के उपदेशरूप वचन, सो मिथ्या दर्शन वचन है। बहुरि परिग्रह के उपजावने की वा राखने की वा रक्षा करने की अशक्तता का कारण सो उपाधि वचन कहिए हैं।

बहुरि दस प्रकार सत्य वचन –

देश देश विषैं वस्तुनि के और और नाम हैं, सो ही कहना; सो जनपद सत्य कहिये।

बहुरि बहुत जीवन करि तैसें ही मानना, सर्व देशनि विषैं समान रूढ़ि नाम, सो संवृति सत्य कहिये; या इस ही की सम्मति सत्य कहिये।

बहुरि अन्य विषैं अन्य कूं स्थापन करि तिस मुख्य वस्तु का नाम कहना, सो स्थापना सत्य कहिये।

रत्नादिकरि निर्मापित चंद्रप्रभ तीर्थंकर की प्रतिमा कूं चंद्रप्रभ कहिये। अर जहां अन्य अपेक्षा रहित केवल व्यवहार निमित्त जिसका जो नाम होय, सो कहना; सो नाम सत्य कहिये।

अर जो पुद्गल विषैं अनेक गुण होत संतै जहां रूप की मुख्यता लिये वचन कहिये; सो रूप सत्य कहिये। जैसें किसी पुरुष को शुक्ल कहिये। यद्यपि वाके केशादिक श्याम हैं, वा रसादिक और गुण पाइये है, तिनकी मुख्यता न करी।

बहुरि विवक्षित वस्तु कूँ अन्य वस्तु की अपेक्षा करि हीन, अधिक, लघु, दीर्घ, सूक्ष्म, स्थूल आदि कहिये; सो प्रतीति सत्य है। याही का नाम आपेक्षिक सत्य कहिये। जातैं जाकूं लघु, दीर्घादिक रूप कहिये; तासौं अन्य द्रव्य लघु-दीर्घादिक पाइये है; परन्तु ताकी विवक्षा न लगाई।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जो नैगमादि नय की प्रधानता लिये वचन कहिये, सो व्यवहार सत्य कहिये। जैसें नैगमनय की प्रधानता करि ऐसा कहिये "भात पचै है" सो भात तौ पचे पीछे होगी; अभी तौ चांवल ही हैं। तथापि थोरे ही काल में भात होना है; तातैं नैगमनय की विवक्षा करि भात पर्याय करने योग्य द्रव्य अपेक्षा सत्य कहिये। नयनि के व्यवहार की अपेक्षा जैसै सत्वरूप कहिये, असत्वरूप कहिये इत्यादि वचन, सो व्यवहार सत्य कहिये।

बहुरि जो वस्तु विषैं शक्ति तो पाइये है अर क्रिया नाहीं करै है तो पण भी शक्ति की अपेक्षा करि तिस क्रिया को कर्त्ता कहिये; ऐसें संभावना सत्य कहिये। जैसें इंद्र जम्बूद्वीप के पलटावने को समर्थ है; ऐसा करना असंभव है; तथापि ताकी शक्ति की अपेक्षा परिहार करि वस्तु स्वभाव का विधानरूप जो संभावना; सो संभावना सत्य कहिये।

बहुरि अतीन्द्रिय पदार्थनि विषैं सिद्धांत अनुसार विधि-निषेध का संकल्परूप जो परिणाम, सो भाव सत्य कहिये। जैसें सूका, पचा, पीसा, यंत्र करि पैंल्या, वा खटाई लूनकरि मिश्रित भया होय, जो वस्तु, सो प्रासुक कहिये। यद्यपि तिन विषैं इंद्रिय अगोचर सूक्ष्म जीव पाइये है; तथापि आगम तैं प्रासुक-अप्रासुक का संकल्प रूप भाव के आश्रित ऐसा वचन, सो भाव सत्य कहिये।

बहुरि जो किसी प्रसिद्ध पदार्थ की किसी विषैं समानता कहिये, सो उपमा सत्य कहिये।

बहुरि जो बेंद्रिय आदि वक्ता वचन बोलने वाले तिन के भेद इत्यादि कथन है।

बहुरि सातवां आत्मप्रवाद पूर्व – ताके पदनि की संख्या छब्बीसकोड़ि [२६००००००] प्रमाण है। ता विषैं आत्मा का प्ररूपण है। आत्मा जीव है, सो जीव व्यवहार करि दश प्राण थकी, निश्चयनय करि चेतना प्राण थकी, पूर्वें जीवे था, वर्तमान विषैं जीवै है, आगैं जीवैगा, तातैं जीव कहिये। व्यवहार नय करि शुभाशुभ कर्म कों करै है; अर निश्चय नय करि चैतन्य पर्याय कों करै है; तातैं कर्त्ता कहिये। बहुरि व्यवहार करि सत्य-असत्य बचन बोले है; तातैं वक्ता कहिये। अर निश्चय नय करि आत्मा वक्ता नाहीं। बहुरि निश्चय-व्यवहार

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

करि प्राण याकै पाइये है, तातैं प्राणी कहिये। बहुरि व्यवहारकरि शुभाशुभकर्मफल को भोगै है; अर निश्चय नय करि निजस्वरूप कों भोगवे है; तातैं भोक्ता कहिये। बहुरि व्यवहार करि कर्म-नोकर्म पुद्गल कों पूरै है, गालै है; तातैं पुद्गल कहिये। निश्चय नय करि आत्मा पुद्गल है नाहीं। बहुरि निश्चय-व्यवहार दोऊ नयनि करि लोकालोक सम्बन्धी त्रिकालवर्ती सर्व को जानै है; तातैं वेदक कहिये। बहुरि व्यवहार करि अपने देह कों, केवलसमुद्घात करि सर्वलोक कों अर निश्चय नय करि ज्ञान में सर्वलोक-अलोक कों व्यापै है, तातैं विष्णु कहिये। बहुरि व्यवहार करि कर्म के वश तें यद्यपि संसार विषैं परिणमे है; तथापि निश्चय नय करि आत्मा स्वयं आप ही आप विषैं ज्ञान-दर्शनरूप ही परिणमे है, तातैं स्वयंभू कहिये, इत्यादि आत्मा का वर्णन है।

बहुरि आठवां कर्मप्रवाद पूर्व – ताके पद एक कोड़ि अस्सीलाख [१८००००००] हैं, ता विषैं कर्मनि की मूल प्रकृति वा उत्तर प्रकृति वा बंध, उदय, सत्वादिक का वर्णन है।

बहुरि नवमा प्रत्याख्यान पूर्व – ताके पद चौरासी लाख [८४०००००] हैं ता विषैं प्रत्याख्यान का वर्णन है। प्रत्याख्यान कहिये निषेधिये है पाप जाकरि तातैं प्रत्याख्यान कहिये। यामें नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव अपेक्षा जीवनि का संहनन, वीर्य, बल इत्यादिकनि के अनुसार काल मर्यादा लिये वा जावज्जीव प्रत्याख्यान का उपदेश है।

बहुरि विद्यानुवाद दशमां पूर्व – ताके पद एक कोड़ि दस लाख [११००००००] हैं, ता विषैं पांच सौ रोहण्यादि महाविद्या अर सात सौ क्षुद्र विद्या, तिनका स्वरूप, सामर्थ्य, साधनभूत मंत्र, यंत्र वा पूजा विधान सिद्धि भये, उन विधान का फल इत्यादि वर्णन हैं। बहुरि अष्ट प्रकार महा निमित्तज्ञान का कथन है।

बहुरि ग्याहरवां कल्याणवाद पूर्व है – ताके पद छब्बीस कोड़ि [२६००००००००] हैं। ता विषैं त्रेसठ शलाका पुरुषनि के गर्भ कल्याणकादि महा उत्सव का वर्णन है। बहुरि तिनके कारणभूत षोडस भावना वा तपश्चरणादि क्रिया, तिनका वर्णन है। वा ग्रहादिक गमन, ग्रहण, शकुनफल इत्यादि कथन है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि बारहवां प्राणवाद पूर्व है – ताकेपद तेरह कोड़ि [१३००००००] हैं। ता विषैं चिकित्सा आदि आठ प्रकार वैद्यक का वा भूतादि व्याधि दूर करने के कारण मंत्रादिक वा विष दूर करनहारे मंत्र औषधादिक वा इला, पिंगला, सुषुम्ना, तीन पवन साधने का विधान वा स्वरोदय रूप बहुत प्रकार श्वासोच्छ्वास का भेद इत्यादि का वर्णन है।

बहुरि तेरहवां क्रियाविशाल नामा पूर्व–ताके पद नवकोड़ि [९००००००] हैं, ता विषैं संगीत शास्त्र, छंद, अलंकारादि शास्त्र, पुरुषनि के बहत्तर कला चौंसठ स्त्रीनि का गुण, अनेक प्रकार शिल्पादि चातुर्यता, गर्भाधानादि चौरासी क्रिया, सम्यग्दर्शनादि एक सौ आठ क्रिया, देववंदनादि पच्चीस क्रिया, वा निमित्त-नैमित्तिक क्रिया इत्यादि का प्ररूपण है।

बहुरी चौदहवां लोकबिंदुसार पूर्व है – ताके पद साढ़े बारह कोड़ि [१२५००००००] हैं, ता विषैं तीन लोक का स्वरूप है, तथा छब्बीस परिकर्म, आठ व्यवहार, च्यार बीज, इत्यादि गणित अर मोक्ष का स्वरूप, मोक्ष की कारणभूत क्रिया, मोक्ष का सुख इत्यादि वर्णव है।

अब चूलिका के पंच भेद कहिये हैं –

ताके पद दश कोड़ि उनंचास लाख छियालीस हजार [१०४९४६०००] हैं। ताके भेद पांच हैं – जलगता, स्थलगता, मायागता, रूपगता और आकाशगता। इनके एक-एक भेद के दोय कोड़ि नव लाख नवासी हजार दोय सौ पद [२०९८९२००] हैं।

तहां जलगता विषैं – जल के स्तंभन का वा जल विषैं प्रवेश करने का, जल विषैं गमन करने का, वा जल बर्षाने का, वा अग्नि विषैं प्रवेश करने का, वा अग्नि भखने का, वा अग्नि प्रजालने का, वा अग्नि बुझावने का, अग्नि बंध करने का इत्यादिकनि के कारणभूत मंत्र-यंत्र-तंत्र, औषधि क्रिया, तपश्चरणादिक का वर्णन है।

बहुरि स्थलगता विषैं – मेरु आदिक पर्वतनि विषैं प्रवेश करने का, वा शीघ्र गमन करने का, वा पृथ्वी विषैं पैठ जाना इत्यादिकनि के कारणभूत मंत्र-यंत्र-तंत्र, औषधि, तपश्चरणादिकनि का वर्णन है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि मायागता विषैं – अनेक विक्रिया करने का, वा इंद्रजालादि विद्या के साधनभूत मंत्र-यंत्र-तंत्र, औषधि, क्रियादि का वर्णन है ।

बहुरि रूपगता विषैं – अनेक हस्ती, घोटक, सिंह, मृगादिक रूप पलटने का, वा धातु रसादिकनि के मारने का, करने का इत्यादिकनि के साधनभूत मंत्र, यंत्र, तंत्र, औषधि, तपश्चरणादिक का विधान वर्णन है ।

अर आकाशगता विषैं – आकाश विषैं गमन करने का उपाय, मंत्र-यंत्र-तंत्र, क्रिया, तपश्चरणादि का विधान वर्णन है । इति द्वादशांग निरूपणम् ।

अब अंग बाह्य चौदह प्रकीर्णकनि का स्वरूप कहिये हैं –

प्रथम सामायिक प्रकीर्णक विषैं – षट् प्रकार सामायिक का निरूपण, नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, इन छह प्रकार पदार्थनि विषैं सम भाव कह्या । इनकों राग-द्वेष रहित देखना-जानना, ताका नाम सामायिक है; ताका वर्णन है । बहुरि ताके साधनभूत द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव संबंधी क्रिया आलंबन इत्यादि वर्णन है ।

स्तवनप्रकीर्णक विषैं – चौबीस तीर्थंकर के स्तवन करने का विधान वर्णन है ।

बहुरि वंदना प्रकीर्णक विषैं – एक-एक तीर्थंकर की, वा प्रतिमाजी की, वा चैत्यालय की स्तुति करने का विधान वर्णन है ।

बहुरि प्रतिक्रमण प्रकीर्णक विषैं – सप्त प्रकार प्रतिक्रमण करने का विधान वर्णन है । दैवसिक, रात्रिक, पाक्षिक, चातुर्मासिक, सांवत्सरिक, ईर्यापथिक, उत्तमार्थक कहिये सर्व पर्याय संबंधी पाप को मरन समय त्याग करै; इत्यादि का वर्णन है ।

अरु वैनयिक प्रकीर्णक विषैं – पंच प्रकार विनय का विधान है । दर्शनविनय, ज्ञान विनय, चारित्र विनय, तप विनय, उपचार विनय । उपचार विनय कहिये दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप के धारक पंच परमेष्ठी तिनका विनय इत्यादि वर्णन है ।

कृतकर्म प्रकीर्णक विषैं – श्रावक की क्रिया को विधान वा पंच परमेष्ठी की प्रदक्षिणा, नमस्कार, आवर्तन इत्यादि का वर्णन है ।

बहुरि दशवैकालिक प्रकीर्णक विषैं – मुनि का आचार, आहार की शुद्धता का लक्षण इत्यादि वर्णन है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि उत्तराध्ययन प्रकीणक विषैं – चार प्रकार उपसर्ग का वर्णन है। देवकृत, मनुष्यकृत, तिर्यंचकृत, अकस्मात पुद्‌गल कृत, इनके बाईस परिषह का विधान वर्णन है।

बहुरि कल्पव्यवहार प्रकीर्णक विषैं – योग्य-अयोग्य आचरण का विधान वा अयोग्य आचरण होतै प्रायश्चित प्ररुपिये है – इत्यादि वर्णन है।

बहुरि कल्पाकल्प प्रकीर्णक विषैं – द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की, अपेक्षा योग्य-अयोग्य आचरण का विधान का वर्णन है।

अर महाकल्प प्रकीर्णक विषैं – महान पुरुषनि के योग्य आचरण का कथन है।

बहुरि पुंडरीक प्रकीर्णक विषैं – दान, पूजा, तपश्चरण, अकामनिर्जरा, सम्यक्त्व, संयमादि रूप देव पर्याय का कारणभूत पुण्य, ताका वर्णन है।

बहुरि महापुडरीक प्रकीर्णक विषैं – अहमिंद्रादि बड़े पद पावने का कारण-भूत पुण्य, ताका वर्णन है।

बहुरि निषद्धि प्रकीर्णक विषैं – प्रमाद करि किया दोष, ताकैं निराकरण कै अर्थि प्रायश्चित्त विधान का वर्णन है।

ये प्रमाणभूत सुश्रुत ज्ञान कह्या। जहां जैसा-जैसा श्रुतज्ञानावरण का क्षयोपशम होय, तैसा-तैसा जीव कैं शास्त्र का ज्ञान होय है। तहां तैसा-तैसा ही क्षायोपशमिक भाव कहिये।

अवधिज्ञान

अब अवधिज्ञान क्षायोपशमिक भाव का भेद कहिये हैं – अवधिज्ञान के ३ भेद – देशावधि, परमावधि, सर्वावधि। तहां देशावधि के दोय भेद, एक भव प्रत्यय दूजा गुण प्रत्यय।

तहां भव ही है कारण जाकूं, सो भव प्रत्यय कहिये; सो देव कैं वा नारकीनि कैं वा गृहस्थ अवस्था विषैं तीर्थंकर के होय। तातैं जो जीव देव, नारको की पर्याय पावे, ताकैं अवधि होय ही है; वा तीर्थंकर पद के धारक कैं होय ही। या भव प्रत्यय अवधि का विषय सर्व आतम प्रदेश तैं है। सर्व ही आतम प्रदेशनि थकी अपने-अपने विषय योग्य पदार्थनि कों जाने।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि सम्यक्त्व, संयमादिक के प्रभाव तें होय; सो गुण प्रत्यय कहिये। सो गुण प्रत्यय अवधि मनुष्य वा पंचेन्द्रिय तिर्यंच कें होय। याका विषय नाभि ऊपर शंखादिक के आकार धरया कितनाक आत्म प्रदेशनि तें अपने योग्य विषय कों जानें; सर्व प्रदेशनि सौं न जानै। ताका छह – भेद वर्द्धमान, हीयमान अवस्थित, अनवस्थित, अनुगामिनी, अननुगामिनि।

जो अवधिज्ञान का उत्पत्ति काल सो बधता जाय सर्वावधि पर्यंत, सो बर्धमान कहिये। जो उत्पत्ति काल सौं घटता जाय अपने नाश पर्यंत, सो ही हीय-मान कहिये। अरु जो जैसे उपजा था तैसें ही रहै, सो अवस्थित कहिये। बहुरि जो कदै घट जाय अरु कदै बढ़ जाय, सो अनवस्थित कहिये। बहुरि अनुगामिनि के दो भेद – जो सर्व क्षेत्र विषें(साथ)लार रहै, सो क्षेत्रानुगामिनि कहिये। अर जो पर भव विषैं भी लार ही जाय, सो भवानुगामिनि कहिये। अननुगामिनि के दोय भेद – जो जिस क्षेत्र विषैं उपजा होय तिस ही क्षेत्र विषें रहै, अन्य क्षेत्र में अभाव होय; सो क्षेत्राननुगामिनि कहिये। बहुरि जो जिस पर्याय विषें उपजी होय, तिस ही पर्याय विषें रहे; अन्य पर्याय विषें लार न जाय, सोभवाननुगामिनिकहिये।

बहुरि देशावधि के असंख्यात लोकप्रमाण भेद हैं। जहां जघन्य देशावधि वाले जीव द्रव्यापक्षेया तो द्वयर्ध हानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण औदारिक शरीर की सत्ता को द्रव्य विश्रसोपचय प्रमाण सहित, ताको लोकमात्र असंख्यात का भाग दीजै जो प्रमाण आवै, तितना स्कंध की जानै, इनतें एक परमाणू घाट की भी न जानै; अरु इनसौं बाध स्कंध होय, ताकी तो जानै ही जानै।

अर क्षेत्रापेक्षया घनावली के असंख्यातवें भाग प्रमाण जो सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्त जीव कै शरीर की अवगाहना का क्षेत्र, तितने क्षेत्र की जानै, अधिक क्षेत्र की न जानै।

बहुरि कालापेक्षया आवलि के असंख्यातवें भाग की जानै।

अर भावापेक्षया भी आवली के असंख्यातवैं भाग प्रमाण भावां की जानै ऐसा तो देशावधि का जघन्य भेद है। बहुरि सिद्ध राशि के अनंतवें भाग अर अभव्य राशि सौं अनंतगुणा ऐसा जो कोई अनंत प्रमाण, ताकौ भाग देशावधि का जो जघन्य भेद का द्रव्य, ताकौं दीजै जो प्रमाण आवै, तितना द्रव्यापेक्षया दूजा भेद वाला जानें। ऐसै तिस ही भाग का दूसरे भेद के द्रव्य को दीये जो प्रमाण

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आवै, तितने स्कंध को तीसरे भेदवाला जानैं। ऐसें ही पूर्व-पूर्व स्थानक ने इस ही ध्रुव भागहार का भाग दीये जो-जो प्रमाण आवैं, तितने-तितने स्कंध कों उत्तर उत्तर भेद वाला जानै; सो असंख्यात स्थानक द्रव्यापेक्षया होय। तहां पर्यंत उतने ही क्षेत्र काल की जानै। पीछै एक प्रदेश क्षेत्र की अधिक जानै। पीछे बहुरि द्रव्यापेक्षा असंख्यात स्थानक होय, तहां पर्यन्त उतना ही क्षेत्र की जानैं। पीछै एक प्रदेश और वधते क्षेत्र की जानै। ऐसें क्षेत्रापेक्षया असंख्यात स्थानक होय; तहां पर्यंत तो उतने ही काल की जानै। पीछै एक समयाधिक काल की जानै। ऐसें फिर क्षेत्रापेक्षया असंख्यात स्थानक होय चुकैं, तब एक समय बधते काल की जानै। ऐसें फेरि क्षेत्र अपेक्षा असंख्यात स्थानक होय होय निमड़े, तब जहां एक हाथ क्षेत्र प्रमाण की जानैं; तहां असंख्यात घनावली प्रमाण काल की जानै। बहुरि जहां एक कोश क्षेत्र की जानै, तहां अंतरमुहूर्त काल की जानैं। बहुरि जहां एक जोजन की जानै, सो एक समय घाटि दोय घड़ी प्रमाण अभ्यन्तर मुहूर्त्त ता प्रमाण काल की जानै।

बहुरि जो पच्चीस जोजन क्षेत्र प्रमाण की जानैं, सो किछु घाटि एक दिन काल की जानै। जो भरत क्षेत्र की जानै, सो एक पक्ष काल की जानै। क्षेत्रापेक्षया जो जंबूदीप की जानै, सो एक मास काल की जानै। अर जो अढ़ाई द्वीप की जानैं, सो छह मास काल की जानै। अर जो तेरहवां रुचिक द्वीप, ताईं की जानै; सो सात आठ वर्ष काल की जानै। अर जो संख्यात द्वीप समुद्रां की जानै, सो संख्यात वर्ष काल की जानै। अर जो असंख्यात द्वीप-समुद्र की जानै, सो असंख्यात वर्ष काल की जानै। जो द्रव्यापेक्षया तैजस शरीर की जानै, सो असंख्यात कोड़ि जोजन की जानै। सो असंख्यात हजार वर्ष काल की जानै। ऐसें असंख्यात लोक प्रमाण स्थानक होय चुकैं, तब उत्कृष्ट देशावधि वाला द्रव्यापेक्षया तो कार्माण वर्गणा नैं एक बार ध्रुव भागहार को भाग दीयां जो प्रमाण आवे, तितने द्रव्य स्कंध की जानै। क्षेत्रापेक्षया लोक प्रमाण क्षेत्र की जानैं अर कालापेक्षया एक समय घाटि पल्य प्रमाण काल की जानै। अर भावापेक्षया असंख्यात लोक प्रमाण भावां की जानै। प्रथम जघन्य स्थानक विषैं आवली के असंख्यातवें भाग प्रमाण भावां की जानै; अर अपने विषय क्षेत्र विषैं तिष्ठते अपने विषय योग्य पुद्गल स्कंध, तिनके अर्थ पर्याय वा व्यंजन पर्याय की जानै। पीछै स्थान-स्थान प्रति असंख्यात गुणा भावां की जानै।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अब चारों गति जीवां प्रति अवधि का प्रमाण कहिये हैं – प्रथम नरकगति विषैं कहिये हैं। सातवें नरक के नारकी एक कोश प्रमाण क्षेत्र की जानें। अर छठवें नरक वाला डेढ़ कोस की, अर पाचवें वाला दोय कोस की, अर चौथे वाला अढ़ाई कोस की, अर तीसरे वाला तीन कोस की, अर दूसरे वाला साड़े तीन कोस की, अर पहिले वाला एक जोजन की जानै।

बहुरि तिर्यंच के जघन्य के भेद सों लगाय मध्य के भेद में जहां तैजस शरीर प्रमाण द्रव्यापेक्षया जानै, क्षेत्रापेक्षया असंख्यात द्वीप समुद्र की जानैं। अर कालापेक्षया असंख्यात वर्ष की जानै।

अर मनुष्य गति विषैं जघन्य देशावधि भेद सौं लगाय, सर्वावधि पर्यन्त सर्व भेद होय।

बहुरि देव गति विषैं, भवनवासी अर व्यंतर जघन्य क्षेत्र अपेक्षा तो पच्चीस योजन की जानै। और कालापेक्षया कुछ घाट एक दिन की जानें जोतिषी देव जघन्य क्षेत्रापेक्षया तो भवनवासी-व्यंतरदेवन सौं संख्यात गुणा क्षेत्र की जानै अरु कालापेक्षया किछू अधिक काल की जानै। बहुरि उत्कृष्ट असुर कुमार जाति का देव क्षेत्रापेक्षया तो असंख्यात कोड़ि जोजन की जानै। अरु उर्ध्व मेरु के शिखर पर्यंत की जानै। अरु नीचै बहुत स्तोक जानै। अरु कालापेक्षया असंख्यात वर्ष की जानै।

बहुरि नव जाति का भवनवासी देव अर आठ जाति का व्यंतर वा पांच प्रकार का ज्योतिषी देव क्षेत्रापेक्षया तो असंख्यात हजार जोजन की जानै। अर असुर कुमार तो असंख्यातवां भाग काल की जानैं।

बहुरि कल्पवासी देव सौधर्म-ईशान प्रथम युगल का देव प्रथम नरक पर्यंत अवधिज्ञान करि देखे। बहुरि सानत्कुमार-माहेन्द्र युगल का देव दूसरे नरक पर्यंत की जानै। बहुरि ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर अर लांतव-कापिष्ट दोय युगलनि का अवधिज्ञान तीसरे नरक पर्यंत है। बहुरि शुक्र-महाशुक्र अर सतार-सहस्रार दोय युगल का अवधिज्ञान चौथे नरक पर्यंत जानै। अर आनत-प्राणत, आरण-अच्युत इन दोय युगलन विषैं के देव पांचवें नरक पर्यंत की जानै। बहुरि नव ग्रैवेयक कै देव छठे नरक पर्यंत जानैं। अर अनुदिश विमान वाला देव, सातवें नरक पर्यंत जानैं। अर पंच अनुत्तर विमान वाला देव, लोक के अंत पर्यंत जानै। बहुरि द्रव्य अपेक्षा अपना-अपना अवधिज्ञानावरण कर्म का द्रव्य विश्रसोपचय रहित, ताकौं

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अपना-अपना जितना अवधि का क्षेत्र का प्रदेश होय, तितनी बार ध्रुव भागाहार का भाग दीजै, ऐसा करतैं जो प्रमाण आवै, तितने-तितने द्रव्य स्कंध की जानै।

अब परमावधि कहिये – देशावधि का जो उत्कृष्ट भेद, सो परमावधि का जघन्य भेद वाला द्रव्यापेक्षया तो देशावधि के उत्कृष्ट द्रव्य नैं ध्रुव भागहार का भाग दिया जो प्रमाण आवे, तितने द्रव्य को जानै। अर क्षेत्रापेक्षया असंख्यात गुणा क्षेत्र को जानै। अर कालापेक्षया असंख्यात गुणे काल को जानै। अर भावापेक्षया असंख्यात गुणे भावों को जानै। बहुरि पीछै अनुक्रम तैं स्थान प्रति असंख्यात-असंख्यात गुणा क्षेत्र, काल, भाव को अधिक-अधिक जानै। ध्रुव भागहार करि भाजित द्रव्य को जानैं। या प्रकार परमावधि का स्थानक असंख्यात लोक प्रमाण है। बहुरि उत्कृष्ट परमावधि वाला द्रव्यापेक्षया तौ ध्रुव भागहार प्रमाणं द्रव्य की जानै। अर क्षेत्रापेक्षया देशावधि का उत्कृष्ट लोक प्रमाण क्षेत्र को तीन बार असंख्यात लोक का गुणाकार करि ता प्रमाण असंख्यात लोक प्रमाण क्षेत्र को जानै। बहुरि कालापेक्षया समय घाटि आवलि प्रमाण काल को तीन बार असंख्यात लोक गुणित असंख्यात लोक प्रमाण काल को जानै। अर भावापेक्षया असंख्यात लोक को तीन बार असंख्यात लोक गुणित भावां की जानै।

अब सर्वावधि कहिये – सर्वावधि वाला द्रव्यापेक्षया तो अविभागी पुद्गल परमाणु को जानै। अर क्षेत्रापेक्षया परमावधि का उत्कृष्ट क्षेत्र, सो असंख्यात लोक गुणा क्षेत्र को जानै। अर कालापेक्षया असंख्यात लोक गुणा काल को जानै। अर भावापेक्षया असंख्यात लोक गुणा भावां को जानै।

मनःपर्ययज्ञान

आगे मनःपर्यय ज्ञान क्षायोपशमिक भाव का निरूपण करिये हैं – मनःपर्यय ज्ञानावरण कर्म का जैसा क्षयोपशम भाव होय है, तैसैं ही भेद कौं लिये मनःपर्यय-ज्ञान जीव के होय है। सो याके भेद असंख्यात हैं अर मूलभेद दोय हैं – एक ऋजु-मति, दूजा विपुलमति।

अन्य जीव के मन विषैं चिंतवन रूप प्राप्त भया अर्थ कहिये रूपी पुद्गल द्रव्य वा पुद्गल संबंध कौं धरचां संसारी जीवद्रव्य, तिनकौं जानैं, सो मनःपर्ययज्ञान कहिये।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अर जहाँ त्रिकाल संबंधी पुद्गल द्रव्य कौं कोई जीव वर्तमान काल विषैं चिंतवन करै है, ताकौं जानै, सो ऋजुमति मनःपर्यय ज्ञान कहिये ।

बहुरि त्रिकाल संबंधी पुद्गल द्रव्य कों कोई जीव अतीत काल विषैं चिंतया था, वर्तमान काल विषैं चितवै है, वा आधा सा चिंतया वा आगामी काल विषैं चिंतवैगा ऐसा विना चिंतया, ताकौं जानै, सो विपुलमति मनःपर्ययज्ञान कहिये ।

जैसें कोई जीव त्रिकाल संबंधी पुद्गल द्रव्यों को मन करि चिंतया था, वा वचन करि कह्या था, वा काय करि किया था; सो कालांतर विषैं भूलि गया; याद करने को समर्थ न भया, तब आय करि ऋजुमति मनःपर्यय ज्ञानी कूं पूंछता भया वा पूंछने की इच्छा धारि मौन ही तैं खड़ा रहा; ताकैं सर्व चिंतवन कूं ऋजुमति मनःपर्यय ज्ञानी जानै । सो प्रथम तो ईहा नामा मतिज्ञान करि ऐसा विचारै कि जो याके मन विषैं कहा है ? पीछैं सर्व जानै; जातैं मन विषैं ही ईहादि मतिज्ञान होय है, अर मन ही विषैं मनःपर्ययज्ञान होय है ।

बहुरि कोई जीव त्रिकाल संबंधी पुद्गल द्रव्य कों मन विषैं चिंतया था वा वचन करि कह्या था वा काय करि किया था, बहुरि कालांतर विषैं भूल गया; याद करने को समर्थ न भया; सो आय करि विपुलमति मनःपर्ययज्ञानी को पूंछा वा पूंछने का अभिप्राय धारि मौन ही तैं खड़ा रहा; ता नर का सर्व ही चिंतवन कूं बिना ही ईहा मतिज्ञान के विपुलमति मनःपर्ययज्ञानी जानै ।

अब इन दोनों ही भेदनि का द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अपेक्षा असंख्यात भेद हैं; सो ही कहिये । ऋजुमति वालौ जघन्य द्रव्यापेक्षा तौ निर्जरवा योग्य औदारिक का समय प्रबद्ध, तितने स्कंध के चिंतवन की जानै । अरु क्षेत्रापेक्षया दोय, तीन कोसा की वा कालापेक्षया दोय, तीन भव की; भावापेक्षया आवली के असंख्यातवें भाग प्रमाण भावों के चिंतवन की जानै । बहुरि उत्कृष्ट द्रव्यापेक्षया तौ निरजरवा योग्य चक्षु इन्द्रिय कों समय प्रबद्ध जो अंगुल के असंख्यातवें भाग, ता प्रमाण स्कंध के चिंतवन की जानै । अर क्षेत्रापेक्षया सात-आठ जोजन की जानै । अर कालापेक्षया सात-आठ भवां की जानै । अर भावापेक्षया जघन्य तो असंख्यात गुणां भावों के चिंतवन की जानै ।

बहुरि विपुलमति वाला जघन्य तो द्रव्यापेक्षया ऋजुमति के उत्कृष्ट द्रव्य कौं ध्रुव भागहार जो मनोवर्गणा के अनंत भेद हैं, ताका अनंतवां भाग प्रमाण का

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

भाग दीयें जो प्रमाण आवै, सो तितने स्कंध के चितवन की जानै। बहुरि क्षेत्रापेक्षया आठ-नौ योजन की जानै। बहुरि काल अपेक्षया आठ-नौ भव की जानै। बहुरि भावापेक्षया उत्कृष्ट ऋजुमति वालो जितने भावों के चितवन को जानै, तासौं असंख्यात गुणे भावों के चितवन को जानै। बहुरि दूसरे भेद वाला द्रव्यापेक्षा तो ज्ञानावरणादि आठ कर्म को समय प्रबद्ध, ताकों ध्रुव भागहार को भाग दिया जो प्रमाण आवे, तितने द्रव्य के चितवन को जानै। बहुरि ऐसे ही ध्रुव भागाहार का भाग दूसरे स्थानक को विषयभूत द्रव्य को दीजै जो प्रमाण आवै, तितने स्कंध के तीसरे भेद वाला जानै – ऐसे ही स्थान-स्थान प्रति ध्रुव भागहार का भाग दिये जानै, तहां बीस कोड़ा-कोड़ि सागर प्रमाण कल्पकाल के जेता समय होय, तितनी बार ध्रुव भागहार का भाग दिया जो प्रमाण आवे, तितने द्रव्य स्कंध के चितवन को उत्कृष्ट विपुलमति मनःपर्यय ज्ञानी जानै। बहुरि क्षेत्रापेक्षया पैंतालीस लाख योजन प्रमाण चतुरस्र क्षेत्र की जानै। तहां अढ़ाई द्वीप विषैं पैंतालीस लाख योजन गोल क्षेत्र है। तिन विषैं तिष्ठते सैनी पंचेंद्रिय के मन की जानै वा अढ़ाई द्वीप के बाहर चारों कोणनि में तिष्ठता देव-तिर्यंच, तिनके भी मन के चितवन को जानै। बहुरि कालापेक्षया पल्य का असंख्यातवां भाग प्रमाण काल की जानै। भावापेक्षया असंख्यात लोक प्रमाण भावों को जानै। यह मनःपर्ययज्ञान परम संयम के धारक ऋद्धिधारी मुनि के होय है।

बहुरि ऋजुमति तो विशुद्ध हैं अर विपुल मति विशुद्धतर है। बहुरि ऋजुमति तो प्रतिपाति है, अरु विपुलमति अप्रतिपाति है। जातैं ऋजुमतिवाला कूं तो तद्भव भी मोक्ष हो जाय ही, जो पड़ैं तौ एक भव मनुष्य का और भी ले। अर विपुलमति तद्भव ही मोक्षगामी होय।

अब ए चारों ही सुज्ञान – मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय क्षायोपशमिक भाव, सो वर्तमान भी सुख का कारण, अरु आगामी संसार सुख का भी वा मोक्ष सुख का कारण है।

बहुरि मति, श्रुत, अवधि ये तीन ज्ञान तो गुणस्थान चौथे असंयम सौं लगाय बारहवें क्षीण कषाय पर्यंत हैं। अर मार्गणा **गति**– ४, **जाति**–पंचेंद्रिय, **काय** – त्रस, **योग** – १५, **वेद** – ३, **कषाय** – अनन्तानुबन्धी चार बिना २१, **ज्ञान** – स्वकीय, **संयम** – ७, **दर्शन** – केवल बिना ३, **लेश्या** – ६, **भव्य** – १, **सम्यक्त्व** – क्षायोपशमिक, क्षायिक, औपशमिक ३, **संज्ञी** – १, आहारक, अनाहारक २ इन विषैं प्रवर्तें है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि मनःपर्यय ज्ञान गुणस्थान तौ छठवें प्रमत्त तैं लगाय बारहवें क्षीण कषाय पर्यंत सात गुणस्थान विषैं पाईये । अर मार्गणा – **गति** – मनुष्य, – **जाति** पंचेंद्रिय, **काय** – त्रस, योग ९ (चार मनोयोग, चार वचनयोग, औदारिक काययोग) **वेद** – पुरुष, **कषाय** – संज्वलन चतुष्क अर छह हास्यादिक, अर **ज्ञान** – स्वकीय १, **संयम** – सामायिक, छेदोपस्थापना, सूक्ष्मसांपराय, यथाख्यात । **दर्शन** – केवल बिना तीन, **लेश्या** – पीत, पद्म, शुक्ल ३, **भव्य**–१, **सम्यक्त्व** – औपशमिक, क्षायोपशमिक, क्षायिक, **संज्ञी** १, **आहारक** १ ।

इति श्री भावदीपिका ग्रंथ के क्षायोपशमिक भाव अधिकार विषैं दूसरा चार सुज्ञान क्षायोपशमिक भावांतराधिकार समाप्त भया ।

'अवधि' शब्द से तात्पर्य......

अवधि, मर्यादा और सीमा ये शब्द एकार्थवाची हैं । अवधि से सहचरित ज्ञान भी अवधि कहलाता है । इस प्रकार अवधिरूप जो ज्ञान है, वह अवधि-ज्ञान है । यदि कहा जाय कि अवधिज्ञान का इस प्रकार लक्षण करने पर मर्यादा-रूप मतिज्ञान आदि अलक्ष्यों में यह लक्षण चला जाता है, इसलिए अतिव्याप्ति दोष प्राप्त होता है, सो भी बात नहीं है; क्योंकि रूढ़ि की मुख्यता से किसी एक ही ज्ञान में अवधि शब्द की प्रवृत्ति होती है ।

शंका – अवधिज्ञान में अवधि शब्द का प्रयोग किसलिये किया ?

समाधान – इससे नीचे के सभी ज्ञान सावधि हैं और ऊपर का केवल-ज्ञान निरवधि है, इस बात का ज्ञान कराने के लिये अवधिज्ञान में अवधि शब्द का प्रयोग किया है ।

यदि कहा जाय कि इसप्रकार का कथन करने पर मनःपर्ययज्ञान से व्यभिचार दोष आता है, सो भी बात नहीं है; क्योंकि मनःपर्ययज्ञान ज्ञान भी अवधिज्ञान से अल्पविषयवाला है, इसलिये विषय की अपेक्षा उसे अवधिज्ञान से नीचे का स्वीकार किया है । फिर भी संयम के साथ रहने के कारण मनःपर्ययज्ञान में जो विशेषता आती है, उस विशेषता को दिखलाने के लिये मनःपर्ययज्ञान को अवधिज्ञान से नीचे न रखकर ऊपर रखा है, इसलिये कोई दोष नहीं है । — **आचार्य वीरसेन** जयधवला प्रथम भाग पृष्ठ १४, १५

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

क्षायोपशमिक दर्शन भाव अंतराधिकार

(दोहा)

दर्शनावरण अति दुष्ट है, सर्व कर्म में वीर ।
ढकै ज्ञान सामान्य कूं, निन्दू ताहि धरि धीर ।।१।।

क्षायोपशमिक दर्शन भाव

आगै क्षायोपशमिक दर्शन भावाधिकार लिखिये हैं – दर्शनावरण नामा कर्म के क्षयोपशम के अनुसार जीव के क्षायोपशमिक दर्शन भाव होय है । ता क्षायोपशमिक दर्शन भाव के तीन भेद हैं । चक्षु दर्शन, अचक्षु दर्शन, अवधि दर्शन ।

तहाँ पदार्थ के सामान्य अवलोकन का नाम दर्शन है । तहाँ चक्षुदर्शनावरण कर्म के उदय तैं तो चक्षु दर्शन का अभाव होय है । अर क्षयोपशम के अनुसार चक्षुदर्शन गुण प्रगट होय है ।

बहुरि तैसें ही अचक्षुदर्शनावरण कर्म के उदय तैं तो अचक्षुदर्शन का अभाव होय है । अरु क्षयोपशम के अनुसार अचक्षुदर्शन गुण प्रगट रहै है ।

बहुरि तैसैं ही अवधिदर्शनावरण कर्म के उदय तैं अवधिदर्शन का अभाव होय है अरु क्षयोपशम के अनुसार अवधिदर्शन गुण प्रगट होय है । जेता-जेता अपने प्रतिपक्षी कर्म का क्षयोपशम होय, तितना गुण प्रगट जानना । चक्षुदर्शनावरण कर्म को एकेन्द्रिय, बेंद्रिय, तेन्द्रिय जीवन के तो सम्पूर्ण उदय है । तातैं तिनके संपूर्ण चक्षुदर्शन का अभाव होय है । अरु चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय जीवन कैं उदय भी है, अरु क्षयोपशम भी है; सो जेता-जेता उदय है, तेता-तेता तो चक्षुदर्शन का अभाव है, अरु जेता-जेता क्षयोपशम है, तेता-तेता चक्षुदर्शन गुण प्रगट होय है ।

बहुरि अचक्षुदर्शनावरण कर्म का सर्व ही संसारी जीवनि के उदय भी है; अरु क्षयोपशम भी है । जेता-जेता उदय है; तेता-तेता अचक्षुदर्शन गुण का अभाव है । अरु जेता-जेता क्षयोपशम है तेता-तेता अचक्षुदर्शन प्रगट है । तातैं अचक्षु

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

दर्शनावरण कर्म का सम्पूर्ण उदय होय नाहीं। सम्पूर्ण उदय होय तो वस्तु का अभाव होय जाय।

बहुरि तैंसे ही अवधिदर्शनावरण कर्म का जेता-जेता उदय है, तेता-तेता अवधि दर्शन का अभाव है। अरु जेता-जेता क्षयोपशम होय, तेता-तेता अवधि दर्शन प्रगट होय। तहां एकेन्द्रिय आदि असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्यंत जीवनि के तौ उदय ही है, क्षयोपशम नाहीं। तातैं तिनके तो अवधि दर्शन का अभाव ही है। अरु संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवनि विषैं जिनके सम्पूर्ण उदय है, तिनकें तो अवधिदर्शन का अभाव है। अरु जिनके क्षयोपशम है, तिनके क्षयोपशम अनुसार अवधि दर्शन पाइये है।

इन तीन दर्शन भाव का स्वरूप व प्रवृत्ति कहियेहैं। जातैं नेत्र इंद्रिय करि पदार्थ का सामान्य अवलोकन सो, चक्षुदर्शन कहिये। अर जो नेत्रैंद्रिय बिना चार इंद्रियनि करि पदार्थनि का सामान्य अवलोकन होय, सो अचक्षुदर्शन कहिये। बहुरि जो अवधिदर्शन करि पदार्थन का सामान्य अवलोकन, सो अवधिदर्शन कहिये। ऐसैं तीन भाव कहिये।

तहां चक्षु, अचक्षु दोय दर्शनभाव, गुणस्थान तो मिथ्यादृष्टि आदि क्षीण कषाय पर्यंत बारा गुणस्थान विषैं पाइये हैं। अर मार्गणा :– **गति** – ४, **जाति** विषैं चक्षुदर्शन तो चौइंद्रिय, पंचेन्द्रिय दोय ही जाति विषैं पाइये। अर अचक्षुदर्शन पांचों ही जाति विषैं पाइये। अर **काय** विषैं चक्षुदर्शन तो त्रसकाय विषैं ही पाइये, अर अचक्षुदर्शन छहों ही काय विषैं पाइये है। **योग** – १५, **वेद** – ३, **कषाय** – २५, **ज्ञान** – केवल बिना – ७, **संयम** – ७, **दर्शन** – स्वकीय १, **लेश्या** – ६, **भव्य-अभव्य** – २, **सम्यक्त्व** - ६, **संज्ञी** – संज्ञी-असंज्ञी – २, **आहारक, अनाहारक** – २

अवधि दर्शन गुणस्थान तो मिश्र तीसरा आदि से बारहवां पर्यंत दस मार्गणा **गति** – ४, **जाति** – पंचेन्द्रिय१, **काय** – त्रस १, **योग** – १५, **वेद** – ३, **कषाय** – २५, **ज्ञान** – केवल बिना ७, **संयम** – ७, **दर्शन** – अवधि १, – **लेश्या** ६, **भव्य** – भव्य-अभव्य २, **सम्यक्त्व** – ६, **संज्ञी** – १, **आहारक**-अनाहारक – २।

।। इति श्री भावदीपिका ग्रंथ के क्षायोपशमिक भावाधिकार विषैं तीसरा क्षायोपशमिक दर्शन भाव अंतराधिकार पूर्ण भया ।।

—*—

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पंच क्षायोपशमिक लब्धि भाव अन्तराधिकार

(दोहा)

लब्धि अपूरण पंच ए, अन्तराय वश थाय।
ता विधिकों क्षयकर प्रभू, नमौं पूर्ण रिधि पाय ॥१॥

आगै पंच क्षायोपशमिक लब्धि भाव लिखिये हैं।

पंच प्रकार अंतराय कर्म, ताका क्षयोपशम के अनुसार जीव कै पंचलब्धि होय हैं। पंचलब्धि कहिये पंचभाव की इच्छा के अनुसार सामग्री की प्राप्ति होय है। तहां पंचभाव कहिये हैं – दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य। इन पांच भावनी का जीव कैं उत्साह कहिये इच्छा उपजै है। तहां उत्साह के अनुसार पंच प्रकार अंतराय कर्म का क्षयोपशम होय तो उत्साह के अनुसार ही प्राप्त होय। अर उत्साह भाव सों अन्तराय कर्म का क्षयोपशम घाटि होय तो घाटि प्राप्त होय। अर उत्साह भाव सों अन्तराय कर्म का क्षयोपशम बहुत होय तो बहुत प्राप्ति होय। अर उत्साह-भाव अनुसार सामग्री परि अन्तराय कर्म कौं उदय होय तो सामग्री कौं विघ्न होय; वा सामग्री की प्राप्ति न होय। उत्साह भाव को विघ्न होय, तातैं उत्साह भाव की साधक तथा बाधक अन्तरङ्ग तो अन्तराय कर्म का क्षयोपशम भाव वा उदय है, अर बाह्य आपको मन, वचन, काय वा योग्य सामग्री वा अन्य द्रव्य चेतन, अचेतन पदार्थ वा क्षेत्र, काल, भाव है।

जैसे – सत्तर रुपया दान करने का या जीव के मन विषैं उत्साह उपज्या, तिस काल तैसा ही दानान्तराय कर्म का क्षयोपशम होय, तो सत्तर रुपया ही दान करै। अर दानांताराय कर्म का क्षयोपशम अधिक होय तो अभिप्राय तो सत्तर रुपया देने का था अर दोय सौ दे काढ़ै। वा कर्म का क्षयोपशम घाटि होय तो अभिप्राय तो सत्तर रुपया देने का था अर देय घाटि। अर सत्तर रुपया दान देने का उत्साह किया अर अंतराय कर्म का तिस काल उदय होय, तौ किछु भी न दे सकै। बहुरि तैसा ही – दानांतराय कर्म का क्षयोपशम वा उदय के अनुसार ही वा आपका मन फिर जाय तैसा ही वचन निकसै, तैसा ही कार्य प्रवर्तैं, ताहीके अनुसार बाह्य सामग्री दृष्ट पड़ै, ताही अनुसार अन्य चेतन-अचेतन द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की परिणति होय।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि तैसे ही किसी जीव ने सहस्र धन उपार्जन का उत्साह किया था। तहां लाभांतराय कर्म का क्षयोपशम उत्साह सादृश्य होय तो सहस्र धन की प्राप्ति होय। अर क्षयोपशम अधिक होय तो उत्साह तैं अधिक प्राप्त होय; क्षयोपशम हीन होय तो हीन प्राप्त होय। अर तिस काल लाभांतराय कर्म का उदय होय तो कछु भी प्राप्त न होय। ताहि अनुसार बाह्य अपना मन, वचन, काय प्रवर्तै; तैसे ही सामग्री होय। तैसा ही अन्य द्रव्य चेतन-अचेतन पदार्थ वा क्षेत्र, काल, भाव की परणति होय।

बहुरि तैसे ही भोग, उपभोग, वीर्य भाव का उत्साह की प्राप्ति-अप्राप्ति जाननी। अर दानादिक की इच्छा है, सो मोहजन्य है। मोहकर्म के वशीभूत भया संसारी जीव दानादिक की इच्छा करै है। सो इच्छानुसार दानादिक कार्य बनि जाय तो सुख मानै। अर जो इच्छानुसार दानादिक कार्य न बनें तो दुःख मानै। अर कार्य का बनना न बनना अंतराय कर्म के क्षयोपशम के अनुसार है। तातैं संसारी जीव मोह के वशीभूत हुआ वृथा ही दानादिक की इच्छा करि सुखी-दुःखी होय है। तातैं ही जे सम्यग्ज्ञानी हैं, ते पंच क्षयोपशम लब्धि की प्राप्ति-अप्राप्ति विषैं हर्ष-विषाद नाहीं करै हैं। अर जे मिथ्यादृष्टि हैं, ते इन पंच-लब्धि के उत्साह उठाय-उठाय अर इनकी प्राप्ति-अप्राप्ति विषैं हर्ष-विषाद करि सुख-दुःख कों प्राप्त होय हैं। इन पंच क्षयोपशम लब्धि के, अन्तराय कर्म के क्षयोपशम के अनुसार असंख्यात लोकप्रमाण भेद हैं। ये पंच क्षयोपशम लब्धि भाव अपने-अपने पंच अन्तराय कर्म के अनुसार सर्व ही जीवनि के क्षीणकषाय बारहवें गुणस्थान पर्यंत सर्व ही अवस्था विषैं पाइये हैं। अर सर्व ही मार्गणास्थाननि विषैं केवलज्ञान, केवलदर्शन बिना पाइये हैं।

।। इति श्री भावदीपिका ग्रंथ के क्षायोपशमिक भावाधिकार विषैं
चौथा पंचलब्धि भावांतराधिकार समाप्त भया ।।

—✻—

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

क्षायोपशमिक सम्यक्त्व भाव अन्तराधिकार

(दोहा)

वेदक सम्यक् भाव तैं, धरि मुनि व्रत शुध भाय।
जीत लिये सब कर्म अरि, तास नमूं शिवराय ।।१।।

अब क्षायोपशमिक सम्यक्त्व भावाधिकार कहिये हैं।

मिथ्यात्व अर सम्यक्-मिथ्यात्व कर्म के निषेक सों प्रदेश उदय होय खिरे, सो ही तो क्षय कहिये। बहुरि सत्ता में तिष्ठता जो मिथ्यात्व मोहनीय अर मिश्र मोहनीय कर्म को द्रव्य, सो उपशांतकरन कों प्राप्त होय। उपशांत कहियें उदीरण होय उदय में आवें नाहीं, अर देशघाती सम्यक्त्वप्रकृति मिथ्यात्व का उदय होय; तहां क्षायोपशमिक सम्यक्त्व भाव जीव के उत्पन्न होय है। ता भावकरि जिन भाषित जे जीवादिक तत्त्व, तिन विषैं रुचि कहिये श्रद्धा उपजे है, प्रतीति होय है। जैसे सर्वज्ञ करि कहे जीवादिक द्रव्य, भेद करि षट् प्रकार कहे; अर अस्तिकाय भेद करि पंच प्रकार, अर तत्त्व भेद करि सप्त प्रकार, वा अर्थ भेद करि नव प्रकार; बहुरि तिनका द्रव्य, गुण, पर्याय स्वरूप जैसा कह्या; तैसा श्रद्धान करै है; तैसा ही जाने है; अर ताहि रूप तिन विषैं प्रवृत्ति करै है। अर यहां दर्शन मोह की सम्यक्त्व मोहनीय प्रकृति का उदय है। ता करि मूल तत्त्व श्रद्धान का अभाव तो नाहीं होय सकै है। अर श्रद्धान विषैं चल, मल, अगाढ़ ऐसें तीन प्रकार का दोष उपजै है। सो दोषों की तारतम्यता तो केवलीगम्य है; परन्तु तिनकी दशा छद्मस्थ को दिखावने के अर्थि दृष्टान्त करि सिद्धांत शास्त्र विषैं जो कह्या है, सो ही कहिये हैं।

जैसे अपने कराए जिनमंदिर, जिनप्रतिमा वा शास्त्र वा अपने नातायत (संबंधी) – पिता आदिक मुनि, तिन विषैं तौ भक्त्यादिक सरस करै, मन में ऐसा जाने कि ये मेरे हैं। बहुरि अन्य के कराये जिनमंदिर, जिनप्रतिमा वा शास्त्र वा अन्य मुनि, तिन विषैं प्रीतिभाव भक्त्यादि घाटि होय। तिनकौं ऐसा माने कि ये अन्य हैं, ऐसी भ्रांतिभाव उत्पन्न हुवो करै, मिटावो करै। जैसे जल विषैं उत्पन्न

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

भये जे कल्लोल ते जल विषैं ही रहे, अन्य ठौर न जांय । तैसें सम्यक्त्व के साधक धर्म पदार्थ विषैं ही विकल्प उपजैं, अर विनसि जाय । अर मिथ्यात्व के साधक पदार्थनि विषैं भ्रांति उपजै नाहीं, उपजै तो अनाचार होय; सम्यक्त्व जाता रहे – ऐसा तो चल दोष जानना ।

बहुरि मल दोष पच्चीस प्रकार है । **तहां आठ तो मल दोष–** शंका, कांक्षा, विचिकित्सा, मूढ़दृष्टि, अनुपगूहन, अस्थितिकरण, अवात्सल्य, अप्रभावना । **बहुरि आठ मद दोष** – कुलमद, जातिमद, रूपमद ऐश्वर्यमद, लाभमद, बलमद, तपमद, विद्यामद । **बहुरि षट् अनायतन –** कुदेव को सराहना, कुदेव के धारकनि कूं सराहना, कुगुरु कों सराहना, कुगुरु के धारकनि कूं सराहना, कुधर्म कूं सराहना, कुधर्म के धारकनि कूं सराहना । **बहुरि तीन मूढ़ता** – देवमूढ़ता, गुरुमूढ़ता, लोक (समय) मूढ़ता ऐसे पच्चीस दोष । सो ये दोष धर्म प्रकरण विषैं उत्पन्न होय हैं । ताही सम्यक्त्व कूं अतिचार हैं, सो ही कहिये हैं ।

जहां जीवादि तत्त्वनि विषैं संशय उत्पन्न होय, जो इनका स्वरूप, इनकी प्रवृत्ति, वा इन विषैं हेय-उपादेय वा त्यजन-ग्रहण, फल इत्यादि कह्या है, सो ऐसैं ही है, अन्यथा तो न होय ? ऐसा संदेह उत्पन्न होय, पीछे विनस जाय, ताका नाम शंका दोष कहिये ।

बहुरि जहां ऐसा भाव उत्पन्न होय कि जो इस धर्म के प्रसाद तैं मेरे लक्ष्मी होय वा सुंदर स्त्री वा पुत्रादिक की प्राप्ति होय, मेरे शरीर का रोग जाता रहे, वा मेरा शत्रु विलाय जाय इत्यादि इस भव संबंधी वांछा वा पर भव विषैं देव होऊं वा इन्द्र-पद का सिंहासन पाऊं; भोगभूमि विषैं उपजूं; वा चक्रवर्ती, नारायण, बलभद्र, कामदेव, विद्याधर इत्यादि पद पाऊं; ऐसा इस भव पर भव संबंधी संसारी वांछा, सो कांक्षा दोष कहिये ।

बहुरि जे आखड़ी व्रत, शील, अनशनादि तप वा अणुव्रत, महाव्रत का नेमरूप वा संयमरूप ग्रहण किया था, तिन विषैं अहोठाभाव (अरुचि) होय कि जो यह नेम का काल कब पूर्ण होय ? वा यह नियम, जप ग्रहण तो कर लिया, अब याका निर्वाह कैसें होसी ? भारचा लागै; वा मंदिरादिक वा पूजा-प्रतिष्ठादिक का वा तीर्थयात्रा का इत्यादि धर्म संबंधी कार्य का प्रारंभ तो कर दिया अर पाछे कार्य भारचा

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

लागै; धनादिक अहोठाभाव सौं कृपणता सहित खरचै। जैसें-तैंसें पूरा पाड़ा चाहै। वा चतुर्विध संघ के विषैं रोग, दरिद्रादिक होते संते तिन सौं ग्लानि करना इत्यादि भाव प्रवर्तें, सो विचिकित्सा दोष कहिये।

बहुरि जहां धर्म कार्य, यथार्थ-अयथार्थ, योग्य-अयोग्य, विनय-अविनय,द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के विवेक रहित करना, सो मूढ़दृष्टि कहिये।

बहुरि जहां चतुर्विध संघ विषैं मुनि, अर्जिका, श्रावक, श्राविका, विषैं कर्म के उदय करि उत्पन्न भया जो दोष, ताकों प्रगट करना, सो अनुपगूहन दोष कहिये।

बहुरि मुनि, आचार्य, आर्यिका, श्रावक, श्राविका विषैं, इन कोई कों कोई भी प्रकार धर्म सों शिथिल होय, वाका कारण जानै; तनकरि, धनकरि, वचन करि, उपदेशादि करि अपनी सामर्थ्य होते संते स्थिर न करना। वा अपनी सामर्थ्य न होतें अन्य पासि न करावना, सो अस्थितिकरन नामा दोष कहिये।

बहुरि धर्म और धर्मात्मा विषैं प्रीति-भाव न जोड़ना; सो अवात्सल्य दोष कहिये।

बहुरि तन, मन, धन, कषाय, वचन, ज्ञान, श्रद्धान करि वा तप, संयमादि प्रवृत्ति सम्यक् रूप करि आपकूं वा जिनमत कूं ऊंचा न दिखाना; वा तन, मन, व वचन, धन, कषाय, ज्ञान, श्रद्धान, तप, संयमादिक की मिथ्या प्रतीत करि आपकूं वा जिनमार्ग कूं हीन दिखावना सो, अप्रभावना दोष कहिये।

अब अष्ट मद दोष कहिये हैं – आप तो बेटा राजादिकों का है, अर अन्य धर्मात्मा कोई अन्य मनुष्य का पुत्र है, वा शूद्र कुल का है, अर श्रद्धान, ज्ञान, तप, संयमादि विषैं आपसूं अधिक है; ताका कुल मद का जोर सों विनय-सत्कारादि न करना; सो कुल मद कहिये।

बहुरि तैसें ही आप बड़े राजानि का दोहिता है, ताका मद करि आपसौं अधिक गुणवान कू सामान्य जाति के वा शूद्र कुल के जानकर तिनका विनय-सत्कारादि न करना; सो जाति मद कहिये।

बहुरि तैसें ही आप रूपवान है, अर अन्य आपसों अधिक गुणवान रूप करि हीन है; तिनकों हीन जानना, आपकों अधिक मानना; सो रूप मद कहिये।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि आप ऐश्वर्यवान है; राज्यलक्ष्मी करि युक्त है, तथा धनादि करि युक्त है, अर अन्य आप करि अधिक गुणवान ऐश्वर्य करि हीन है, वा धनादि करि रहित हैं; तिनका विनय-सत्कारादि न करना; सो ऐश्वर्य मद कहिये।

बहुरि आपकैं पूर्व पुण्य के उदय तैं नाना प्रकार अलभ्य का लाभ होय है। अर अन्य आप करि अधिक गुणवान कूं पूर्व पाप के उदय करि नाना प्रकार अलभ्य का लाभ न होय है, ताकों दुर्भाग्य जानना अर आपकों भाग्यरूप जानना; ताकों कटुक वचन कहना; सो लाभमद है।

बहुरि आप विषैं शरीर बल, राज्य बल, कुटुंब बल, लक्ष्मी बल, इत्यादि सप्त प्रकार बल पाइये है; ताका मद करि गुणवान धर्मात्मा का पराभव करना; सो बलमद कहिये।

बहुरि आप अनेक तप विषैं प्रवर्तै है, अर अन्य धर्मात्मा विषैं तप आदिक थोड़ा पाइये, वा न पाइये है; तहां ताकौं तो हीन मानना; अर आपकों अधिक मानना, सो तप मद कहिये।

बहुरि आप तो अनेक शास्त्र का पाठी है; अर अन्य धर्मात्मा का शास्त्रज्ञान सामान्य – मामूली है, तहां आपकों महंत मानना, ताकों हीन मानना; सो विद्या मद कहिये।

अब षट् अनायतन स्वरूप कहिये हैं – देव भाव सों रहित विपरीति स्वरूप कों धरैं ऐसा जो कुदेव, तिनकी सराहना करनी "कैसे रूप श्रृंगारादि किये हैं, कैसी लक्ष्मी करि युक्त हैं, कैसी अंगी रची है, कैसे मुकुट, कुंडल, हार, भुजबंध आदि पहरैं हैं, बहुरि सकल पूजनहारे की कामना पूर्ण करैं हैं, बहुत राजादिकों करि सेवित हैं" इत्यादि सराहना करनी; सो देवअनायतन दोष जानना।

बहुरि कुदेव के सेवक, तिनकों सराहना "देखो इनकैं बड़ी भक्ति है; तन, मन, धन, वचन, घर, कुटुंबादिक सब बार दिये हैं (न्योछावर कर दिये हैं); शास्वते भजन में ही निमग्न रहें हैं; असे और पुरुष नाहीं" इत्यादि सराहना करनी; सो कुदेव आराधक अनायतन दोष जानना।

बहुरि नानाप्रकार भेष के धारक ऐसे कुलिंगी आप गुरु की ठसक (बड़प्पन) धरावैं, जगत पास पुजावैं; जगत के धन-संपदादिक वा धर्म के जगत के ठगोरे, मानरूप

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पर्वत के शिखर विषैं आरूढ़ अनेक विध माया के करन हारे, क्रोधरूप अग्नि के पुंज; तिनकों सराहैं "ए बहुत विद्यावान हैं, तपस्वी हैं, त्यागी हैं, निर्मोही हैं, शीलवान हैं, हिंसा रहित हैं, आजाची हैं, नाना विध चमत्कार के धारक हैं, लक्ष्मीवान हैं, महंत हैं" इत्यादि गुणनि विषैं कोई एक, दोय गुण बाह्य दृष्टि गोचर देखि, ताके आश्रय सराहना करनी; सो कुगुरु अनायतन दोष कहिये।

बहुरि तिनके सेवकनि कूं सराहना "ए उनकी बड़ी भक्ति करैं हैं, तिनके अर्थि धनादि खर्चैं हैं, बड़े फल कूं प्राप्त होयंगे" इत्यादि सराहना करनी; सो कुगुरु धारक अनायतन कहिये।

बहुरि कुधर्म कों सराहना "सर्व ही धर्म सेया थका भले फल कों देय है, वा धर्म विषैं वह चोखा (अच्छा) मार्ग है, वा धर्म विषैं वे सदा ही प्रवर्तैं हैं, श्वेतांबरादिक कै संवत्सरी आदि धर्म हैं, ढूंढिया मत विषैं धन नाहीं राखैं हैं, शील पालैं हैं, जीवनि की दया पालैं हैं, भिक्षा मांगि भोजन पाइये हैं, ता विषैं मान-अपमान नाहीं गिनैं हैं" इत्यादि कुधर्म की सराहना करनी; सो कुधर्म अनायतन दोष है।

बहुरि पूर्वोक्त नाना प्रकार धर्म के सेवनहारे पुरुष, तिनकी सराहना करनी; सो कुधर्म धारक अनायतन कहिये।

अब तीन मूढ़ता दोष कहिये हैं – तहां सदोष-निर्दोष सर्व देव समान जानने। कछु विचार नाहीं। जैसे दिगम्बर आम्नाय के प्रतिबिम्ब अर श्वेतांबर आम्नाय के प्रतिबिम्ब वा देहरा (मंदिर) समान ही जानना, सारे ही कूं वंदना, इत्यादि विवेक रहित देव विषैं प्रवृत्ति, सो देव मूढ़ता दोष कहिये।

बहुरि अट्ठाईस मूलगुण का धारक परम दिगम्बर मुनि वा कुलिंग के धारक पाखंडी, तिनको समान जानना, विनय-सत्कारादि करना; सो गुरुमूढ़ता कहिये।

बहुरि सर्व शास्त्र समान मानना, यथार्थ-अयथार्थ का विवेक न करना, यथार्थ-अयथार्थ वक्ता का विवेक न करना, आम्नाय-कुआम्नाय का विवेक न करना, धर्म-कुधर्म का विवेक न करना, तत्त्व-कुतत्त्व का विवेक न करना, जा शास्त्र कूं संस्कृत वा प्राकृत करि रचित देखा वा बड़ा पाना में सुन्दर अक्षरनि करि लिखा देखा, बड़े बंधनें करि वेष्टित देखि इत्यादि अविधि-पनो (अतिशय) देखि,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि वक्ता ताकूँ बड़ा पंडित देखि, संस्कृत-प्राकृत-न्याय का ज्ञाता देखि, बड़ी गादी व बड़े सिंहासन पर तिष्ठता देखि, बड़े शब्दाडंबर ललित वाणी सहित देखि इत्यादि अविधिपनो (अतिशय) सहित देखि; बहुरि जिस आम्नाय में घणा धन खरचता देखि, घणे पंडित देखि, परस्पर बहुत चर्चा देखि, बहुत तप संयमादि देखि, बहुत गान-नृत्य-वादित्रादि करि भक्ति करते देखि वा बहुत मनुष्यनि का संघट्ट देखि, इत्यादि अविधिपनो सहित देखि, बहुरि अनेक प्रकार विषय-कषाय पोषक धर्म प्रवृति देखि, जा धर्म प्रवृति विषैं पंच इंद्रियनि के विषय सेवना अर ताकूं धर्म कहना, ऐसा विषयपोषक धर्म, बहुरि ता धर्म प्रवृत्ति विषैं क्रोध, मान, माया, लोभ पोषना; छह हास्यादिक के कार्य उघड़ते होंय, तीनों वेदनि को मुख्यता होय, कोई कुशील का सेवन होय, ऐसा कषायपोषक धर्म प्रवृत्ति, बहुरि केई पच्चीस तत्त्व के साधक, अर केई षोड़श तत्त्व के, अर केई षट् तत्त्व के, वा चार, तीन, दोय एक तत्त्व के साधक ऐसे मतनि कूँ देखि वा तिनकूं घने राजादिक मनुष्य विषैं मानतैं देखि वा अपने कुलाम्नाय में चला आया वा कोई चमत्कारादि देखि वा लज्जा, कज्जा, जश, बड़ाई, इत्यादि करि तिनकौं वा यथा जैन-शास्त्र वा यथा जैन-वक्ता वा यथा जैनाम्नाय वा यथा जैनधर्म वा यथा जैन भाषित जीवादि तत्त्व इत्यादिकनि कों समान जानना; सो समय मूढ़ कहिये ।

अब अगाढ़ दोष कहिये हैं – सर्व ही तीर्थंकर अनंत शक्ति के धारक हैं, तिन विषैं हीनाधिक जानना, जैसे "शांतिनाथ शांति के कर्त्ता हैं, विघ्न हरने को पार्श्वनाथ समर्थ हैं" ऐसा श्रद्धान शिथिलता कों प्राप्त होय । जैसे बूढ़ा मनुष्य की हाथ की लाकड़ी कांपैं अर छूटे नाहीं, तैसें सम्यक्त्व मोहनीय कर्म के उदय तैं श्रद्धान शिथिल होय; परन्तु छूटे नाहीं, सो अगाढ़ दोष कहिये ।

इस प्रकार कहे जे चल, मल, अगाढ़ दोष, ते सम्यक्त्व मोहनीय कर्म के उदय तैं उत्पन्न होंय । सो तिनकौं तत्त्वज्ञान के बल करि अभाव कों प्राप्त करै है, सत्य प्रतीत रूप अवस्था होय है । देव, गुरु, धर्म, आप्त, आगम, पदार्थ इनकों मोक्ष के मूल कारणभूत पदार्थनि विषैं संदेह होय है । अर इनके अनेक प्रकार विशेष, तिन विषैं जो संदेह उत्पन्न होय है; ताको देव, गुरु, शास्त्र के प्रसाद करि निवारण करैं हैं , अर दिन-दिन प्रति समता भाव है बधता जाकैं, बहुरि आपा पर का विचार विषैं कोई प्रकार भ्रम नाहीं पाइये है । बहुरि दूर भया है सर्व प्रपंचभाव जातैं – ऐसी

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सरलता कों भजै है। ऐसा सम्यक्त्वभाव अष्ट अंगनि सहित होय है। तहां अष्ट अंग कहिये हैं – निःशंकित, निःकांक्षित, निर्विचिकित्सा, अमूढ़दृष्टि, उपबृहण ही का नाम उपगूहन कहिये, स्थितिकरण, वात्सल्य, प्रभावना।

सम्यक्त्व के अष्ट अंग

अब इनका स्वरूप कहिये हैं – सर्वज्ञ देव करि भाषित जे जीवादिक तत्त्व वा तिनका स्वरूप वा अनेक प्रकार द्रव्य, गुण, पर्यायनि करि वस्तुनि का स्वरूप; तिन विषैं वा सूक्ष्म, अंतरित, दूरवर्ती – इन तीन प्रकार पदार्थनि विषैं छद्मस्थ की इंद्रिय अगोचर सो सूक्ष्म कहिये। अर जो अतीत काल विषैं हो गये वा अनागत काल विषैं होयेंगे सो अंतरित कहिये। अर जे दूर क्षेत्रवर्ती वर्तमान हैं अर अपने देखने में न आयें, ऐसे मेरु आदिक ते दूरवर्ती कहिये। वा हेय कहिये त्यागने विषैं, उपादेय कहिये ग्रहण करने विषैं वा दुख-सुख के कारणनि विषैं वा संसार मोक्ष के कारणनि विषै – इत्यादि पदार्थनि विषैं संशय नाहीं धरैं हैं, जो सर्वज्ञ ने कही सो ही सत्य है; क्योंकि सर्वज्ञ सर्व के जानने तैं अर वीतराग होने तैं असत्य नाहीं कहैं हैं, सो निःशंकित अंग कहिये।

अरु नहीं हैं धर्म के सेवन थकी इस भव, पर भव संबंधी सांसारिक सुखादिक की बांछा जाकै (जिसे), किंतु मोक्ष के अर्थ ही सैवे है; सो निःकांक्षित अंग कहिये।

बहुरि जो अंग धर्म कूं सेवैं हैं, सो उत्साह भावनि सहित सैवैं हैं। अर धर्मात्मा जो चतुर्विध संघ, तिन विषैं अनेक प्रकार दरिद्र रोगादिक देखि ग्लानि नाहीं करैं हैं। तिनकी भक्ति करैं हैं, सो निर्विचिकित्सा अंग कहिये।

बहुरि जो धर्म प्रवृत्ति करैं हैं, सो विवेक सहित शास्त्रोक्त करैं हैं; सो अमूढ़ दृष्टि कहिये।

बहुरि अपने आत्मधर्म का बधावना, सो उपबृंहण अंग कहिये। वा पराया दोष ढांकना, सो उपगूहन अंग कहिये।

बहुरि स्थितिकरण के दोय भेद भये – जो अपने परिणाम धर्म सौं डिगैं तो तिनकूं शास्त्रोक्त ज्ञान करि अनुप्रेक्षादिक का चिंतवन करि आपकों धर्म तैं न डिगवा दे; सो स्वस्थितिकरण कहिये। अर अन्य जीवनि कूं धर्म तैं चिगता देखि ताकौं जा प्रकार बनैं, जाकरि वाको चित्त का समाधान होता दीखै, ता प्रकार समाधान करि धर्म विषैं स्थिति करै; सो पर-स्थितिकरण कहिये।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जहां धर्म-धर्मात्मा सौं बहुत प्रीति रहै, सो वात्सल्य कहिये ।

बहुरि प्रभावना दोय प्रकार है । जहां आपकूं सर्व प्रकार ऊँचा दिखावै, कोई प्रकार भी नीचा न दिखावै; सो आत्म प्रभावना कहिये । अर जिनमार्ग कूं ऊँचा दिखावना; सो मार्ग प्रभावना कहिये ।

ऐसे अष्ट प्रकार अंग करि युक्त है । बहुरि धन कूं विनाशीक जानि सप्त क्षेत्रनि विषैं निरन्तर खर्च करै हैं । अर देवनि सूं पूज्य, सर्व देवनि के देव ऐसै श्री जिनेंद्र देव तिनकों षट् प्रकार अष्ट द्रव्यनि करि भक्ति सहित पूजें हैं । वह षट् प्रकार – नामकरि, स्थापनाकरि, द्रव्यकरि, क्षेत्रकरि, कालकरि, भावकरि, ।

तिनके नाम पूजै हैं; नाम का उच्चारण करि पुष्पांजलि क्षेपै हैं; नमस्कार करैं हैं; तिनके नाम का जाप करैं हैं; ध्यान करैं हैं इत्यादि नाम करि पूजें हैं ।

बहुरि जे कृत्रिम-अकृत्रिम प्रतिमां, तिनकौं अष्ट द्रव्यनि करि पूजैं हैं; नमस्कार करैं हैं; वंदना करैं हैं; स्तवन करैं हैं; जाप करैं हैं; चितवन करैं हैं इत्यादि करि तिनकी स्थापना कूं पूजें हैं ।

बहुरि गृहस्थावस्था विषैं तिष्ठते जे तीर्थंकर, तिनकौं द्रव्य पूज्य कहिये । तिनकौं यथाविधि पूजें हैं; उनके निकट जाना; नमस्कार करना, उनका अनुचर होना; उनका गुणान का अनुरागी होय है ।

बहुरि जिस क्षेत्र विषैं तिनके गर्भादि पंच कल्याणक भये हैं; तिस क्षेत्र कों अष्ट द्रव्यनि करि पूजें हैं; वा तिस क्षेत्र विषैं तिनकों पूजें हैं ।

बहुरि जिस काल विषैं तिनके गर्भादि पंच कल्याणक भये हैं; तिस काल कौं अष्ट द्रव्यनि करि पूजें हैं, वा तिस काल विषैं तिनकौं पूजें हैं ।

बहुरि जिस काल विषैं ज्ञानावरणादिक चार घातिया कर्मनि का नाश करि अनंत चतुष्टय शक्ति कौं धारैं है; अर समोशरण लक्ष्मीयुक्त होय गंधकुटी के मध्य सिंहासन कमल परि अंतरीक्ष विषैं तिष्ठ करि कल्याण रूप मोक्ष, ताके मार्ग का उपदेश करैं हैं; ते भाव पूज्य हैं । तिनकौं अष्ट द्रव्य करि पूजैं हैं, नमस्कार करैं है, वंदना करैं हैं, स्तवन करैं हैं, जाप करैं हैं, ध्यान करैं हैं – इन षट प्रकार करि जिनेंद्र देव कौं भक्ति करि पूजें हैं ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि तीर्थंकर के जिन-जिन क्षेत्रनि विषैं गर्भादिक पंच कल्याणक भये हैं; तिन क्षेत्रनि विषैं चतुर्विध संघ सहित जाय पूजन करैं हैं। तहाँ पूजनादि, दानादि विषैं बहुत धन खरचैं हैं। बहुरि हर्षसहित जिनमंदिर संपूर्ण विधि सहित बनावैं; बहुरि यथोक्त जिनबिंब निरमापन करावैं हैं। बहुरि यथोक्त प्रतिष्ठा करैं। चतुर्विध संघ नै बुलाय तिनकी साक्षी सहित जिन भगवान कों प्रतिमा विषैं स्थापित करना होय, तिनकों नाम सहित स्थापित करै। ता दिन सौं प्रतिबिंब विषैं स्वपनो धारैं हैं, इच्छै तब ही तिस प्रतिबिंब कों भाव तीर्थंकर तुल्य जान सर्व भक्त्यादि क्रिया भाव-पूजा तुल्य करैं; वहां बहुत धन खरचैं।

चार प्रकार दत्ति

अब चार प्रकार दत्ति कों दरसावै हैं – पात्रदत्ति, समदत्ति, दयादत्ति,सर्व-दत्ति, इन चार दत्ति करि धन खरचना। ऐसें पूजा, प्रतिष्ठा, तीर्थयात्रा अर चार प्रकार दत्ति विषैं धन खरचने के अर्थि ये सप्त स्थान कहै।

प्रथम ही पात्र दत्ति कहिये हैं – जगत विषैं पात्र तीन प्रकार हैं – सुपात्र, कुपात्र, अपात्र। जो सम्यक्त्व संयमादि सहित होंय, ते सुपात्र कहिये। तिनके तीन भेद – उत्तम, मध्यम, जघन्य। तहां उत्तम पात्र तो अट्ठाईस मूलगुण के धारक वन-वासी दिगम्बर मुनि। बहुरि मध्यम पात्र देशव्रती प्रथम प्रतिमा धारक सौं लेय एकादश प्रतिमा धारक पर्यन्त। अरु जघन्य पात्र व्रत करि रहित सम्यग्दृष्टी श्रद्धानी सम्यग्ज्ञानी।

बहुरि उत्तम पात्र के भेद तीन – उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य। तहाँ उत्कृष्ट पात्र तो श्री तीर्थंकर देव, मध्यम पात्र गणधर देव वा संघ नायक आचार्य, जघन्य पात्र विषैं सर्व मुनि।

बहुरि मध्यम पात्र के तीन भेद – उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य। तहां उत्कृष्ट मध्यम पात्र तो दशमी, ग्यारमी, प्रतिमा का धारक वा आर्यिका जी। अर मध्यम में मध्यम पात्र अष्टमी नवमी प्रतिमा के धारक। अर जघन्य मध्यम पात्र, प्रथम प्रतिमा तैं लेय सप्तम प्रतिमा के धारक पर्यन्त।

बहुरि जघन्य पात्र भी तीन प्रकार – उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य। तहाँ उत्कृष्ट जघन्य पात्र तो उदासीन श्रावक। अर मध्यम जघन्य पात्र अल्प आरंभी अरु अल्प परिग्रही श्रावक। अर जघन्य जघन्य पात्र बहु आरंभी, बहु परिग्रही श्रावक।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ऐसे पात्र के नव भेद भये। तिनकौं आहार दान, औषध दान, अभय दान, शास्त्रदान इन चार प्रकार दानादि सहित यथाविधि यथायोग्य देना।

तिन विषैं मुनि, अर्जिका अर अष्टम प्रतिमा तें लगाय एकादश प्रतिमा के धारक मध्यम पात्र पर्यंत चार प्रकार ही दान देना। जातें इहां पर्यंत तौ ये त्यागी हैं और कोऊको कछू चाहैं नाहीं; तिनकौं भक्तिपूर्वक योग्य शुद्ध आहार देना। रोग के परिहार के अर्थि यथाविधि योग्य औषध देनी। बहुरि तिन विषैं उपसर्ग परीषह आय प्राप्त होंय तो तिस परीषह कूं जिस प्रकार मिटती जानें, तिस प्रकार मेटि देना। बहुरि कमंडलु, पिच्छिका दैनी। बहुरि अर्जिका आदि मध्यम पात्रनि कूं योग्य वस्त्र देना। तिनके पढ़ने के अर्थिशास्त्र देने।

बहुरि अल्प आरंभी अल्प परिग्रही तें लेय सप्तम प्रतिमा के धारक पर्यंत श्रावकनि कौं चार प्रकार दान देना – वस्त्र दान, धन दान, आजीविका दान, गृह-मंदिरादि दान। निकट राखना, भक्ति करनी, इत्यादि पोषना करनी।

बहु आरंभी बहु परिग्रही श्रावकनि कौं चार प्रकार दान देना। वस्त्राभरण देना, लक्ष्मी देनी, गृह-मंदिरादिक देना। हाथी, घोड़ा, रथ, पालकी, आदि अनेक सामग्री देनी, बेटी देना, निकट राखना, तिनके अर्थ तन, मन, धन, वचन, ज्ञान, श्रद्धान, कषाय, ये सप्त भाव अपना पद अर पात्र की योग्य सर्व लगावना, भक्ति करनी। साधर्मी के अर्थि प्राण देवा को अवसर होय, तहां प्राण पर्यंत देना। इन नौ प्रकार पात्रनि कूं यथायोग्य भक्ति पूर्वक दान-सत्कारादि करना।

तहां भक्ति प्रवृत्ति दोय प्रकार है – बहुमान अर विनय। जहां पात्र का यथायोग्य आदर-सत्कारादि करना, उनको ऊँचा दिखावना; सौ बहुमान कहिये अर आप तिनके निकट अष्ट प्रकार मद छोड़ि नीची वृत्ति धरनी; सो विनय कहिये। इन नौ प्रकार पात्रनि कौं दान सांसारीक सुख की वाछां रहित केवल मोक्ष के अर्थि है। इन पात्रनि कौं भक्ति पूर्वक दिया हुआ दान, स्वर्ग-मोक्ष के सुख कौं प्राप्त करावै है।

बहुरि जे सम्यग्दर्शन, ज्ञान, व्रत, संयम कर तो रहित हैं; अर मुनि, आर्जिका, उत्कृष्ट श्रावक, इन लिंग वा अनेक नाना प्रकार भेष बनाय झूठा तप-संयमादि कौं धरैं हैं। आपकौं पूज्य मानैं हैं, अर दान लेने की निरन्तर इच्छा कों धरैं हैं; ते कुपात्र हैं। तिनकौं सम्यग्दृष्टि दान भक्ति करि नाहीं दे हैं। तिनका सत्कार आदि

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

मन, वचन, काय करि नाहीं करै है। तिनका लालन-पालन भी नाहीं करै है। अर जो कुपात्रनि का कोई प्रकार भी लालन-पालन राखैं हैं; ते अपने धर्म कूं जलांजलि दें हैं। जे कुपात्रनि कौं भक्ति तें दान दें हैं, ते नर्क-निगोद विषैं बूड़ें हैं। तिनके, धर्म की अभिलाषा करि धर्म जानि दै हैं; सो दिया भया पाप के भाव कूं भजें हैं।

बहुरि जे सम्यक्त्व-संयमादि रहित जीव हैं, ते अपात्र हैं। तिन विषैं जे जाचकों को दान दें हैं, सो जसके अर्थि दै हैं तिस विषैं धर्म भाव कौं नाहीं धरैं हैं। जातैं जैनी सूम (कृपण) होय नाहीं, सूम होय ते जैनी नाहीं; तातैं जैनी सर्व तत्त्व नैं जानता थका अपने पद योग्य यथायोग्य सर्व ही दान करै। सो ही पद्मनंदि पंच-विंशतिका विषैं कह्या है –

उत्कृष्टपात्रमनगारमणुव्रताढ्यम्, मध्यं व्रतेन रहितं सुदृशं जघन्यम्।
निर्दर्शनं व्रतनिकाययुतं कुपात्रम्, युग्मोज्झितं नरमपात्रमिदञ्च विद्धि ॥

अध्याय दूसरा, श्लोक नं ४८

अर्थ : — जे पंच महाव्रत, पांच समिति, तीन गुप्ति रूप तेरह प्रकार चरित्र के धारक, अट्ठाईस मूलगुण, यथायोग्य चौरासी लाख उत्तरगुण, तिनकरि सहित, त्रिकाल योग के साधक, बाह्य आभ्यन्तर चौबीस प्रकार परिग्रह करि रहित, गृहवास का त्यागी, सुख-दुःख, जीवन-मरण, शत्रु-मित्रादिक विषैं राग-द्वेष करि रहित समान है प्रवृति जिनकी, ऐसे निर्ग्रंथ, वीतराग, महाव्रती, मुनिराज, सर्व जीवनि के दयालु, माता समान हितकारक; ते उत्कृष्ट पात्र हैं। इनके अर्थि दिया हुआ दान उत्तम फल जे स्वर्ग-मोक्षादि, तिनकौं फलैं हैं। जैसे सुक्षेत्र में बोया एक हु बीज बहुत फल कूं फलै है।

बहुरि अणुव्रती सम्यग्दृष्टि श्रावक पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत चार शिक्षाव्रत – इन द्वादश व्रतनि करि सहित, सो मध्यम पात्र है। याके अर्थि दिया हुआ दान, मध्यम भोगभूमि आदि शुभतर फल को फलै है। अर जे व्रत करि रहित यथोक्त जिनमार्ग के श्रद्धानी उपशमादि सम्यग्दृष्टि, ते जघन्य पात्र जानने। तिनके अर्थि दिया हुआ दान जघन्य भोगभूम्यादि शुभ फलनि कों फलै है।

बहुरि जे महाव्रतादि करि वा अणुव्रतादि करि सहित हैं; अर जिनकैं जिन-भाषित तत्त्वनि का श्रद्धान नाहीं, ते जीव द्रव्यलिंगी मुनि वा श्रावक कुपात्र जानने।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जिनके तत्त्वनि का श्रद्धान नाहीं अर व्रत भी नाहीं, ते जीव अपात्र जानने। इनके अर्थि दिया हुआ दान किछु भी फलदायक नाहीं, उल्टा संसार की वृद्धि का कारण है, जैसे खारड़ी (ऊसर) भूमि विषैं बोया बीज निष्फल जाय।

भावार्थ – सम्यग्दर्शन सहित महाव्रतनि के धारक जिनकल्पी स्थविरकल्पी मुनिराज, ते उत्तम पात्र हैं। जिनके बल, वीर्य, ज्ञानसंपदा की सामर्थ्य ज्यादा है, ऐसे एकल बिहारी मुनि जिनकल्पी हैं। अर जिनका बल, वीर्य, ज्ञानसंपदादि सामर्थ्य घाटि है, ऐसे संघ में बसनेवाले मुनि, ते स्थविरकल्पी हैं। जिनकल्पी एवं स्थविर-कल्पी में इतना ही भेद है कि जिनकल्पी तौ एकल बिहारी व स्थविरकल्पी संघ-वासी। शेष चारित्र, श्रद्धान, ज्ञान, वैराग्यादिक का भेद नाहीं।

सो इनके अर्थि मिथ्यादृष्टि श्रावक भी दान दें हैं; तै उत्तम भोगभूमि का दश प्रकार कल्पवृक्षनि करि उपज्या उत्तम सुख, तिनकूं पावै हैं। वहां तैं मरि देव-गति जाय हैं।

अर जे सम्यग्दृष्टि श्रावक भक्ति पूर्वक दान दें हैं, ते स्वर्गादिक सम्पदा कूं प्राप्त होय हैं। सम्यग्दृष्टि जीव भोगभूमि विषैं उपजै नाहीं, जिन जीवनि के पहिले मिथ्यात्व अवस्था विषैं दान का प्रभाव करि भोगभूमि का बन्ध पड़ गया अर पीछे सम्यग्दर्शन का लाभ भया, ते जीव तो भोगभूमि विषैं जाय हैं; परन्तु वह जीव भोगभूमि विषैं मरण करि कल्पवासी देव होय हैं अर मिथ्यात्वी मरण करि भवन-त्रिक विषैं उपजें, ऐसे जानना।

अर जे अणुव्रती, सम्यग्दृष्टि श्रावक, ते मध्यम पात्र जानने। बहुरि सांसा-रिक सुख सौं अंतरंग विषैं उदास, परन्तु चारित्रमोह के उदय तैं परिग्रह को छोड़ि सकैं नाहीं; ऐसे अव्रती सम्यग्दृष्टि जीव ते जघन्य पात्र जानने। अर जे व्रत तौ ग्रहण किया अर श्रद्धान करि रहित हैं, ते द्रव्यलिंगी मुनि वा श्रावक ते कुपात्र जानने। जैसे अभव्यसेन मुनि ग्यारह अंग नव पूर्व पढ़्या, तौ भी श्रद्धान करि रहित था, सो सम्यग्दृष्टि जीवनि के वंदिवे योग्य नाहीं। तैसें ही और कुपात्र जानने। अर जे श्रद्धान अर व्रत, इन दोनों से ही रहित हैं; ते अपात्र जानने।

जे जिन-सूत्रोक्त बिना स्वकल्पित भेष के धारक ऐसे रक्तांबरादि, पीतांबरादि काथांबरादि, श्वेतांबरादि व अन्य मत के भेषी ते अपात्र जानने।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

यहां कोई प्रश्न करै कि जे जिनसूत्र का अभ्यास करें हैं, उपदेश दे हैं, पूजनादिक करै हैं; ते रक्तांबरादि अपात्र कैसैं?

ताका समाधान – जो तुमने कहा कि जिनपूजा, शास्त्राभ्यासादि करैं हैं, सो तो लौकिक विषैं ख्याति, लाभ, पूजा, मान, बढाई के अर्थि करैं हैं; परमार्थ के निमित्त नाहीं करैं हैं। लौकिक कार्य निमित्त करना, सो मिथ्याकार्य है, तातैं ते मिथ्यात्वी हैं।

अर जिनसूत्र विषैं लिंग तीन ही कहे हैं मुनि, अर्जिका, श्रावक। इन सिवाय चौथा भेष कह्या नाहीं है। अर जे जिनसूत्र की आज्ञा को लोप रक्त वस्त्र धारण किया। आपका भेष नया चलाया। ते विषय-कषाय आविष्ट भ्रष्ट, रक्तांबरादि श्रद्धानी कैसे ? अर जो तुम कहोगे – एक बार भोजन करैं हैं; और किञ्चित व्रत भी पालै हैं। ताका समाधान – बिना श्रद्धान तप-व्रत भी अनर्थकारी हो है। महा मिथ्यात्व की साक्षात् मूर्ति है। ताका दृष्टान्त – जैसै द्वीपायन मुनि, बारा वर्ष तांई तपश्चरण किया, परन्तु श्रद्धान बिना क्रोध के वशि होय नरक गये। तातैं मिथ्यात्वी के व्रत भी कार्यकारी नाहीं, ताहीं तैं अपात्र हैं। इनकी जो लौकिक भय तैं पूजा, सत्कार, वंदना, नमस्कारादि करैं हैं; ते महामिथ्यात्वी हैं। जैसा गुरु होय, तैसा शिष्य होय; तातैं उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य पात्र बिना अन्य का दान, पूजा, सत्कारादि न करना यह उपदेश है। ऐसे पात्रदत्ती का स्वरूप कह्या।

अब समदत्ति कहिये हैं – जे बराबर के बहु आरम्भी, बहु परिग्रही वा अल्पारंभी, अल्प परिग्रही साधर्मी हैं, तिनकौं चार प्रकार दान देना। अनेक प्रकार तिनसौं हित राखना। खान, पान, शैया, आसनादि विषैं संबन्ध राखना। तिनसौं अनेक प्रकार लौकिक व्यवहार राखना। अपने नाता (संबन्धी) कुटुम्बी सौं अधिक मानना, सो समदत्ति कहिये।

बहुरि जहां दुखित, भुखित जीवों नैं चार प्रकार का दान करना, भाव करि देना, **सो दया दत्ति कहिये**। तहां दुखित, भुखित जीव के अर्थि चार प्रकार दान अपने पद माफिक निरन्तर जैनी के घर बरतवौ ही करै।

बहुरि जहाँ अपने सर्व परिग्रह है, ते एके काल त्याग करना, अर मुनि व्रत धरना, **सो सर्व दत्ति कहिये**। वा मरण समय सर्व धन, कुटुम्ब-मंदिरादिक तैं अपना

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ममत्व छोड़ि समाधिमरण करना, सो सर्वदत्ति कहिये । ए सर्वोत्कृष्ट दत्ति है । या प्रकार धन को विनाशीक जानि, सो धन धर्म के अर्थि है; तिनकों इन सात क्षेत्रों विषैं तो धन खरचना । इन विषैं खरचा हुआ धन बहुत फल कौं फलै है । स्वर्ग-मोक्ष सुख कों प्राप्त करैं हैं । जैसे भली धरती विषैं बोया बीज बहुत फल कौं दे है । अर कुपात्र दान करि त्यागा भया धन निष्फल जाय है । जैसे बंजर भूमि विषैं बोया हुआ बीज निष्फल होय है ।

बहुरि मुनिजन, गुरुजन की मन, वचन, काय करि भक्ति करै है; सेवा करै है । अर तिनके चरणारविंद के शाश्वती अनुरागी रहै । बहुरि पंच अंगनि सहित नाना शास्त्र, तिनका अभ्यास करै है ।

पंच अंग – १. श्रवण कहिये रुचि लगाय शास्त्र सुनै । २. धारण कहिये भली भांती सुनौ जो अर्थ, ताहि धारै, भूलै नाहि । ३. बहुरि विचारै । ४. शुद्ध घोखणा (पाठ) करै, आम्नाय मिलावै । ५. बारंबार चिंतवन किया करै । इन पंच अंगनि सहित शास्त्राभ्यास करै ।

अर प्रकट हैं अष्ट गुण जाकैं – करुणा, वात्सल्य, सज्जनता, आत्मनिंदा, समता, भक्ति, विरागता, धर्मानुराग ।

बहुरि त्यजन-ग्रहण विषैं उत्साहवान होय । बहुरि गर्व वा आलस्य भाव करि रहित होय, बहुरि धीरजवान होय । बहुरि हर्ष करि सदा मंडित होय । बहुरि चतुर होय । बहुरि सर्व प्रति मिष्ठ वचन बोले । बहुरि धर्म-कार्य वा उपकार-कार्य करि अपने मुंह तैं अपनी बड़ाई के वा कर्तव्य के वचन नाहीं कहै है । बहुरि गौण है क्रोध भाव अर अदेखसका भाव जाकै, बहुरि लोकनि की लाज तैं वा अनेक प्रकार भय आवता थकां वा भोगनि की वांछा थकी धर्म सौं शिथिल नाहीं होय है । बहुरि पंच इन्द्रियनि के विषय न्याय पूर्वक सेवै है । सर्व लौकिक कार्य न्याय के करै है । राज विरुद्ध, धर्म विरुद्ध, लोक विरुद्ध, कार्य विषय-कषायनि कै नाहीं करै है । सप्त व्यसन नाहीं सेवै है । बहुरि नाहीं है अभक्ष्य का भक्षण जाकैं, बहुरि सप्त धातु व मल-मूत्रादिक के संबन्ध रहित है खानपानादिक जाकैं, बहुरि द्रव्य शुद्धि, क्षेत्र शुद्धि, काल शुद्धि, भाव शुद्धि, संबंध शुद्धि, इन पंच शुद्धता

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

करि सहित है भोजनादि क्रिया (सामग्री) जाकैं, इत्यादि गुण सम्यक्त्व भाव के साथ ही प्रगट होय हैं। तिन सर्व को क्षायोपशमिक भाव कहिये। यहां पर्यंत तो पाक्षिक का पद है। जहां पर्यन्त त्याग की प्रतिज्ञा वाक्य करि रहित, श्रद्धान, ज्ञान की शक्ति करि ही गुण का प्रगट होना, सो पाक्षिक पद है।

अब दर्शन प्रतिमा कहिये हैं – बहुरि सम्यक्त्व ही के माहात्म्य करि प्रथम प्रतिमा का ग्रहण करै है। तहां सप्त व्यसन का मन, वचन, काय करि वा कृत, कारित, अनुमोदना करि ऐसा तेतीस के भंग करि अतीचार सहित त्याग करै। बहुरि आठ मूलगुणनि का अतीचार रहित ग्रहण करै। तहां सप्त व्यसन – जुआ, चोरी, परदारा सेवन, वेश्यारमण, मांसभक्षण, मदिरापान, शिकार इनको तो आसक्तता सहित त्यागे। अर अष्ट मूलगुण – मांस, मदिरा, मधु कहिये शहद, बड़ का बड़वाला फल, पिप्पल की गोल फल, पाकर फल, ऊमर फल, कठूमर फल, इनके भक्षण का त्याग करै है। अर अतिचार में इनके सजातीय त्रस आश्रित द्रव्य, तिनका त्याग, बहुरि प्रथम दर्शन प्रतिमा विषैं भी परिग्रह प्रमाण संभवै है। सो नाना रूप है। प्रथम तो अपने पुण्य उदय प्रमाण मिली जो राज्यादि सामग्री, ता विषैं संतोष धारि ता सिवाय अधिक सामग्री का त्याग करै, सौ तो परिग्रह प्रमाण का जघन्य भेद है। बहुरि मध्य भेदनि विषैं पाई सामग्री विषैं, वा आरम्भ-प्रारम्भ विषैं पौन (३/४) राखना, चौथाई घटाय देना, अर्धभाग राखना, चतुर्थ भाग, अष्ट-भाग इत्यादि प्रमाण विशेष त्याग करना, सो मध्य के नाना भेद हैं।

बहुरि इसके आगै उदासीन श्रावक के अनेक प्रकार प्रमाण है। जेता-जेता कषाय घटता जाय, तेता-तेता इन्द्रियनि के विषय वा कषाय-कार्य वा परिग्रह घटता जाय। या प्रकार प्रथम प्रतिमा का उत्कृष्ट पद सर्व आरंभ, परिग्रह, कुटुम्ब आदिक छोड़ि एकाकी होय तिष्ठै; तहां पर्यंत है। ऐसा प्रमाण शास्त्रोक्त नाहीं है कि जो मिली सामग्री तैं अधिक राखना। ऐसा प्रमाण तो उल्टा तृष्णा कौं कारणभूत है। धर्म का लक्षण तो संतोष है; तातैं पाई सामग्री विषैं घटाय संतोष धरना ; ताका नाम धर्म है, ऐसा देशविरत विषैं दार्शनीक श्रावक का स्वरूप जानना। नाम के एक देश में सर्व नाम का ग्रहण करना इस न्याय तैं उपचार करि दर्शन प्रतिमा को भी देशविरत कहिये। इत्यादि क्षायोपाशमिक सम्यक्त्व भावना जाननी।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ये क्षायोपशमिक सम्यक्त्व – **गुणस्थान** तो असंयत, देशसंयत, प्रमत्तविरत, अप्रमत्तविरत इन चार विषैं पाइये। अर **मार्गणा – गति** - ४, **जाति** - पंचेन्द्रिय १, काय-त्रस १, **योग** – १५, **वेद** – ३, **कषाय** – अनंतानुबंधी चार बिना २१, **ज्ञान** - मति, श्रुत, अवधि मनःपर्यय ४, **संयम** - सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहार-विशुद्धि, संयमासंयम, असंयम – ५। **दर्शन** – केवल बिना ३, **लेश्या** – ६, **भव्य** – १, **सम्यक्त्व** – स्वकीय १, **संज्ञी** – १, **आहार** – आहारक अनाहारक – २, इन विषैं पाइये हैं।

बहुरि क्षायोपशमिक भाव जे हैं, ते भाव वर्तमान विषैं भी सुख के कारण हैं; अर आगामी स्वर्ग-मोक्ष के कारण हैं।

इति श्री भावदीपिका ग्रंथ के क्षायोपशमिक भावाधिकार विषैं पांचवां क्षायोपशमिक सम्यक्त्व भावांतराधिकार पूर्ण भया।

—*—

रागादिक दूर करने का उपाय : तत्त्वविचार

यहाँ प्रश्न है कि यदि ये (रागादिक भाव) कर्म के निमित्त से होते हैं तो कर्म का उदय रहेगा, तब तक ये विभाव दूर कैसे होंगे? इसलिये इसका उद्यम करना निरर्थक है?

उत्तर:—एक कार्य होने में अनेक कारण चाहिए। उनमें जो कारण बुद्धिपूर्वक हों, उन्हें तो उद्यम करके मिलाये और अबुद्धिपूर्वक कारण स्वयमेव मिलें, तब कार्य सिद्धि होती है। जैसे – पुत्र होने का कारण बुद्धिपूर्वक तो विवाहादिक करना है, और अबुद्धिपूर्वक भवितव्य है; वहाँ पुत्र का अर्थी विवाहादिक का तो उद्यम करे और भवितव्य स्वयमेव हो, तब पुत्र होगा। उसी प्रकार विभाव दूर करने के कारण बुद्धिपूर्वक तो तत्त्वविचारादि हैं और अबुद्धिपूर्वक मोहकर्म के उपशमादि हैं, सो उसका अर्थी तत्त्वविचारादिक का तो उद्यम करे और मोहकर्म के उपशमादिक स्वयमेव हों, तब रागादिक दूर होते हैं।

— **पण्डितप्रवर टोडरमलजी**, मोक्षमार्ग प्रकाशक; सातवां अधिकार पृष्ठ १९७

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

देशविरत संयमासंयम भाव अंतराधिकार

(दोहा)

देशसंयम को ग्रहण करि, तोरि मोह को जोर ।
संयम सकल मिलाय, तिन नमूं मोह हर घोर ।।

अब देशविरत संयमासंयम भावाधिकार लिखिये हैं । तहां अप्रत्याख्यान के चारित्र मोह चौकड़ी का अभाव होते संते प्रत्याख्यान चारित्र मोह कर्म के सर्वघाती स्पर्धकनि के उदय का अभाव होय, उदय कूं प्राप्त भया सर्वघाती स्पर्धकनि का निषेक, सो तो प्रदेश उदय होय खिरै, सो ही तो क्षय कहिये । अर उदय कों न प्राप्त भया ऐसा सत्ता रूप दव्य, ताका उपशांतकरण होय कहिये उदीरणा होय – उदय में आवे नाहीं । अर देशघाती स्पर्धकनि का उदय होय, तहां देशविरत संयमासंयम होय है ।

बहुरि जहां बहुत आरंभ, बहुत परिग्रह का त्याग करि अल्प आरंभ, अल्प परिग्रह का ग्रहण होय; तहां देशविरत संयमासंयम होय । तातैं पंच स्थावर अर छठवां त्रस, इन षट् प्रकार जीवनि की हिंसा का त्याग, बहुरि पंच इन्द्रिय अरु षष्टम मन, इनके विषय विषैं राग-द्वेष का त्याग, तहां संयम होय । सो जहां त्रस हिंसा का तो सर्वथा मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि तेतीस के भंग त्याग करै । अवशेष असंयम का त्याग एकदेश होय, तहां देशसंयम होय । तातैं बहु आरंभ बहु परिग्रह विषैं देश संयम न होय । जातैं बहु आरंभ, बहु परिग्रह होते संते त्रस जीवनि की रक्षा न होय सकै । अर स्थावर जीवनि की हिंसा की बाहुल्यता होय । बहुरि पंच इंद्रियनि की विषय वासना मंद नाहीं पड़े । अर मन का विकल्प न छूटे; तब देशसंयम कहां तैं होय ? तातैं अल्प आरंभ, अल्प परिग्रह-पना ही देशसंयम का कारण है । तहां पांच तो अणुव्रत का ग्रहण होय । हिंसा, अनृत, स्तेय, अब्रह्म, परिग्रह इन पंच पापनि का एकदेश त्याग, सो अणुव्रत कहिये । अब इनके एकदेश त्याग का स्वरूप कहिये हैं ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अब द्वितीय व्रत प्रतिमा कहिये हैं –

प्रथम ही हिंसा का त्याग कहिये । "**प्रमत्तयोगात्प्राणव्यपरोपणं हिंसा**" जहां प्रमाद योग थकी प्राण का व्यपरोपण कहिये घात करना, पीड़ा उपजावना, ताका नाम हिंसा कहिये । प्रमाद योग कहिये कषाय विशेषात् – जो कषाय विशेष थकी प्राणों का पीड़ना, ताका नाम हिंसा कहिये, ऐसा शास्त्र का वचन है ।

सो हिंसा दोय प्रकार – एक द्रव्य हिंसा, दूजी भाव हिंसा । तहां पंचेन्द्रिय – स्पर्शन, रसन, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र; तीन बल – मन, वचन, काय; श्वासोच्छ्वास, आयु इन दश प्राणनि का घात करना, सो द्रव्य हिंसा है ।

बहुरि भाव प्राण जो चेतनाप्राण – दर्शन-ज्ञान प्राण विषैं कषाय उत्पन्न करना, सो भावहिंसा है ।

बहुरि द्रव्य हिंसा दोय प्रकार है – निज द्रव्य प्राणनि का घात करना, क्रोध करि शरीरादिक दश प्राणनि का घात करना – कृश करना, अपघात करना; मान कषाय करि कृश करना, अपघात करना, माया कषाय करि कृश करना, अपघात करना; लोभ कषाय करि कृश करना, अपघात करना, सो स्वद्रव्य हिंसा है। बहुरि कषाय की तीव्र संक्लेशता करनी, सो स्व-भाव हिंसा है ।

बहुरि अन्य जीवनि के द्रव्य प्राणों का घात करना; मारना, बांधना, छेदना इत्यादि परद्रव्य हिंसा है । अर पैले (दूसरे) कौं कषाय सहित करना, दुःखी करना इत्यादि सो परभाव हिंसा है ।

ऐसें हिंसा के चार भेद हैं – उद्यमी, संकल्पी, आरम्भी, विरुद्धी । ऐसै हिंसा के सोलह भेद हैं ।

जहां उद्यम करि स्व-पर द्रव्य-भाव हिंसा करना, सो उद्यमी हिंसा कहिये; सो चार प्रकार है । जहां चतुर (चार) प्रकार हिंसा करने का मन विषैं विचार का करना, सो संकल्पी हिंसा चार प्रकार है । बहुरि जहां नाना प्रकार स्व-पर को दुःख देना, सो विरुद्धी हिंसा चार प्रकार है । बहुरि चतुर प्रकार हिंसा आरम्भ के आश्रय होय, सो आरंभी हिंसा चार प्रकार जाननी । सो इन हिंसा विषैं अल्प आरंभ अल्प परिग्रह के आश्रय जो शास्त्रोक्त आजीविका व्यवहार, विवाहादिक, खान-

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पानादिक, व्यवहारादिक इत्यादिक आरंभ विषैं जो आरंभी हिंसा है, सो तो होय है, **सो मोकली** बहुत है। **अब** शेष सर्व हिंसा का त्याग करै, सो **अहिंसा अणुव्रत** कहिये।

बहुरि **असत्य** वचन चार प्रकार है – सद्भाव विषैं असद्भाव को वचन अर **अभाव विषैं** सद्भाव को वचन, स्वरूप तैं विपर्यय वचन, पाप सहित वचन।

पाप सहित वचन के तीन भेद – गर्हित वचन, सावद्य वचन, अप्रिय वचन। तहां पराया दोष प्रगट करना, वा दोष के आश्रय हांसी करना, चुगली खानी, कर्कश वचन कहना, मर्मच्छेदक वचन कहना इत्यादि सो गर्हित असत्य वचन कहिये। बहुरि जिस वचन करि हिंसादि पंच पापनि रूप प्रवृत्ति होय, सो सावद्य असत्य वचन कहिये। बहुरि शोक, भय, आतापादि उपजावने का कारण वचन, सो अप्रिय असत्य वचन कहिये। इनमें अपना धन, प्राण राखने के निमित्त वा अपना धर्म राखनें कैं निमित्त वा पर उपकार के निमित्त असत्य बोलना, सो मोकला है और प्रकार झूंठ बोलना तेतीस भंग के त्याग है, सो **सत्य अणुव्रत** कहिये।

बहुरि पर का धनादिक **सर्व** वस्तु बिना दिया कोई भी प्रकार ग्रहण करना, सो चोरी कहिये। **"अदत्तादानं स्तेयं"** ऐसा शास्त्र का वचन है। सो जहां मगरा (जंगल) की माटी अर निवान (कुआ) कौ जल ए राजा की वस्तु हैं, तिनका तो बिना दिया भी ग्रहण है। और प्रकार सर्व अदत्त ग्रहण का तेतीस भंग का त्याग, सो **अचौर्याणुव्रत** कहिये।

बहुरि स्व स्त्री का तो रोग मात्र विषय रहित सेवन अर अवशेष सर्व प्रकार **अब्रह्म** का तेतीस भंग का त्याग, सो **ब्रह्मचर्याणुव्रत** कहिये।

बहुरि परिग्रह भेद दस प्रकार – क्षेत्र, वास्तु, हिरण्य, स्वर्ण, धन, धान्य, दासी, दास, कुप्य, भांड। इन दस प्रकार परिग्रह विषैं अपनो बाहिर भूम्यादिक विचरवा मात्र तो क्षेत्र, अर रहवा मात्र मंदिर-घर, अर आजीविका मात्र हिरण्य, सुवर्ण राखै। बहुरि जो आजीविका करनी पड़ै तो त्रस-हिंसा रहित आजीविका करै। अर जो राजादिक बड़े पद के धारक होय तो पालकी, चौपाल मात्र वाहन, यातैं तिर्यंचाश्रित वाहन राखै नाहीं। याकें त्रस हिंसा का तेतीस के भंग त्याग है। तिर्यंच के राखने तें मारना, बांधना, छेदना, भेदना, डाहना तथा नासिका क्रिया

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

करनी पड़ै वा तिसके खान-पानादि मल-मूत्रादि विषैं त्रस हिंसा होय, तब त्रस हिंसा का सद्भाव होय। अर पांच-सात दिन के खावा मात्र धान्यादि सामग्री अर चाकरी मात्र एक दोय दासी, दास, राखैं। बहुरि पहरवा मात्र पद योग्य स्वल्प मूल्य का कपड़ा, अर खान-पान तथा शौचादि मात्र उपकरण, इस प्रकार तो परिग्रह का प्रमाण करि मोकलो राखै। अर अवशेष समस्त परिग्रह छोड़ि पुत्रादिक नें सौंपि आप गतस्पृह (निस्पृह) होई तिष्ठै, सो **परिग्रह प्रमाण अणुव्रत** कहिये।

बहुरि इन पंच अणुव्रत की साधनभूत बाड़ बांधै, तब अणुव्रत सूं खेती निपजे। तहां तीनों तौं गुणव्रत धारै – दिग्व्रत, देशव्रत, अनर्थदण्ड त्याग।

तहां कर्म – कार्य निमित्त पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, ये चार तो दिशा अरु ऐशान, वायव्य, नैऋत्य, आग्नेय ये चार विदिशा; एक ऊर्ध्व अरु एक अधो - इन दशों दिशा विषैं गमन का प्रमाण, जितनी दूर दिशा प्रति अपना लौकिक कार्य दीसै, अटके नाहीं, तितना प्रमाण राखै; निरर्थक अधिक प्रमाण न राखै। जितना प्रमाण राखै, तहां पर्यन्त ही काम पड़ै तो जाना, वस्तु मांगना, भेजना, लेख लिखना, वा वांचना, समाचार भेजना, वा मंगावना इत्यादि क्रिया रूप प्रर्वतना। प्रमाण तैं अधिक दिशा प्रति सर्व क्रिया प्रवृत्ति का त्याग करैं, सो **दिग्व्रत** कहिये।

बहुरि दिशा प्रति जितना नियमरूप प्रमाण किया, ता विषैं घटाय-घटाय नियम रूप प्रमाण किया करना; सो **देशव्रत** कहिये।

बहुरि जहां विना प्रयोजन मन, वचन, काय की प्रवृत्ति का त्याग करना; वा विना प्रयोजन की विषय सामग्री, कषाय कार्यनि की सामग्री, पंच पापनि की कारण-भूत तिनका लेना, देना, संचय राखना, मोल लेना इत्यादि का त्याग करना; सो अनर्थदंड का त्याग कहिये। ता अनर्थदंड के पांच भेद – अपध्यान, हिंसाप्रदान, प्रमाद चर्या, पापोपदेश, दुःश्रुति श्रवण।

तहां धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चार प्रकार पुरुषार्थ रहित मन का विकल्प निरर्थक करना, सो अपध्यान कहिये। बहुरि पंच प्रकार स्थावर वा त्रस की हिंसा का कारण उपकरण मांग्या देना, सो हिंसा प्रदान कहिये। बहुरि अन्य जीवनि कौं पंच पाप रूप प्रवृत्ति का उपदेश देना, सो पापोपदेश कहिये। बहुरि विषय, कषाय, मिथ्यात्व पोषक खोटे शास्त्र कहना, कथा सुनना, सो दुःश्रुति श्रवण कहिये। **बहुरि**

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बिना देख्या, बिना विचारया, बिना प्रयोजन कार्य करना वा बिना प्रयोजन गमना-गमन करना वा कार्य सूं अधिक अग्नि आदि प्रजालना, जल नाखना, वनस्पति तोड़ना, घात करना, धरती पर्वतादिक खोदना, कार्य सूं अधिक वस्तु उत्पन्न करनी इत्यादि प्रमाद चर्या कहिये । इन पंच प्रकार निरर्थक क्रिया का त्याग, सो **अनर्थदंड का त्याग** कहिये ।

बहुरि चार शिक्षा व्रत धरै – सामायिक, प्रोषधोपवास, भोगोपभोग, प्रमाण, अतिथि संविभाग । जहां तीन काल सामायिक करना – पौर्वाह्निक, माध्याह्निक, अपराह्निक । जघन्य एक मुहुर्त्त मध्य दो मुहुर्त्त उत्कृष्ट तीन मुहूर्त्त प्रमाण । नाम स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव ऐसें षट् प्रकार पदार्थनि विषैं सम भाव करना, सो **सामायिक शिक्षाव्रत कहिये ।**

बहुरि दोय अष्टमी, दोय चतुर्दशी इन चार पर्व तिथियनि विषैं मास-मास प्रति पोसा सहित उपवास करना; सर्व विषय कषायनि के कार्यनि का त्याग करि उत्कृष्ट षोड़स प्रहर की मर्यादा वा मध्यम बारह प्रहर की जघन्य आठ प्रहर की मर्यादा करि धर्मध्यान रूप रहना, सो प्रोषधोपवास **शिक्षाव्रत** कहिये ।

नितप्रति भोग-उपभोग का प्रमाण करना, सो **भोगोपभोग प्रमाण शिक्षाव्रत** कहिये ।

बहुरि अतिथि जे मुनि, तिनकै अर्थि भोजन विषैं सम विभाग करना । द्वारा-प्रेक्षण करना । मुनि के आवने योग्य काल विषैं अपने द्वार पर खड़े रहना । प्रासुक जल है हस्त विषैं जाकै, मुनि की आवने की बाट देखा करना । जो भाग्य का जोर करि महामुनि आय जाय तौ तिनकौं नवधा भक्ति करि भोजन देना । प्रथम तौ मुनि द्वार पर आवैं तिन प्रति ऐसा शब्द कहि पड़गावै "हे प्रभो ! तिष्ठिये, अन्न-जल मेरे शुद्ध है" । बहुरि आप आगे होय साधु पाछै चालै । बहुरि रसोई के बाह्य आंगन में शुद्ध क्षेत्र विषैं ऊंचा आसन दे, तिस पर साधु खड़ा रहै । तिनके चरण धोवैं । पूजा वचन शुद्ध करै, नमस्कार करै, मन शुद्ध, काय शुद्ध, आहार शुद्ध – ऐसीनवधा भक्ति ।

बहुरि सप्त गुण दातार के ताकरि युक्ति होय – श्रद्धा, भक्ति, निर्लोभता, दया, क्षमा, अनसूया, अविषाद, ।

इनके अर्थ भक्ति करि दिया दान कल्याण ही के अर्थि है, सो श्रद्धा कहिये । भक्तिपूर्वक,शक्ति सों अधिक हीन भोजन न दे । इह भव, पर भव संबंधी लौकिक

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

फल न वांछै। सर्व जीवनि विषैं करुणा भाव सहित होय, क्रोध करि वर्जित होय, अदेखसका भाव रहित होय, हर्ष सहित बड़े आदर सों उदार चित्त सहित होय। अर जो साधू न आवें वा लाभांतराय कर्म के उदय तैं आपके हाथ से भोजन देना नबनैं तो ता दिन उपवास करें, वा कोई रस त्याग करै, ताका नाम **अतिथिसंविभाग शिक्षा व्रत** कहिये। इन बारह व्रतों को ग्रहण करै।

बहुरि अंत में सल्लेखना मरण करै, तहाँ अपना मरण दृष्ट पड़ै, तब सर्व विषय-कषाय कार्यनि का त्याग करै। चेतन पदार्थ जे स्त्री, पुत्र, कुटुम्ब आदिक, अर अचेतन पदार्थ धन, संपदा, मंदिरादिक; तिन सौं ममत्व छोड़ि सर्व पर द्रव्य तैं आपा छुड़ाय, आपको चैतन्य अमूर्त्तीक पदार्थ ध्यावै। तहां पंच परमेष्ठी कों सुमरता तथा अनुप्रेक्षा का चिंतवन करता पर्याय छोड़ै। बहुरि जेता काल संन्यास लिया था, ता पीछे जीवन होय, तो तेता काल जीवो-मरवो, बैरी-मित्र, सुख-दुःख समान जानै। तिन विषैं राग-द्वेष न करे, सो **अंतसल्लेखना** कहिये। अस्पर्श्य शूद्र को दूसरी प्रतिमा तैं अधिक ग्रहण करने की आज्ञा नहीं है। व्रत प्रतिमा द्वितीय विधान देशविरत का द्वितीय भेद भया, देशविरत संयमासंयम का प्रथम भेद भया।

बहुरि तृतीय सामायिक प्रतिमा कहिये हैं –

तहां उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य काल का नियम धारि, तीनों काल के विषैं सामायिक का विधान शास्त्र विषैं कह्या है, तिस विधान सहित षट् प्रकार पदार्थनि विषैं सम भाव है लक्षण जाका, ऐसा सामायिक करैं। नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव।

तहां अनेक प्रकार वैरी-मित्र के इष्ट-अनिष्ट नाम विषैं राग-द्वेष न करना, सो नाम सामायिक कहिये।

बहुरि इष्ट स्थापना वा अनिष्ट स्थापना वा वैरी की स्थापना वा मित्र की स्थापना, तिन विषैं राग-द्वेष न करना; सो स्थापना सामायिक कहिये।

बहुरि जहां इष्ट-अनिष्ट, चेतन-अचेतन द्रव्य वा मित्र-बैरी तिन विषैं राग-द्वेष न करना; सो द्रव्य सामायिक कहिये।

बहुरि जहां इष्ट अनिष्ट-क्षेत्र विषैं राग-द्वेष न करना; सो क्षेत्र सामायिक कहिये।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि इष्ट-अनिष्ट काल विषैं राग-द्वेष न करना, सो काल सामायिक कहिये।

बहुरि जीव, पुद्गल की मिश्र दशारूप देव, मनुष्य, तिर्यंच नरक आदि पर्याय इष्ट-अनिष्ट रूप तिन विषैं वा न्याय के क्रोध, मान, माया, लोभ रूप जे कषाय भाव वा मन, वचन, काय की प्रवृत्ति इष्ट-अनिष्ट, इत्यादि तो चेतन के भाव, वा शीत-उष्णादिक वा मिष्ट-कटुकादिक वा सुगंध-दुर्गंध वा शुक्ल-कृष्णादिक वा शब्द, बंध, सूक्ष्म, स्थूल, संस्थान, भेद, तम, छाया, उद्योत, आतप इत्यादिक अचेतन पुद्गल के इष्ट-अनिष्ट भाव, तिन विषैं राग-द्वेष न करना; सो भाव सामायिक कहिये।

इन षट् पदार्थनि विषैं सम भाव करना। बहुरि नियम के काल पर्यंत एकांत स्थानक निश्चल आसन मुनिवत् रहना। जो परीषह आय प्राप्त होय हैं, तो मरण पर्यंत तिनकों दृढ़ मन करि राग-द्वेष रहित होय सहना। तहां, कै तो अपने स्वरूप को विचारना या पंच परमेष्ठी के गुणनि का स्मरण करना; अथवा द्वादश अनुप्रेक्षा का चिंतवन करना और सर्व विधान सामायिक का जो शास्त्र विषैं कह्या है, सो सर्व करना। सो तीजी **सामायिक प्रतिमा कहिये,** देशविरत का सामायिक तीसरा भेद कहिये अर देशसंयम भाव का द्वितीय भेद है।

अब चतुर्थ प्रोषध प्रतिमा निरूपिये हैं। प्रोषध प्रतिमा का धारक मास विषै दोय अष्टमी, दोय चतुर्दशी इन चार तिथि विषैं चार प्रोषध करै। काल मर्यादा उत्कृष्ट सोलह प्रहर, मध्यम बारह प्रहर, जघन्य आठ प्रहर का नियम धरि, चार प्रकार आहार का मन, वचन, काय करि कृत, कारित, अनुमोदना करि तेतीस के भंग का त्याग करि सर्व लौकिक कार्य वा विषय कार्य वा कषाय कार्य वा आजीविकादिक के कार्य वा विषय-वासना का त्याग करि सर्व कुटुम्बादिक तैं वा गृह-मंदिरादिक तैं मोह वासना छोड़ि एकांत स्थानक विषैं शय्या, आसन करै। तहां अपने स्वरूप का चिंतवन करै। एक तीर्थंकर वा प्रतिमाजी तिनकी वंदना करै। चौबीस तीर्थंकरों का स्तवन करै। पंच परमेष्ठी के स्वरूप का चिंतवन करै। जाप करै। तीन लोक का स्वरूप चिंतवन करै। शास्त्र का बांचना, पृच्छना, आम्नाय, अनुप्रेक्षा, धर्मोपदेश ये पंच प्रकार स्वाध्याय करै। द्वादशानुप्रेक्षा का चिंतवन करै। अनेक प्रकार परीषह, कष्ट आय प्राप्त होई, तिनकों साम्य भावनि करि सहै।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

इत्यादि धर्म प्रवृत्ति युक्त होतो संतो मुनि समान होय नियम काल पूर्ण करें। अर प्रोषध प्रतिमा को सर्व विधान शास्त्रोक्त होय सो करे; सो चौथी प्रोषध प्रतिमा कहिये। ये देशविरत का प्रोषधोपवास चौथा भेद है अर देशसंयम का तृतीय भेद है।

अब पांचवीं सचित्त त्याग प्रतिमा प्ररूपिये हैं। कच्चा जल अरु हरित काय का मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि तेतीस भंग मुख्य करि विराधना करने का त्याग करै। स्थूलपने काय करि भी विराधना नाहीं करें। अष्ट प्रहर की मर्यादा सहित उष्ण जल अर हरित काय रहित प्रासुक वस्तु का है भक्षण जाकै, सचित्त संबंधादि अतीचार रहित सचित्त का त्याग करै, सो सचित्त त्याग पांचवीं प्रतिमा कहिये। सो सचित्तविरत देशविरत का पांचवां भेद है। अर देशसंयम का चतुर्थ भेद है।

अब रात्रि-भुक्ति त्याग नाम षष्टम प्रतिमा कहिये हैं। तहां मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि तेतीस भंग का रात्रि भोजन का त्याग करै। रात्रि भोजन आप करें नाहीं, मन करि भोजन पर चित्त चलावे नाहीं, भोजन करया वा भोजन करश्या ऐसा वचन कहे नाहीं, काय करि भोजन करै नाहीं। बहुरि अन्य पुत्रादिकनि को भोजन करावने का चिंतवन करै नाहीं, वचन करि कहै नाहीं कि थे भोजन करो, काय करि अपने हस्त थकी भोजन करावै नाहीं। बहुरि रात्रि भोजन करावै नाहीं। बहुरि रात्रि भोजन करने वाले कौं मन विषै सराहवै नहीं, वचन करि सराहवे नाहीं, काय करि सराहवे नाहीं; सो रात्रि भुक्ति त्याग षष्टम प्रतिमा कहिये। या रात्रि भुक्ति देशविरत का षष्टम भेद है अर देशसंयम का पंचम भेद है।

अब ब्रह्मचर्य प्रतिमा कहिये हैं। जहां सर्व प्रकार चेतन-अचेतन स्त्रीनि सौं मैथुन करिवा का त्याग करै। मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि तेतीस के भंग अतीचार रहित त्याग करै अर नव बाढ़ सहित रहै। स्त्रीनि के संग विषैं रहै नाहीं, स्त्रीनि का सुन्दर अंग देख प्रेम – रुचि करि निरखै नाहीं, स्त्रीनि सौं प्रेम – रुचि करि बतलावै नाहीं, बहुरि प्रथम अवस्था विषैं आपनै कीये जो काम-रस भोग तिनकों चिंतवे नाहीं तथा कामोत्पादक गरिष्ट आहार खाय नाहीं, शरी कौं संवारे साजै नाहीं, स्त्रीनि की शय्यापर सौवे वा बैठे नाहीं, काम-कथा करै नाहीं,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

उदर भर भोजन खाय नाहीं, लघु भोजन करै, मन विषैं काम विकार करै नाहीं, स्त्रीनि के मुख के कामोत्पादक गानादिक राग करि सुनै नाहीं, तथा वचन करि काम-विकार चेष्टा करै नाहीं, गाली काढ़ै नाहीं, मसखरी आदि करै नाहीं, काय करि काम-चेष्टा करै नाहीं – इत्यादि त्याग युक्त होय; सो ब्रह्मचर्य प्रतिमा सप्तम कहिये। ब्रह्मचर्य देशविरत का सप्तम भेद अर देशसंयम का षष्टम भेद है।

अब आरंभ त्याग प्रतिमा कहिये हैं। जहां सर्व खान-पान संबंधी चूल्हा, चक्की, परंडी (पानी रखने की जगह) आदि के आरंभ का मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि तेतीस भंग का त्याग करि निरारंभ होय तिष्ठै। अपने घर वा पराये घर न्यौता जाय विषय रहित योग्य लघु भोजन करै। पुत्रादिक करि दिये विषय रहित, तुच्छ मोल के वस्त्रादिक पहिरै-ओढ़ै। आप सर्व वित्त सामग्री का त्याग करै। इत्यादि क्रिया सहित आरंभ त्याग अष्टम प्रतिमा कहिये। आरंभ त्याग देशविरत का अष्टम भेद है अर देशसंयम का सप्तम भेद है।

अब परिग्रह त्याग प्रतिमा कहिये हैं। जहां एक छोटे पन्हे की धोती, शिर ढांकनमात्र एक छोटीसी पागड़ी, एक पछेवड़ी – इत्यादि इन तीन वस्त्र मात्र का तो ग्रहण, अर अवशेष सर्व परिग्रह का मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि तेतीस के भंग का त्याग करै। स्व-पर के घर बुलावा जाय योग्य लघु भोजन करै। योग्य वस्त्र अन्य के दिये पहरै। निरवांछिक रहै, बहुरि बस्ती के बाह्य वसतिका आदि में रहै। गृहवास परित्याग करै। जिनमंदिर के समीप साधर्मी तैं धर्मध्यान निमित्त बनायी जो वसतिका, तिन विषैं रहै; सो परिग्रहत्याग नवमी प्रतिमा कहिये। यह परिग्रह विरत देशविरत का नवमां भेद व देशसंयम का आठवां भेद है।

अब अनुमति त्याग दशमी प्रतिमा कहिये हैं। लौकिक गृह व्यापारादि विवाह कार्य, तिनकी आप सराहना करै नाहीं कि "जो तुमने पुत्र का बहुत चोखा विवाह किया और भोजन की सराहना करै नाहीं – "जो तुमने हमको बहुत भला भोजन दिया। तुम बड़े भक्त दातार हो। तुमारे भक्ति अधिक है।" जहां लौकिक पाप कार्यनि के उपदेश देने का मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि तेतीस के भंग त्याग करै; सो अनुमति त्याग दशमी प्रतिमा कहिये। यह अनुमति त्याग देशविरत का दशम भेद अरु देशसंयम का नवमां भेद है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अब उद्दिष्ट त्याग प्रतिमा कहिये हैं । जहां उपदेश्या भोजन का त्याग करै । अनुदिष्ट आहार करै । मुनि की तरह गृहस्थ के घर जाय खड़ा रहै । वह बड़ा आदर-सत्कार करि भक्ति पूर्वक स्थापै; "हे महाभाग्य ! हमारौ अन्न-जल शुद्ध है, आप लीजिये" । तहां वाका उत्साह भाव, भक्ति भाव देखि, योग्य काल विषें योग्य लघु भोजन करै । वा श्रावक बहुत आदर सहित ऊँचा आसन बिछाय बहुत विनय सहित भक्ति करै । हर्ष करि भोजन दे । तहां विषय-कषाय रहित बैठ करि भोजन करै; सो उद्दिष्ट त्याग कहिये ।

इस प्रतिमा के दोय भेद हैं – क्षुल्लक, ऐलक । तहां क्षुल्लक तो लंगोट अर एक ओढवा को (पाटको) एक खंड वस्तु राखै । आहार करने को स्वल्प मोल का एक पात्र, शौचादि क्रिया निमित्त कमंडलु, दया निमित्त पिच्छिका राखै । अर पांच घरनि में आहार के निमित्त भ्रमण करै । जहां अपने पूर्णता योग्य आहार दीखै, तहां ही पात्र में लेय, बैठिकें भोजन करै । पीछें पात्र कौं शुद्ध जल तैं पखालि वन विषैं विहार करै । अर जो यह सुनै कि "यहाँ व्रती श्रावक वा मुनि आवेंगे, उनकौ यह आहार पकाया है"; वहां भोजन का परित्याग करै । बहुरि स्पर्श्य शूद्र कौ तो क्षुल्लक पर्यंत ही देशविरत का ग्रहण है ।

अर ऐलक एक कोपीन ही राखै अर ऐलक व्रत ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य इन तीन उच्च गोत्र के धारकनि ही के होय । शुद्रनि के नाहीं होय । अर ये शौच निमित्त कमंडलु, दया निमित्त पिच्छिका राखैं । पंच घरनि विषैं आहार निमित्त भ्रमण करैं । जहां आहार की योग्यता होय, तहां बैठि पाणि-पात्र विषैं भोजन करैं । इनकें पात्र का ग्रहण नाहीं । ये श्रावक मुनि तुल्य हैं। जिनके कोपीन मात्र परिग्रह हैं उतने देशव्रती हैं ।

महाव्रती हैं, ते द्विजन्मा हैं । लोक विषैं द्विजन्मा ब्राह्मण कूं कहैं हैं । सो द्विजन्मा शब्द का यहाँ यह अर्थ न जानना । यहाँ ऐसा अर्थ है कि जो पहिले तो माता का रुधिर, पिता का वीर्य तैं पुद्गल पिंड को ग्रहण करि नग्न दिगम्बर रूप तैं जन्म पाया । सो एक जन्म तो यह भया । सो, यह जन्म तो सर्व ही संसारी जीवनि कैं अनादिकाल का अज्ञान अवस्था तैं होय है । अर पीछे संसार, देह, भोग तैं उदास होय बाह्य अभ्यंतर चौबीस प्रकार परिग्रह त्याग करि जैसा स्वरूप माता के उदर में तैं निकसै नगन था, तैसा ही ग्रहण किया, सो ज्ञान पूर्वक व्रत संस्कार करि दूसरा जन्म

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

भया; सो यहाँ द्विजन्मा शब्द का यह अर्थ है। सो क्षुल्लक व्रत को धारक शूद्र ही होय, सो तो एक लोह पात्र राखै, जातैं अपना शूद्र कुल प्रगट ही दीसै, जातैं सूत्र की ऐसी आज्ञा है कि ताही पात्र विषैं भोजन करै। अर अस्पर्श्य शूद्र कों दूसरी प्रतिमा तैं अधिक ग्रहण करने की आज्ञा नाहीं। बहुरि बंस्ती वा अनवस्तिका आदिकनि में है वास जिनका, इस प्रकार देशसंयम भाव के दश भेद कहिये।

तहां सर्व ही भेदनि विषैं सदा काल सर्व के खान-पानादि करता, आजीविका व्यवहार करता, विषय सेवता इत्यादि सर्व अवस्था विषैं गुणश्रेणी निर्जरा अपने भावनि की विशुद्धता के अनुसार निरन्तर होय है।

ऐसा एकादशमी प्रतिमा उद्दिष्ट त्याग का स्वरूप जानना। यह उद्दिष्ट त्याग देशविरत का एकादशवां भेद है। यह देशसंयम का दशमां भेद हैं।

इस प्रकार एकादशम प्रतिमा सहित देशसंयम का संक्षेप कथन किया। विशेष व्याख्यान श्रावकचार के योग्य बड़े ग्रंथनि तैं जानना।

अब देशसंयम क्षायोपशमिक भाव का योग्य **गुणस्थान** तो एक पंचम संयमा-संयम ही है। बहुरि मार्गणा **गति** – मनुष्य, तिर्यंच २, **जाति** – पंचेन्द्रिय, **काय** – त्रस, **योग** – ९ (मन के चार, वचन के चार, औदारिक काययोग,) **वेद** – तीन, **कषाय** – (अनंतानुबन्धी, अप्रत्याख्यान आठ बिना) १७, **ज्ञान** – (मति, श्रुत, अवधि) ३, **संयम** – देश संयम, **दर्शन** – कैवल बिना ३, **लेश्या** – पीत, पद्म, शुल्क, **भव्य** – १, **सम्यक्त्व**– औपशमिक, क्षायोपशमिक, क्षायिक, **संज्ञी**, **आहारक**, ।

बहुरि देश संयम भाव वर्तमान भी सुख रूप है अर आगामी स्वर्ग, मोक्ष का कारण है।

इति श्री भावदीपिका ग्रंथ के क्षायोपशमिक भावाधिकार विषैं
छटमां देशसंयम भावांतराधिकार पूर्ण भया।

—*—

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

क्षायोपशमिक चारित्र भावान्तराधिकार

(दोहा)

चारित चाप चढायकें, रत्नत्रय सरसंध ।
मोह शत्रु क्षय जिन कियो, नमों जगत करि वंद्य ।।

अब क्षायोपशमिक चारित्रभावाधिकार लिखिये हैं –

तहां संज्वलन चारित्र मोहकर्म के सर्वघाती स्पर्धकनि के उदय का अभाव होय – उदय को प्राप्त भये जे सर्वघाती स्पर्धक, तिनका तौ प्रदेश उदय होय नाहीं, सो तौ क्षय कहिये; अर उदय कौं न प्राप्त भये ऐसे सत्ता रूप स्पर्धक, तिनका उपशांत करण होय, उदीरणा होय, उदय आवै नाहीं। अर देश घाति स्पर्धकनि का उदय होय, तहां क्षायोपशमिक चारित्र भाव प्रगट होय है।

तहां स्वयं बुद्ध वा प्रतिबुद्ध हुआ संता, संसार, शरीर, ग्रह, कुटुम्ब, परिग्रह, विषय-भोगादिक तें विरक्त होय बन में जाय अठ्ठाईस मूलगुण के धारक, महातपस्वी सर्व श्रुत के पारगामी तथा दोय, तीन, चार प्रमाण ज्ञान के धारक, महाऋद्धचादि गुणकरि युक्त, सर्व संसार माया तें निष्पृह, बाह्य-अभ्यन्तर चौबीस परिग्रह के त्यागी, परम दिगम्बर नग्नमुद्रा के धारक, दीक्षा-शिक्षा देने विषैं प्रवीण, सर्व जीवनि के हितकारी, ऐसे जे श्री गुरुदेव, तिनकै पास जाय दीक्षा जांचै। तब श्री गुरु वाकौं दीक्षा योग्य देखि आज्ञा करैं। "**हे महाभाग्य ! तैं (तूने) भली विचारी। यह महा अलभ्य परम कल्याण की करनहारी, संसारो कायर जीवनि कूं भयंकर महा-पुरुषनि करि सेव्यमान, त्रिलोक पूज्य, ऐसी जैनेश्वरी दीक्षा ताहि तू ग्रहण कर।**" तब यह अष्टांग नमस्कार करि हाथ जोड़, विनय करि युक्त, सन्मुख श्रीगुरु के निकट खड़ो रहै। तब श्री गुरु आज्ञा करैं – "वस्त्राभूषण का परिहार कर"। तब आज्ञा होते ही यह तत्काल हर्ष करि सर्व वस्त्राभरण ऐसैं उतारे, जैसैं शरीर तैं मैल उतारि डारै।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

परिग्रह के चौबीस प्रकार

बहुरि चौदह प्रकार अभ्यंतर परिग्रह हैं अरु दशप्रकार बाह्य परिग्रह का श्रीगुरु की आज्ञा पूर्वक त्याग करै। तहां मिथ्यात्व, क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पुरुष वेद, स्त्री वेद, नपुंसक वेद – ऐसे चौदह प्रकार अभ्यंतर परिग्रह हैं।

बहुरि क्षेत्र, वास्तु, हिरण्य, सुवर्ण, दास, धन धान्य, कुप्य, भांड या प्रकार दस बाह्य परिग्रह – ऐसैं चौबीस प्रकार परिग्रह का त्याग करै।

अब इनका स्वरूप कहिये हैं – "**मूर्च्छा परिग्रहः**" कहिये पर द्रव्य सेती ममत्व भाव, ममत्व कहिये आत्मा का परिणाम अर पर द्रव्य सौं एकत्व होय बंध जाना। जैसे – तांतूडीगोह, जलचर जीव, अपने तंतूनि कूं चलाय, गांठि देय परद्रव्य कौं आपकी ओर खेंच करि एकत्व होय हैं, तैसें आत्मा अपने ममकार भावरूप परिणाम करि पर द्रव्यनि सौ गांठरूप होय एकत्व भाव को प्राप्त होय है। तातैं याही कूं ग्रंथि कहिये।

परद्रव्यनि कूं बांधनहारा आत्मा का ममत्व परिणाम, सो अभ्यंतर ग्रंथ कहिये। अर जो आत्मपरिणाम के बांधने में आये परद्रव्य, ते बाह्य ग्रंथ कहिये। बाह्य-अभ्यंतर परिणाम ग्रंथि पूर्वोक्त चौबीस प्रकार ताका त्याग करै; तब निर्ग्रंथ पद होय है।

जहां परद्रव्य सेती अहंकार-ममकार बुद्धिरूप परिणामन का त्याग, सो अभ्यंतर मिथ्यात्व परिग्रह का त्याग कहिये। अर बाह्य शरीर-कुटुंबादिक का त्याग वा क्षेत्रादि दश प्रकार वस्तुओं का त्याग, सो बाह्य मिथ्यात्व परिग्रह का त्याग कहिये।

वा गृहीत मिथ्यात्व भाव को धरैं मिथ्यादेव, गुरु, धर्म, आप्त, आगम, पदार्थ वा तिनके धारक ऐसे चेतन-अचेतन पदार्थनि विषैं राग का त्याग कहिये, सो अभ्यंतर मिथ्यात्व परिग्रह का त्याग कहिये। अर तिन चेतन-अचेतन नव पदार्थनि का त्याग, सो बाह्य मिथ्यात्व परिग्रह का त्याग कहिये।

बहुरि तहां परद्रव्य विषैं क्रोध का त्याग, सो अभ्यन्तर क्रोध परिग्रह का त्याग कहिये।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अर बाह्य क्रोध के कारण पर द्रव्य का त्याग, सो बाह्य क्रोध परिग्रह का त्याग कहिये ।

बहुरि जहां अष्ट प्रकार मदादि रूप मानभाव का त्याग, सो अभ्यन्तर मान परिग्रह का त्याग कहिये ।

अर मान के कारण बाह्य परिग्रह का त्याग, सो बाह्य मान परिग्रह का त्याग कहिये ।

बहुरि मन, वचन, काय की कुटिलता रूप जो मायाभाव अर्थात् जहां मन विषैं तो किछु और ही विचार करना, अर वचन करि कछु और ही कहना; वा काय करि किछु और ही करना; सो मन, वचन, काय की कुटिलता कहिये। वा आप तो मन, वचन, कायादिक की प्रवृत्ति वा ज्ञान-चारित्रादिक की प्रवृत्ति, वा कुल जात्यादिक नीची अवस्था को धारै हैं, अर कोई अन्य जीव अपनी अवस्था सें ऊंची बधाय वर्णन करै, तहां अपने मन विषैं प्रिय लागै, अपनी जैसी की तैसी अवस्था प्रगट न कर देना, सो मन की कुटिलता कहिये ।

बहुरि आप वचन तो तुच्छ कार्यादिक का साधक वा अपनी न्यूनता को कारण कह्यो थो, अर कोई अन्य मनुष्य इनके वचन कौं कोई अपेक्षा करि बड़े कार्य को साधक वा उच्चता को कारण थापै, ताप्रति अपने कहे वचन को गोप्य करि कहै "हमतो तुम समझे हौ ऐसा ही वचन कह्या है"; ऐसा कहना सो वचन की कुटिलता कहिये ।

बहुरि आप काय की नीची प्रवृत्ति कौं धारैं हैं अर अन्य जीवनि कौं देखतां काय की प्रवृत्ति ऊंची बनाय ले, सो काय की कुटिलता कहिये । इनका तहाँ त्याग करना, सो अभ्यंतर माया परिग्रह का त्याग कहिये ।

बहुरि इनके कारण बाह्य परद्रव्य का त्याग; सो बाह्य माया परिग्रह का त्याग कहिये ।

बहुरि मोह इच्छा, कषाय इच्छा, भोग इच्छा, रोग इच्छा, इन चार प्रकार की इच्छा की कारणभूत जो इष्ट सामग्री तिनकी प्राप्ति की इच्छा रूप जो अप्रशस्त लोभ, ताका त्याग; सो अभ्यंतर लोभ परिग्रह का त्याग कहिये ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अर बाह्य कारणभूत जो परद्रव्य रूप बाह्य सामग्री का त्याग, सो बाह्य लोभ परिग्रह का त्याग कहिये ।

जहां चार प्रकार इच्छा की साधक सामग्री का संगम होता प्रसन्न होना वा परद्रव्य हास्य के कारण देखी आप हास्य रूप होना, ऐसा जो हास्य रूप भाव, ताका जो त्याग, सो अभ्यंतर हास्य परिग्रह का त्याग कहिये ।

अर हास्य की कारणभूत परद्रव्य सामग्री, ताका त्याग, सो बाह्य हास्य परिग्रह का त्याग कहिये ।

बहुरि चार प्रकार इच्छा को कारण परद्रव्य रूप जो इष्ट सामग्री, तिन विषैं आसक्तभाव का त्याग, सो अभ्यंतर रति परिग्रह का त्याग कहिये ।

बहुरि रतिभाव को कारण परद्रव्य रूप सामग्री ताका, त्याग, सो बाह्य रति परिग्रह का त्याग कहिये ।

बहुरि जो आपको न सुहावै वा दुःखदायक होय, ऐसी जो परद्रव्य रूप बाह्य सामग्री ताका संबन्ध होतैं जो अरुचिभाव होय; यातैं शीघ्र छूट जाने की भावना ऐसा अरतिभाव, ताका त्याग करना, सो अभ्यंतर अरति परिग्रह का त्याग कहिये ।

बहुरि बाह्य अरति को कारणभूत सामग्री के अभाव को कारण बाह्य सामग्री ताका त्याग, सो बाह्य अरति परिग्रह का त्याग कहिये ।

बहुरि चार प्रकार इच्छा का कारणभूत जो बाह्य परद्रव्य रूप सामग्री का वियोग होतैं जो निरुद्यमी हुआ थका चिंता का करना, सो शोक कहिये; ताका त्याग, सो अभ्यंतर शोक परिग्रह का त्याग कहिये ।

बहुरि शोक का कारणभूत जो परद्रव्य रूप बाह्य सामग्री का त्याग, सो बाह्य शोक परिग्रह का त्याग कहिये ।

बहुरि जहां शरीरादिक इष्ट सामग्री का बाधक कौं जानि भयरूप भाव कौं धरना, छुप जाना वा भाग जाने की बुद्धि धरना, ताका त्याग, सो भय परिग्रह का अभ्यंतर त्याग कहिये ।

बहुरि भय के कारण जे परद्रव्य चेतन-अचेतन पदार्थ, तिनके निवारने का कारण जो परद्रव्य रूप सामग्री, ताका त्याग, सो बाह्य भय परिग्रह का त्याग कहिये ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जे अपने मन कूँ अभावती पर द्रव्य रूप सामग्री, ता थकी अहोठा भाव करना, ग्लानि करना, ताका नाम जुगुप्सा कहिये । ताका त्याग, सो अभ्यंतर जुगुप्सा परिग्रह का त्याग कहिये ।

बहुरि जुगुप्सा का कारणभूत जो बाह्य परद्रव्य, ताका त्याग, सो बाह्य जुगुप्सा परिग्रह का त्याग कहिये ।

बहुरि स्त्री सौं काम सेवन की इच्छा, ताका नाम पुरुष वेद कहिये । ताका त्याग, सो अभ्यंतर पुरुष वेद परिग्रह का त्याग कहिये ।

अर बाह्य स्त्री संगम का त्याग, सो बाह्य पुरुष वेद परिग्रह का त्याग कहिये ।

बहुरि पुरुष सौं काम सेवने की जो इच्छा, ताका नाम स्त्री वेद कहिये । ताका जो त्याग, सो अभ्यंतर स्त्री वेद परिग्रह का त्याग कहिये ।

बहुरि बाह्य पुरुष के संबन्ध का त्याग, सो बाह्य स्त्री वेद परिग्रह का त्याग कहिये ।

बहुरि स्त्री पुरुष दोयनि सौं काम सेवने की इच्छा, सो नपुंसक वेद कहिये । ताका जो त्याग, सो अभ्यंतर नपुंसक वेद परिग्रह का त्याग कहिये ।

अर जहां बाह्य स्त्री-पुरुष के संबन्ध का त्याग, सो बाह्य नपुंसक वेद परिग्रह का त्याग कहिये ।

बहुरि कह आये जे बाह्य परिग्रह, ते सर्व दश प्रकार भेद कूं धरैं हैं । क्षेत्र कहिये भूमि-देशादिक, वा वास्तु कहिये मंदिर-घर-मंडपादिक, हिरण्य कहिये हेम रत्नादिक, स्वर्ण कहिये हेम-रूपादिक, धन कहिए स्त्री, पुत्र, परिवारादिक वा हस्ती, घोटक, महिष, ऊँट, वृषभ, गाय आदिक, धान्य कहिए अन्न-घृतादिक सर्व जिन्स वस्तुएं, दासी कहिये टहल करनहारी, दास कहिये टहलवा चाकर पुरुष, कुप्य कहिये कपड़ा वा अरगजादि सुगंध द्रव्य, भांड कहिये खान-पान-स्नानादिक के उपकरण – थाली, कटोरा, लोटा, चरी, परात इत्यादि कांसा, पीतल, लोहा, सुवर्ण, रूपादिक के इन दश प्रकार बाह्य परिग्रह का त्याग करै । ऐसैं चौबीस प्रकार परिग्रह का त्याग करै, तब निर्ग्रंथ पद को प्राप्त होय ।

अर जो इन चौबीस प्रकार बाह्य-अभ्यंतर पहिग्रह विषैं कोई भी प्रकार किसी को ग्रहण होय, तहां निर्ग्रंथ पद को अभाव है । इन चौबीस प्रकार बाह्य-

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अभ्यंतर परिग्रह का त्याग द्रव्यलिंगी, भावलिंगी दोनों ही जाति के मुनिन के पाइये है। इनमें से एक का भी सद्भाव पाइये, तहां वह मुनिपद नाहीं, कुलिंग है। वा बाह्य दश प्रकार परिग्रह का तो अभाव है। अर नग्न मुद्रा के धारक हैं। अर अभ्यंतर चौदह प्रकार परिग्रह विषैं किसी भी भाव का सद्भाव पाइये तो भी कुलिंगी है। अर जहां बाह्य दस प्रकार परिग्रह का सद्भाव पाइये है; तहां तो कुलिंग अवश्य ही है। तातैं बाह्य-अभ्यंतर को सद्भाव होते वा इन विषैं एकादि कोई ही को सद्भाव होतैं मुनि लिंग मानना, भगवान की आज्ञा नाहीं है। सर्व प्रकार परिग्रह के त्याग विषैं ही मुनि लिंग मानना।

इन चौबीस प्रकार परिग्रह तैं निस्पृह होय, बहुरि सर्वविध को कारणभूत सामायिक चारित्र, ताकों प्रतिज्ञा पूर्वक ग्रहण करै। कैसा है सामायिक चारित्र? ता विषैं शत्रु-मित्र, मंदिर अर वन, सुख-दुःख, जीवन-मरण, रोग-निरोग, राजा-रंक, स्वजन-परजन, चिंतामणि रत्न-ठीकरी, लाभ-अलाभ, कटु वचन-मिष्ट वचन, सत्कार-पराभव, गाली, असत्य वचन इत्यादिक है समान जाकैं, ऐसा राग-द्वेष रहित समताभाव का धारक गुरु की आज्ञा तैं ग्रहण करै है। "बहुरि मन करि, वचन करि, काय करि, कृत, कारित, अनुमोदना करि सर्व सावद्य का मेरे यावज्जीवन त्याग है" ऐसा प्रतिज्ञा वाक्य मुख तैं काढ़े। अर जो दीक्षा काल (समय) जो क्रिया योग्य हैं, सो सर्व शास्त्र का वेत्ता श्री गुरु शास्त्रोक्त सर्व क्रियायुक्त दीक्षा ग्रहण करावै। तहां वह जीव अट्ठाईस मूलगुण सहित सामायिक चारित्र की प्रतिज्ञा करै।

मुनि के अट्ठाईस मूलगुण

तहां पंच महाव्रत प्रतिज्ञा पूर्वक ग्रहण करै –

तहां त्रस स्थावर जीवनि की रक्षा है जा विषैं, तिनकों मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि नाहीं विराधै। उद्यम करि शरीर तैं स्व-पर का द्रव्य-भाव प्राणनि का नाश नाहीं करै है। स्व-पर कोई द्रव्य-भाव प्राणनि कौं कोई प्रकार वचन, काय करि दुःखावै नाहीं। बहुरि मन विषैं स्व-पर के द्रव्य-भाव प्राणनि के नाश करने का, दुःखावने का संकल्प करै नाहीं, बहुरि जीवनि की दया धरि छोड़ा है सर्व प्रकार आरंभ जानै, ताकरि आरंभी हिंसा भी नाहीं होय। ऐसे **अहिंसा महाव्रत** का ग्रहण है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि **सत्य महाव्रत** का ग्रहण करै हैं। बहुरि छोड़ा है सर्व प्रकार असत्य वचन जानै, हित कहिये सर्व जीवनि के सुख का कारण अर मर्यादा रूप ऐसा हित, मित, वचन बौलै है । वा मौन से रहै है, कोई प्रकार भी अलीक वचन नाहीं बोलै हैं।

बहुरि सर्व प्रकार सर्वथा अदत्त ग्रहण का त्याग है, ऐसी **अचौर्य महाव्रत** की प्रतिज्ञा करी है ।

बहुरि सर्व प्रकार सर्वथा द्रव्य-भाव करि मैथुनादिक काम विकार का त्याग है, सो **ब्रह्मचर्य महाव्रत** कहिये ।

बहुरि सर्व प्रकार सर्वथा अभ्यंतर व बाह्य चौबीस प्रकार परिग्रह का त्याग है, सो **परिग्रह त्याग महाव्रत** कहिये ।

ऐसें तो नियम रूप पंच महाव्रत मूलगुणनि की प्रतिज्ञा करै। बहुरि इन पंच महाव्रत की रक्षा के निमित्त २३मूलगुण की प्रतिज्ञा सहित ग्रहण है।

तहां पांच तो समिति का ग्रहण करै –

तहां विहार समय श्री मुनि अपनी अचल दृष्टि तैं जूड़ा प्रमाण धरती शोधते हुए ही गमन करें, और तरफ दृष्टि नहीं फेरी है । कदाचित अनेक जीव आय सर्वत्रपने नमस्कारादि करैं हैं, तिन प्रति आपके मुख थकी वचनालाप न करै है । तहाँ मार्ग मैं पिपीलिनिकादि जीव दृष्ट पड़ें, तिनकों बचाय पग धरै है । अर बहुत होय तो वह मार्ग छोड़ि अन्य मार्ग गमन करै, और मार्ग नहीं होई तो वहां ही खड़ा रह जाई। वा तिस मारग सों उल्टा हो जाई; जैसा योग्य विवहार होई तैसा करे; सो **ईर्या समिति** है ।

बहुरि जहां उपदेशादिक वचन योग्य कार्य होय, तहां वचन की प्रवृत्ति करै; सो वचन हित कहिये, सब जीवनि का कल्याण रूप अर मित कहिये मर्यादारूप ऐसा हित, मित, वचन बौले; सो **भाषा समिति** कहिये ।

बहुरि जहां छियालीस दोष रहित अन्तराय करि वर्जित शुद्ध आहार का ग्रहण, सो **एषणा समिति** कहिये ।

अब छियालीस दोषां का वर्णन करिये हैं – तहां सोलह दोष तो दातार आश्रित, सो तो उद्गम दोष कहिये । १. जहां षट् काय जीवनि की विराधना करि

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आहार निपज्या होय वा आहार समय षट् काय जीवनि की मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि विराधना करै; सो अधःकर्म दोष कहिये। २. बहुरि यति के अर्थि वा आप के अर्थि रसोई विषैं तंदुलादिक और मिलावै सो अडोड [अध्यधि] दोष कहिये। ३. अप्रासुक भोजन देना, ताकूं पूतिकर्म दोष कहिये। ४. कुदिष्टनि (दृष्टि) की सामलात की रसोई का अन्न आहार कूं देना वा असंयमी की भांति आहार देना; सो मिश्र दोष कहिये। ५. जिस भाजन में तंदुलादिक पचाये हों तिस में सौं अन्न काढ़ि पचावना वा अन्य भाजन में काढ़ि लाय आहार दैना, सो स्थापित दोष कहिये। ६. बहुरि पित्रादिक के अर्थि रसोई करी होय वा और कां (अन्य के) निमित्त करी होय, तिस रसोई का भोजन दैना, सो बलि दोष कहिये। ७. काल के हीनाधिक सहित आहार दैना, सो परावर्ती दोष कहिये। ८. मुनि के आहार दिये पीछे भोजनादिक बाहर काढ़ि बुहारना, जांगा धोवना, सो प्राचीन क्रिया दोष कहिये। ९. तत्काल अपने-पराये द्रव्य करि वा विध्या आहार दैना, सो क्रीत दोष कहिये। १०. उधारा लेय आहार देना, सो ऋणदोष कहिये। ११. अपने अन्नादिक और सूं बदलि आहार दैना, सो प्रवर्तिक दोष कहिये। १२. अन्य ग्रामादिक तैं मंगाय आहार दैना, सो अभिघट दोष कहिये। १३. बहुरि बंधा हुवा वा मौहर किया हुवा तत्काल खोलि आहार दैना, सो उद्भिन्न दोष कहिये। १४. नाली-सीढ़ी चढ़ि लाय आहार दैना, सो मालारोहण दोष कहिये। १५. स्वामी बिना अन्य की रसोई का आहार दैना, सो अनीशार्थ दोष कहिये। १६. राजादिक के भय करि व्याप्त हो आहार दैना, सो ❀आछेद्य दोष कहिये।

इन षोडश दोष सहित ग्रहस्थ, यती कूं आहार दे नाहीं, अर मुनि जानैं तौं ले नाहीं।

बहुरि सोलह उत्पादन दोष यत्याश्रित हैं। १. जहां धाय की नाई (समान) दातार के बालकनि कूं खिलावना-पुचकारना, सो धात्री दोष कहिये। २. दूत की नाई देशांतर का समाचार दातार सूं कहनां, सो दूत दोष कहिये। ३. निमित्तज्ञान की बात दातार सूं कहना, सो निमित्त दोष कहिये। ४. दातार कूं सुहावतां कुपात्र

❀आछेद्य दोष कूं सारचौबीसी में ऐसा कहा है कि संयमनि के भिक्षा का आगमन देखि कर गृहस्थ, राजादिकनि का भय तैं दान देवै वा पंच लोकनि में अपनी निंदा होने के भय तैं साधू कूं दान दैवै, सो आछेद्य दोष जानना।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

दानादि पोषतां वचन दातार को कहना; सो बणीपक (वनीपक) दोष कहिये। ५. दाताराश्रित नाड़ी देखनादि वैद्यक क्रिया करनी; सो चिकित्सा दोष कहिये। ६. बहुरि क्रोध सहित आहार लैंना, सो क्रोध दोष कहिये। ७. मान युक्त आहार लैंना, सो मान दोष कहिये। ८. माया युक्त आहार लैंना; सो माया दोष कहिये। ९. लोभ का अभिनिवेश सहित आहार लैंना; सो लोभ दोष कहिये। १०. आहार लिये पहिले स्तुति करना; सो पूर्वस्तुति दोष कहिये। ११. अर आहार लिये पाछै दातार की स्तुति करना; सो पश्चात्स्तुति दोष कहिये। १२. कोई विद्या दे आहार लैंना; सो विद्या नाम दोष कहिये। १३. मंत्र करि आहार लैंना; सो मंत्र नामा दोष कहिये। १४. चूर्ण, अंजनादि देइ आहार लैंना, सो चूर्णादिदोष कहिये। १५. वशीकरणादि कर आहार लैंना, सो मूलकर्म दोष कहिये। १६. आजीविका की बात दातार सों बतावना, सो आजीविका दोष कहिये। अर विशेष – मुनिश्वर दातार के घर जाय कहे कि आजकाल भोजन का निमित्त अल्प है, इत्यादि कही भोजन करे, सो मुनिश्वर को दोष लगे। इन दोषनि सहित भया यति आहार ले नाहीं। ❀

अब एषणा दोष कहिये। १. आहार सदोष है कि निर्दोष है – ऐसी शंका सहित आहार लेना, सो संभ्रान्त (शंकित) दोष कहिये। २. चिमटा करि वा भाजनि करि आहार लेना; सो मिश्रित (भखस) दोष कहिये। ३. सचित्त वस्तु पर धर्‍या आहार लेना; सो निहित दोष कहिये। ४. सचित्त वस्तु सूं ढका हुआ आहार लेना, सो पिहित दोष कहिये। ५. सचित्त वस्तु करि मिला हुवा आहार लेना, सो मिश्रदोष कहिये। ६. जो व्यवहार जिताय (जनाय) आहार दे, तिस आहार का लेना, सो व्यवहार दोष कहिये। ७. बहुरि सूतकवाला वा रोगी वा नपुंसक वा बालक वा वृद्ध वा गर्भवती स्त्री वा अकेली स्त्री वा अग्न्यादिक का जलावनहारा वा घर, मंडपादिक का चुनने वाला वा धोवने वाला वा विलेपस्नानादिक करने वाला वा रोवते बालक कों छोड़ि आवै वा ऊंचे-नीचे क्षेत्र विषैं तिष्ठते स्त्री-पुरुष, तिनके हाथ करि दिया हुवा आहार लेना, सो दायक दोष कहिये। ८. जिनके वर्णादिक फिरैं नाहीं, ऐसे अन्न-जलादिक तिनका ग्रहण; सो अपरिणति दोष कहिये। ९. खटाई आदि करि लिप्त दातार का हाथ होय वा भाजन होय तो तिसकरि आहार लेना,

❀ यह अंश श्री पार्श्वनाथ दि० जैन चैत्यालय, वापूनगर; जयपुर की हस्तलिखित प्रति से लिया है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सो लिप्त दोष कहिये। १०. जिनके रसादिक गल गये; असे तंदुलादिक, तिस आहार का ग्रहण करना; सो त्यजन दोष कहिये।

अब*संयोजन दोष कहिये हैं। १. बहुरि स्वाद के अर्थि शीत उष्णादिक वा क्षार, आम्ल, तिक्त, मिष्ट आदि वस्तुनि का मिलावना, सो संयोजन दोष है। २. आहार आसक्त होय ग्रहण करि, दातार का जस करै; सो अङ्गार दोष कहिये। ३. स्वाद रहित आहार न ग्रहै, तिस दातार की निंदा करैं, सो धूम्र दोष कहिये। ४. मर्यादा उल्लंघि आहार लैना, सो अप्रमाण दोष कहिये।

इस प्रकार सोलह उद्गम दोष, सोलह उत्पादन दोष, दश एषणा दोष, चार संयोजनादि दोष – असे छियालीस दोष आहार के टालै, अंतराय टालै।

अब अन्तराय दोष कहिये हैं।

१. शरीर का विष्टापतन, २. परंदादि (पंख) अशुचि वस्तु करि लिप्त देखै, सो अमेद्य कहिये छर्दि कहिये बमन करै तो, ३. रोधन कहिये कोई रोके तो, ४ रुधिरादि सप्तधातु स्पर्शन वा दर्शन, ५. मलमूत्रादि स्पर्शन वा दर्शन, ६. अश्रुपात कहिये आपकैं कोई मोहादिक को कारण पाइ अश्रुपात होय वा कोई निकटवर्ती रोवै तो, ७. जांघव प्रामृष कहिये कोई प्रकार जंघा नीचौ हाथ लगि जाय तो, ८. जानूपरवित कर्म कहिये गोड़ा करि कोई व्यतिक्रम होय जाय तो, ९. नाभि अधो निगमन कहिये नाभि के नीचे-नीचे होय निकलना होय तो, १०. प्रत्याख्यान सेवन कहिये त्यजन करि वस्तु कौ ग्रहण होय जाय तो, ११. आपकरि वा अन्यकरि कोई जीव का मरण होय जाय तो, १२. काकादिक ग्रास लेय जाय तो, १३. पाणिपात्रादि पिंडपतन कहिये पाणिपात्र थकी ग्रास गिर पड़ै तो, १४. पाणिपात्रादि जंतुवध कहिये पाणिपात्र विषैं कोई जंतु आय मरै तो, १५ उपसर्ग होय तो, १६. तहां पादांतरे जीवगमन कहिये दोनों पगां बीच होय कोई पंचोन्द्रिय जीव निकसि जाय तो, १७. भाजन संपात कहिये आहार देनेवाले के हाथ सूं भाजन गिर पड़ें तो, १८. उछाट कहिये स्व उदर थकी मल निकल पड़े तो, १९. मूत्रस्त्रवन कहिये स्व उदर थकी मूत्र स्त्रवै तो, २०. अभोजन ग्रह प्रवेश कहिये चांडालादि के ग्रह प्रवेश होजाय तो, २१. पतन कहिये मूर्च्छा आदि से गिर पड़ना होय जाय तो, २२. उपवेशन कहिये कोई प्रकार वैठना होय जाय तो, २३. श्वंसदृष्टि कहिये श्वानादि काट खाय तौ, २४. भूमिस्पर्श कहिये भूमि का स्पर्श होय जाय तो, २५. निष्ठीवन कहिये श्लेष्मादि खैपै तो, २६. स्व उदर थकी कृम्यादि निर्गमन कहिये स्व उदर थकी गिंडोला निकसी पडैं तो,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

२७. अदत्तग्रहण होय जाय तो, २८. ग्रामदाह कहिये लाय लागै तो, २९. परिहार कहिये आपको वा पर को शस्त्रादिक का घाव लागै तो, ३०. पादग्रहण कहिये पाद थकी वस्तु उठाय ले तो, ३१. कर ग्रहण कहिये हाथ थकी भूमि सों वस्तु उठाय लेय तो, ३२. दाताराश्रित रोग, मृत्यु आदि दुःख, ३३. पड़िगाहनहारे के वस्त्र अयोग्य अशुद्ध होय, ३४. चतुर्विध संघ को उपसर्ग होय, ३५. साधर्मी को संन्यास मरण होय ताहि सुनै तो, ३६. चैत्य, चैत्यालय, शास्त्रजी कों विघ्न होय, ३७. राजादि महंत पुरुषनि का मरण होय तो, ३८. हस्ती-घोटकादि बड़े तिर्यंच का मरण दृष्ट पड़ैं तो, ३९. कलह होय, संग्राम होय तो, ४०. प्रजा भयकंप होय तो, ४१. डाकादिक पड़े तो, ४२. पाणिपात्र विषैं नख-रोमादि निसरैं तो, ४३. अशुचि वस्तु का स्मरण होय तो, ४४. गंडूस कर दे तो (कुल्ला कर दे), ४५. चाँडालादिक मनुष्य, मार्जार, कूकर, शूकर, खर, मूषकादि का स्पर्श होय जाय तो, ४६. अंजुलिमोचन, ४७. मौनमोचन, ४८. अशुद्ध, हिंसक, कर्कश वचन सुनै, ४९. बहुरि चाकी चलती, ५०. चूल्हो बलतो, ५१. घोटता, ५२. सिल बांटतो, ५३. कपास पेलतो, ५४. मांटी खनतो, ५५. रोष कर्म करतो, ५६. गोबर थापती, ५७. मांटी मलती, ५८. शिर न्हावती, ५९. शिर बाहती (बांधती), ६०. जूवां-दिक काढती, ६१. अप्रासुक पानी, ६२. नाज सूकतो, ६३. नांतनो फाटो, ६४. करवो फुटों, इत्यादि दृष्टि पड़ैं – इन ६४ अंतरायनि कूं टालैं । और भी अयोग्य अंतराय होंय तो तिनकौं टालि; आहार प्रासुक ले, सो चारित्र का साधक जो शरीर ताकी स्थिति के अर्थी विषय रहित नीरस आहार ले। नीरस कहिये इष्ट भोजनादि मिलै, तो तासों राग न करै। अनिष्ट मिलै तो तासों द्वेषभाव न करै। ऐसा अजाचीक व्रत धारतां संता लाभ अर अलाभ है बराबर जाकै, श्रावक के घर जाय यथाविधि आहार ले, सो **एषणा समिति** कहिये।

बहुरि तीन धर्मोपकरण राखै – शौच क्रिया के अर्थ काठ वा एक किस्म के फल को कमंडल राखै; सो शौचोपकरण कहिये। अर दया के अर्थ कोमल मोर पिछिका राखै; सो दया उपकरण कहिये। अर जो पहले गृहस्थ अवस्था विषैं कोई शास्त्र भण्यो नाहीं अर ज्ञान-वैराग्य का जोर सों मुनिपद अङ्गीकार कियो; सो मुनि मुन्याचार के बोध के अर्थ मुन्याचार को शास्त्र यथाविधि सों राखैं। बहुरि मुन्याचार को बोध होय गया पाछे न राखै। बहुत शास्त्र राखै नाहीं, ऐसें ए तीन उपकरण राखै।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

उपकरणों को देखि (पोंछ) धरना, देखि पोंछ उठावना; सो **आदान निक्षेपण समिति** कहिये ।

बहुरि शरीर के मल-मूत्रादिक जमीन देखि, शोधि, क्षेपना; सो **प्रतिष्ठापना समिति** कहिये ।

अब पंच इन्द्रियनि का निरोध कहिये –

जहां अष्ट विषय स्पर्शन इंन्द्रियनि के – शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष, कोमल, कठोर, हलको, भारचो । पंच विषय रसना इंन्द्रियनि के – मिष्ट, कटुक, आम्ल, तिक्त, कषायला। बहुरि दोय विषय नासिका इंन्द्रियन के – सुगन्ध, दुर्गन्ध । बहुरि पंच विषय नेत्रेन्द्रियन के – शुक्ल, कृष्ण, आरक्त, हरित, पीत । बहुरि सप्त विषय श्रोत्रेन्द्रियन के – मध्यम, रिषभ, गंधार, पंचम, धैवत, निषाद, खरज । इन पंच इंन्द्रियनि के सत्ताईस विषय, तिन विषैं राग-द्वेष न करना; सो पंच इंन्द्रियन का निरोध कहिये ।

बहुरि षट आवश्यक कहिये हैं —

षटावश्यक दिन प्रति अवश्य करना । **समता** कहिये बुद्धिपूर्वक समभाव करना । सर्व पदार्थन कों राग-द्वेष रहित जानना । बहुरि **वंदना** कहिये एक तीर्थ-कर कों नमस्कारादि वा स्तवन करना । बहुरि **स्तुति** कहिये चौबीस तीर्थकरों का स्तवन करना । **प्रतिक्रमण** कहिये आहार-विहारादि विषैं प्रमाद करि कोई दोष लागा होय; सो मेरा मिथ्या हूजो, सो प्रतिक्रमण कहिये । आहार-विहारादि विषैं दिन प्रति कोई वस्तु कोई प्रवृत्ति का नियम रूप वा यम रूप त्याग करै; सो **प्रत्याख्यान** कहिये । दिन प्रति एक बार शरीर का ममत्व छोड़ि; निस्पृह होय तिष्ठना, सो **कायोत्सर्ग** कहिये ।

अब मुनि के शेष सात मूलगुण कहिये हैं –

भूमिशयन कहिये रात्रि के पिछले प्रहर प्रासुक पृथ्वी विषैं अल्पनिद्रा सहित सोवैं । जंतु रहित पृथ्वी को देखि पिच्छिका सों पूंछि, शयन करै । पिच्छिका सों जीव ही कों तो टालै अर जो कदाचित् कंकर-कंटकादि को टारे, सो पिच्छिका परिग्रह के भाव कों प्राप्त होय; तब मूलगुण का छेद होय, मुनिपद का अभाव होय ।

बहुरि कदाकाल भी अंतर-बाह्य करि शुद्ध, असे महामुनि ते स्नान न करैं । जो कदापि विष्टादिक शरीर विषैं आय पड़ैं तो आप तो हस्त थकी दूर नाहीं करैं;

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

जावत शरीर विष्टालिप्त रहै, तावत् सर्व क्रिया रहित होय ध्यानाध्ययन कर रहित तिष्ठै। अर जो अन्य कोई मुनि-गृहस्थादिक शरीर तैं विष्टादिक दूर करै; तब कमंडल के प्रासुक जल तैं दंडस्नान करै। दंडस्नान कहिये खड़ा होय मस्तक ऊपर जल क्षेपै, सो जल शरीर चरन परसि पृथिवी तल विषैं प्राप्त होय। वा चांडालादिक का स्पर्श होय, तहां दंडस्नान करै, और प्रकार स्नान करने का यम रूप त्याग करै। कदाचित् स्नान करतैं वा पाद प्रक्षालन करतैं, जल की शीतलता थकी रागादिक जोड़ै, तो कमंडल परिग्रह के भाव कूं प्राप्त होय। तब मूलगुणनि का अभाव भये मुनिपद जाता रहै। बहुरि जावत् विष्टादि करि शरीर लिप्त रहै, तावत ग्लानि (जुगुप्सा) कषायभाव को न प्राप्त होय। वस्तु का स्वरूप विचारे, ऐसा **मज्जन त्याग मूलगुण** का ग्रहण करै।

बहुरि सदाकाल नग्न रहै। दशों दिशा सो ही हैं अम्बर जिनकैं, ऐसे दिगम्बर महामुनी। तजी है सर्वप्रकार लौकिक लज्जा जिनने, बालकवत् नग्न मुद्रा कों धरैं। ऐसा **नग्न स्वरूप मूलगुण** का ग्रहण करै।

बहुरि केश लुंचे – हस्त-अंगुली करि ग्रहण में आवने योग्य केश होय, तब ही निःशंक होय अपने हस्त करि केशनि कों उखाड़ि डारै। रंचमात्र केश के उपाड़ने विषैं वेदना करि व्याप्त न होय है। उत्कृष्ट दोय मास विषैं, मध्यम तीन मास विषैं, जघन्य चार मास विषैं केशलोचन करै, सो **केशलोचन मूलगुण** कहिये।

बहुरि दिन प्रति एक बार लघु भोजन उद्दंड वृत्ति रहित श्रावक के घर जाय, अजांची सर्वदोष अंतराय रहित नीरस करै, सो **एकभुक्त मूलगुण** कहिये।

बहुरि पाणिपात्र करि खड़ा आहार ले, सो पाणिपात्र कहिये। अपने दोनों हाथ की अंगुली जोड़करि पात्र करै; ता विषैं गृहस्थ भक्तिकरि ग्रास धरै, सो ग्रास मुख थी ग्रहण करैं। ऐसे ही जल ग्रहण करि जल थकी अंतर बाह्य मुख और हस्त शुद्ध करि आहार की पूर्णता करै, सो **खड़ा आहार ग्रहण मूलगुण** कहिये।

बहुरि करयाहै जावज्जीवन दंतधोवन का त्याग जानै, अंगुली थकी वा दातुन थकी कोई भी प्रकार दांतनि की पंक्ति को धोवै नाहीं। अर रंचमात्र भी ग्लानि को नाहीं धरै है; ऐसा **दंत धोवन परिहार मूलगुण** का ग्रहण करै है।

इस प्रकार कहे जे महाव्रत पंच, पंच समिति, पंच इंन्द्रियनि का निरोध, षट् आवश्यक, अर सप्त भूमि-शयनादिक, ऐसै अट्ठाईस मूलगुण का जावज्जीवन प्रतिज्ञा सहित ग्रहण करै है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ताही समय गुरु की आज्ञापूर्वक केशन का लोंच करै है। इत्यादि मुनियोग्य क्रिया का ग्रहण करि दीक्षा के लाभ योग्य समस्त क्रिया की पूर्णता करि पद्मासन वा कायोत्सर्ग आसन धरि तिष्ठै। ताहि समय अप्रमत्त है नाम जाका, अैसा सप्तम गुणस्थान को प्राप्त होय है। अर ताहि समय सूं लगाय अंतर्मुहूर्त पर्यंत समय-समय अनन्तगुणी विशुद्धता है। अर असंख्यात गुणी कर्मनि की निर्जरा होय है। ता पीछे षट्स्थान पतित हानि वृद्धि लिए समय-समय परिणामों की विशुद्धता है। अर तिन्हीं के अनुसार समय-समय चतुःस्थान पतित हानि वृद्धि नैं लियां गुणश्रेणी कर्मनि की निर्जरा होय है। जातैं अन्तर्मुहूर्त पीछे अैसे ही वृद्धिरूप परिणाम रहते नाहीं।

बहुरि ता समय देखने वाले हैं (वृद्धिरूप परिणाम जहां) जे स्वजन, पर-जन मनुष्य हैं, ते नाना अवस्था कों प्राप्त होय हैं। जे स्वजन सम्यग्ज्ञानी धर्मात्मा हैं, ते तो अैसा विचारैं हैं – जो इनका बडा भाग्य है, जो सर्व कल्याणकारिणी यों जिनेश्वरी दीक्षा हम सारिखे कायरजन कूं अलभ्य होय है। अर तिनकी नाना भांति स्तुति करैं हैं अर आपकूं धिक्कार मानैं है। हमारा अैसा भाग्य कब होयगा, जो हम भी इस दशा को प्राप्त होयंगे। अर हमार भी बडा भाग्य है, जो हमारे कुल विषैं मुनिपद के धारक पुरुष भये।

अर जे स्वजन मोही जीव हैं, ते मोह करि व्याप्त भये, अश्रुपात करि भीज गया है सर्व अंग जिनका, अर व्याकुल भया है चित्त जिनका, अर कंपायमान है शरीर जिनका, अर बारंबार मुनि प्रति दृष्टि धरता संता अत्यन्त मोह को प्राप्त होय है।

बहुरि केई परजन आश्चर्य कों प्राप्त भये हैं। केई करुणा को प्राप्त भये हैं। केई ज्ञानभाव को प्राप्त भये हैं। केई शोकभाव को प्राप्त होय हैं। इत्यादिक नानावस्था कूं प्राप्त होते संते अपने घर दिशा गमन करैं हैं।

बारह प्रकार के तप

अब छह प्रकार बाह्य तप कहिये हैं –

अब वे महामुनि मूलगुणनि कों पालते संते उत्तर गुणनि कों प्राप्त होय हैं। तहां द्वादशप्रकार तप को धारैं हैं। कभी तो अनशन तप को धारैं हैं। अनशन कहिये कभी एक उपवास करैं हैं अर कभी दोय, तीन, चार, पांच आदि एक पक्ष, एक मास, दोय मास, चतुर्मास, षट् मास, एक वर्ष पर्यन्त तो आहार त्याग की प्रतिज्ञा करैं हैं।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि दूसरा भेद ऊनोदरी कहिये हैं। ऊनोदरी कहिये ऊन आहर लैं हैं। कभी एक ग्रास, कभी दोय ग्रास, आदि अष्टम अंश, चतुर्थ अंश, अर्धभाग पर्यन्त करैं हैं।

बहुरि तीजा तप व्रतपरिसंख्यान करैं हैं। तहां नाना प्रकार प्रवृत्ति की संख्या धारी आहार कों उतरैं हैं – जो आज हमारै तांई असे द्रव्य, असे क्षेत्र विषैं वा इतने क्षेत्र पर्यन्त वा इतने काल पर्यन्त वा असा पुरुष वा असी स्त्री असे भेष कों धरचां असे संबंध सहित जो पड़गाहै, तो आहार मोकला है; अन्य प्रकार नाहीं।

बहुरि चौथा रसपरित्यागनामा तप कहैं हैं – नानाप्रकार रस विषैं आज हमारे तांई ए रस लेने अर ए रस न लैना, वा सम्पूर्ण रस का त्याग करै, सो रस-परित्याग तप कहिये।

बहुरि पंचम तप विविक्तशय्यासन – तहां संघ कों छोड़ि एकांत स्थानक जाइ शय्यासन करना, सो विविक्तशय्यासन कहिये।

बहुरि कायक्लेश छठा तप करै – तहां अनेक प्रकार कायक्लेश करै, नाना-प्रकार विषम आसन धारै, ग्रीष्म ऋतु विषैं धूप करि तप्तायमान जो पर्वत का शिखर, तापर आतापन योग धारि तिष्ठै। वा वर्षाकाल विषैं वृक्षनि के तलैं, जहां अनेक प्रकार डांस-मच्छरादिकनि का उपद्रव प्रवर्तै, सासता वृक्ष तैं जल स्रवै, तहाँ जाय ध्यानाध्ययन करैं हैं। बहुरि कभी शीतकाल समय नदी-सरोवर के तीर जाय तिष्ठैं हैं। महाशीत करि जम गया है जल जहां, अर दाह करि भस्म भये हैं बड़े-बड़े वृक्ष जहां, ऐसी शीत का परीषह युक्त ध्यानारूढ़ होय तिष्ठैं हैं। बहुरि अनेक प्रकार विषम तप करैं हैं। अनेक प्रकार चला आया परीषह का ग्रहण करैं हैं, इत्यादि कायक्लेश करैं हैं, सो कायक्लेश तप कहिये।

इस प्रकार भावदीपिका विषैं असैं छह प्रकार बाह्यतप कहे। तिनके उत्तर भेद अनेक प्रकार हैं, तिन विषैं अपनी शक्ति प्रमाण शरीर शोषण के निमित्त द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की योग्यता देखि ग्रहण करै।

अब छह प्रकार अभ्यंतर तप कहिए हैं।

तहां प्रथम प्रायश्चित नामा तप कहिये हैं। अपने चारित्र कों जो दोष लागता होय, ताकों दोष रहित शुद्ध करै; सो प्रायश्चित कहिये। सो प्रायश्चित नव प्रकार हैं।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

१. गुरु के निकट जाय अपनी निंदा करता संता अपने चारित्र को अपने प्रमाद करि लागा जो दोष, ताका प्रकाश करना, सो आलोचना कहिये ।

२. बहुरि अपनी आप ही निंदा करनी, दोष थकी भयभीत होना; अपनी प्रमाद दशा कौं निंदना, प्रमाद करि यह दोष मोकूं लागा है, सो मिथ्या हूजो – इत्यादि सो प्रतिक्रमण कहिये ।

३. बहुरि आलोचना, प्रतिक्रमण दोऊ करना, सो उभय कहिये ।

४. बहुरि प्रमाद दशा कों उत्पन्न होतां अपने चारित्र को दोषयुक्त होता देखि प्रमाद दशा कों मेटि ज्ञान सहित होय इसका विचार करै, तहां दोष का अभाव करना; सो विवेक कहिये ।

५. बहुरि शरीरादि पर द्रव्य रूप बाह्य-अभ्यंतर परिग्रह सों निस्पृह होइ दोय प्रकार निराकरण करना, कायोत्सर्ग धरि तिष्ठना; सो व्युत्सर्ग कहिये ।

६. बहुरि नानाप्रकार तप करि दोष का निराकरण करना; सो तप कहिये ।

७. बहुरि दीक्षा का श्रीगुरु की आज्ञा पूर्वक छेद करि अवशेष कूं राख दोष का निराकरण करना, श्रीगुरु आज्ञा करैं "जो तुम्हारे ताईं इस दोष के लागते करि तिहारी दीक्षा इतने काल की तो अभाव कों प्राप्त भई अर इतने काल की अवशेष रही ।" ताही दिन सों आपकों अवशेष रह्या काल, तितने ही काल का दीक्षित मानै । इस काल से पहले का दीक्षित मुनि होय, ते मुनि की दीक्षा छेदन भई थी, ता पहली तौं इनकौं पहले नमस्कार करते थे । अब उनकौं पहले ए नमोस्तु करैं; सो छेद कहिये ।

८. बहुरि कोई दोष असा लागा होय, ताका श्रीगुरु असा दंड दें, "जो थे इतने काल ताईं संघ तैं बाहिर तिष्ठौ । औंधि पिच्छिका हस्त विषैं धारौं, तुम्हारे ताईं नमोऽस्तु कोई न करैगा । तुम सबको नमोऽस्तु करो । अट्ठाईस मूलगुण भली-भांति पालौ । नानाप्रकार तपश्चरणादि उत्तर गुण विषैं आरूढ़ होय सावधानी तैं प्रवर्तो । तब तुम्हारा दोष निर्वृत्त होयगा " सो श्री गुरु की आज्ञा प्रमाण करि दोष का निराकरण करना, सो परिहार कहिये ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

९. बहुरि कोई दोष ऐसा लागा होय, ताका गुरु ऐसा दंड दें कि जो "इस काल पर्यंत तो तिहारी दीक्षा का अभाव भया। अब नवीन दीक्षा कों ग्रहण करो," ऐसा श्री गुरु की आज्ञा प्रमाण अतीत दीक्षा का अभाव मानि फेर नवीन दीक्षा कों ग्रहण करि दोष का निराकरण करना; सो उपस्थापन कहिये।

अब दूजा विनय तप कहिये हैं :– विनय तप पांच प्रकार हैं – १. भलीभांति तत्त्वार्थ श्रद्धान विषैं दृढ़ रहना। चल, मल, अगाढ़ादि दोष न लगावना; सो दर्शन विनय कहिये। २. बहुरि संशय, विपर्यय, अनध्यवसाय रहित पदार्थनि कों शास्त्रोक्त यथार्थ जानना; सो ज्ञान विनय कहिये। ३. बहुरि निर्मल दोष रहित चारित्र का पालना, सो चारित्र विनय कहिये। ४. बहुरि मोक्ष के अर्थ शास्त्रोक्त तप का यथाविधि मन, वचन, काय, विषैं निश्चल होय पालना; सो तप विनय कहिये। ५. बहुरि दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप के धारक ऐसे जे पंच परमेष्ठी वा शास्त्र वा श्रावक, श्राविका, अर्जिका; तिनकी भक्ति करनी, वंदना करनी, स्तवन, नमस्कारादि करना; सो उपचार विनय कहिये।

अब तीजा वैय्यावृत्य नामा तप कहिये हैं :– तहां वैय्यावृत्य दश प्रकार हैं – १. दीक्षा-शिक्षा के दायक, ते तौ आचार्य कहिये। २. शास्त्र के पढ़ावनहारे, ते उपाध्याय कहिये। ३. बहुरि उग्रोग्र तप के करनहारे, ते तपस्वी कहिये। ४. अपने से दीक्षित शिष्य मुनि, ते शैक्ष्य कहिये। ५. बहुरि रोग करि ग्रसित ते ग्लान कहिये। ६. अर अन्य अनेक मुनिन का समूह, ते गण कहिये। ७. बहुरि अपने गुरु के वा अपने गुरुनि के गुरु के शिष्य, ते कुल कहिये। ८. बहुरि अपने संघ विषैं विचरते मुनि के समूह को संघ कहिये, संघाहड़ा कहिये। ९. बहुरि घने काल के दीक्षित ते साधु कहिये। १०. बहुरि ऋद्धि-ज्ञानादियुक्त, ते मनोज्ञ कहिये। ऐसें दश प्रकार मुनि, तिनका उपकार करना। तिन विषैं आय प्राप्त भये, जे नानाप्रकार उपसर्ग-परीषह; तिनका मन, वचन, काय, करि, कृत, कारित, अनुमोदना करि दूर करना, अनेक प्रकार चाकरी करनी; सो वैय्यावृत तप कहिये।

बहुरि जहां श्रवण, धारण, विचारण, आम्नाय, अनुप्रेक्षा – इन पंच अंगनि सहित शास्त्राभ्यास करना; **सो स्वाध्याय तप कहिये।**

अर नानाप्रकार आसनादि धार काय सों निर्ममत्व होना; सो **व्युत्सर्ग तप** कहिये।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अब छट्ठा ध्यान नामा तप कहिये हैं – तहाँ ध्यान चार प्रकार है – आर्त-ध्यान, रौद्रध्यान, धर्म्यध्यान, शुक्लध्यान। एकाग्रचिंता निरोध, सो ध्यान है। एक पदार्थ या उसकी पर्याय – तहां तिसकूं अग्रेसर करि तिस विषैं चित्त का रोकना; सो ध्यान कहिये।

अब प्रथम ही आर्तध्यान कहिये; ताके चार भेद हैं – तहां इष्ट का वियोग होतैं जो चिंता का होना; सो इष्टवियोग आर्तध्यान कहिये। २, बहुरि अनिष्ट के संयोग विषैं जो चिंता का होना; सो अनिष्ट संयोग आर्तध्यान कहिये। ३. बहुरि जो शरीर विषैं रोग होतैं चिंता होय, सो पीड़ा चिंतवन आर्तध्यान कहिये। ४. बहुरि इस भव तथा पर भव संबंधी जो भोगों की चाह प्रवर्तैं; सो निदानबंध आर्तध्यान कहिये।

अब दूसरा रौद्रध्यान चार प्रकार कहिये हैं – १. जहाँ जीवनि की हिंसा करि आनन्द मानना, सो हिंसानन्द रौद्रध्यान कहिये। २. जहां झूठ बोलतां वचन की सिद्धि भये आनंद मानना; सो मृषानंद रौद्रध्यान कहिये। ३. बहुरि पराया धन चौरी आनंद मानना; सो स्तेयानंद रौद्रध्यान कहिये। ४. परिग्रह का संग्रह होता आनन्द मानना; सो परिग्रहानंद रौद्रध्यान कहिये।

बहुरि धर्म्यध्यान चार प्रकार है - १. जहां केवली की आज्ञा अनुसार श्रद्धान, ज्ञान रूप प्रवृत्ति करनी वा पुनः पुनः जिनेन्द्रदेव की आज्ञा कूं विचारना। तिनकी आज्ञा उलंघि कोई भी कार्य न करना; सो आज्ञाविचय धर्म्यध्यान कहिये।

२. बहुरि जहां पुनः पुनः कर्मनि के नाश का उपाय विचारना; सो अपाय-विचय धर्म्यध्यान कहिये।

३. बहुरि जहां जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट अनुभाग कों धरैं, उदय कों प्राप्त भये शुभाशुभ कर्म, तिनके अनुसार उत्पन्न भया सुख और दुःख, ता विषैं शिथिल न होना; कर्मों का विपाक विचारना, बाह्य पदार्थनि सो राग-द्वेष न करना, सो विपाकविचय धर्म्यध्यान कहिये।

४. बहुरि जहां जिन-आज्ञानुसार तीन लोक का स्वरूप विचारना, सो संस्थानविचय धर्म्यध्यान कहिये।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अब चार प्रकार शुक्ल ध्यान कहिये हैं – जहां पृथक कहिये भिन्न ध्याता, ध्यान, ध्येय, धियति (ध्याति) भाव कों धरैं वितर्क कहिये भाव श्रुतज्ञान के बल करि द्रव्य, गुण, पर्याय कों वीचार कहिये पलटन क्रिया सहित, राग-द्वेष रहित ध्याव, मनयोग, वचनयोग, काययोग, तीन योगनि सौं ध्यावै, मनयोग सों ध्यावैं, फिर वचन-योग सों ध्यावै, ताकूं छोड़ि काययोग सों ध्यावै, ऐसें योग सों योगान्तर, शब्द सों शब्दान्तर, अर्थ सों अर्थान्तिर, गुण सों गुणान्तर, पर्याय सों पर्यायान्तर, ऐसें पलटन-क्रिया सहित ध्यावै, सो पृथक्त्ववितर्कवीचार नामा शुक्लध्यान कहिये ।

बहुरि जहां एकत्व कहिये ध्याता, ध्यान, ध्येय, धियति (ध्याति) के द्विधा भाव कों दूर करि, तिन विषैं भेदभाव कों छोंड़ि अभेदरूप वितर्क कहिये भावश्रुत-ज्ञान के बल करि अवीचार कहिये पलटन क्रिया रहित एक द्रव्य, गुण, पर्यायनि विषें जाकों ध्यावै है, ताहीं को ध्यावै है, ताको छोड़ि और कों नाहीं ध्यावै और जा जोग सों ध्यावै ताही एक योग सों ध्यावै-ऐसें राग-द्वेष रहित पदार्थनि कों ध्यावै, सो एकत्व वितर्कअवीचार नामा शुक्लध्यान कहिये ।

बहुरि जहां केवली भगवान आयु के अंतर्मुहूर्त पहली मन, वचन, काय के योगनि कूं सूक्ष्म करैं हैं । तहां योगनि की प्रवृत्ति महासूक्ष्म होय, सो केवली के एक काययोग तैं ही होय, सो सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति नामा शुक्लध्यान है ।

बहुरि जहां योगनि की सर्व क्रिया का अभाव होय ऐसा अयोग केवली गुण-स्थान, तहां योग रहित ध्यान होय है, सो व्युपरतक्रियानिवृति नामा शुक्लध्यान कहिये ।

ऐसे ए चार ध्यान के सोलह भेद हैं ।

सो ए ध्यान मिथ्यात्व अर सासादन दोय गुणस्थान विषै तो चार आर्त-ध्यान, चार रौद्रध्यान ऐसें आठ ध्यान पाइये । बहुरि तीजे मिश्र गुणस्थान विषैं आठ तो आर्त-रौद्र अर आज्ञाविचय धर्म्मध्यान एसें नौ ध्यान पाइये । बहुरि असयत चतुर्थ गुणस्थान विषैं आठ तो आर्त-रौद्र अर अपायविचय आज्ञाविचय, दोय धर्म्यध्यान ऐसें दश ध्यान पाइये । बहुरि देशसंयम पंचम गुणस्थान विषैं आठ तौं आर्त-रौद्र अर आज्ञाविचय, अपायविचय, संस्थानविचय ऐसे तीन धर्म्यध्यान ऐसें एकादश ध्यान पाइये । बहुरि प्रमत्त नामा षष्ठम गुणस्थान विषैं इष्टवियोग, अनिष्टसंयोग, पीड़ा चिंतवन तीन तो आर्तध्यान अर चार धर्म्यध्यान ऐसें सप्त ध्यान पाइए । बहुरि

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अप्रमत्त सप्तम गुणस्थान विषैं चार धर्म्यध्यान ही पाइए। बहुरि अष्टम अपूर्वकरण गुणस्थान सौं लेइ क्षीणकषाय बारहवें गुणस्थान के असंख्यातभाग विषैं एकभाग छोड़ि बहुभाग पर्यन्त उपशमश्रेणी वा क्षपक श्रेणीविषैं पृथक्त्ववितर्कवीचार नामा शुक्लध्यान के प्रथम पायो पाइये। बहुरि अवशेष क्षीणकषाय गुणस्थान का असंख्यातवां एकभाग विषैं एकत्ववितर्कअवीचार नामा शुक्लध्यान को दूसरो पायो पाईए। बहुरि सयोग-केवली तेरहवां गुणस्थान विषैं सूक्ष्मक्रिया अप्रतिपाति तीसरा पाया अयोगी चौदहवां गुणस्थान विषैं व्युपरतक्रिया निवृत्ति नामा शुक्लध्यान का चौथा पाया पाइए। ऐसें ए बारह प्रकार बाह्य-अभ्यंतर तप कहे। तिन विषैं इस क्षायोपशमिक चारित्री कैं और एकादश तप कौं सर्व ही संभवै। अर ध्यान नामा तप विषैं चार रौद्रध्यान, अर एक निदानबंध नामा ए पांच ध्यान तो संभवै नाहीं। अर तीन आर्तध्यान अर चार धर्म्य-ध्यान असे सप्तध्यान संभवे हैं। अर गुणस्थान प्रमत्त-अप्रमत्त याके दोय ही हैं। सो इन दोय गुणस्थान का काल एक-एक का जघन्य एकसमय, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है। सो ए अप्रमत्त का प्रमत्त विषैं, अर प्रमत्त का अप्रमत्त विषैं गमनागमन होय है। तहां अप्रमत्त गुणस्थान विषैं आरूढ़ होय है। तहां तो चार धर्म्यध्यान हैं अर प्रमत्त विषैं उतरै है, तहां चार धर्म्यध्यान अर निदानबंध बिना तीन आर्तध्यान ऐसें सप्त-ध्यान पाईए हैं।

बहुरि तेरह प्रकार चारित्र रूप प्रवृत्ति करैं हैं। पंचमहाव्रत, पंच समिति, तीनगुप्ति – मनोगुप्ति, वचनगुप्ति, कायगुप्ति।

बाईस प्रकार परीषहजय

बहुरि बाईस प्रकार परीषहों को सहे है; सो ही कहिये हैं – १. जहां एक उपवास, दोय उपवास वा तीन उपवास वा चार उपवास, पांच उपवास आदि पक्ष का, महीना का, दोय मास का, चार मास का, छह मास का करि अर पारणा के निमित्त नगर-ग्रामादिक विषैं गये, तहां भोजन का लाभ भया नाहीं, अंतराय भया, तब बधी (बढ़ी) जो क्षुधा की वेदना; ताकों समभावां सों सहना, लाभ-अलाभ विषैं हरष-विषाद नाहीं करै, भूख की वेदना सहिवो, सो क्षुधापरीषह विजयी कहिये।

प्यास की बाधा समभाव सों सहिवो, सो तिरसा [तृषा] परीषह विजयी कहिये।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

✱ बहुरि जहां ग्रीष्मकाल विषैं जेठ के महीने में प्रकृति के विरुद्ध तो भोजन का लाभ भया अर जल का अंतराय भया। बहुरि मध्याह्न समय पर्वत के शिखर पर जाय सूर्य के सन्मुख आतापन योग धारि खड़ा रहना, आठो दिशा तैं आय लागती जो ताती बाय (गरम हवा) अर पादतले तप्तायमान जो पहाड़ की शिला अर मस्तक परि आया जो पाषिन कहिए सूर्य, ताकी तीव्र आताप, इत्यादिकनि करि बधी जो तृषा की वेदना, ताकरि नेत्रनि की पुतली फिरने लग जाय ताहि।

बहुरि तीजा शीत परिषह, जहाँ शीतकाल विषैं पौस के महीने में शीत की वेदना करि दरिद्रीजन के दांतनि की पंक्ति ऐसी बाजे, जैसे प्रचंड पवन करि भिड़े जे बांस तिनकी नाईं। बहुरि जा समय प्रचंड दावा (तुषार) करि खड़े-खड़े बड़े-बड़े वृक्ष झुलसि गये। अर नदी-सरोवर का जल जम गया है, ऐसा शीतकाल विषैं नाहीं है चारप्रकार वस्त्र को अंगिकार जिनके – सूत के वस्त्र, रोम के वस्त्र, रेशम के वस्त्र त्वचा के वस्त्र। बहुरि वृक्षनि वकल (छाल), चाम, अग्निसेवन इत्यादिक रहित वीतरागी मुनि नदी के तटनि पैं, सरोवरनि के तीरनि पैं समुद्र के किनारे, रात्री विषैं जाय कायोत्सर्ग वा पद्मासनादि आसन करि प्रचंड जो शीत की वेदना, ताहि समभाव सों सहें हैं, सो शीत परीषह विजयी कहिए। शीत की वेदना सहिवो सो शीत परीषह कहिये।

बहुरि उष्णकाल विषैं पर्वत के शिखर पर ध्यानारूढ़ वीतरागी मुनी, आती जो ताती झाल के समान पर्वतनि के कंकरनि की किरकिरी रज, जो शरीर विषैं खड़ग की धारसमान प्रवेश करे। ताकरि सर्वशरीर चिरमराय उठाय। अर झरते शरीर तैं पसेव तिनकर अति एकरूप भयी, ताकरि शरीर विषैं ऐसे तीव्र खाज चालै, तहां आप शरीर कूं खुजावे नाहीं, ऐसी उष्ण काल की वेदना। तांही दिगंबर साधू समभाव सों सहें हैं, सो उष्ण परिषह विजयी कहिए। अर अग्नि धूप की वेदना सहिवो, सो उष्ण परीषह कहिये।✱

बहुरि वर्षाकाल विषैं श्रावण के महीने की अत्यन्त डरावनी रात्री, जामें चारूं तरफ तो बिजली के चमके होय रहे हैं। अर मूसलाधार जल बरसै। बाजती जो झंझावायु, सो आरि के पारि निकसि जाय। तो वहांभी ध्यानी वीतरागी, वृक्षमूल विषैं ध्यान रूढ़ तिष्ठै हैं। तहां डांस, मांछर, सर्प, शृगाल, गिंडोला आदि जीवनि

✱ यह अंश श्री पार्श्वनाथ दि० जैन चैत्यालय, बापूनगर; जयपुर की हस्तलिखित प्रति से लिया गया है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

करि किया जो उपसर्ग, ताहि समभाव सूं सहना, चलाचल शरीर-मन में न होना, सो दंशमशक परीषह विजयी कहिये।

अर अंत:करण जो मन, ताविषैं तो अत्यंत विषय की चाह और बाहर लोक-लाज के भय तैं दीन, संसारी, कायर जीव नग्न मुद्रा कूं धार नाहीं सके हैं। ऐसी जो नग्नमुद्रा, ताका धारक वीतरागी मुनि बालक समान विकार रहित लोकलाज का भय रहित प्रवर्ते, सो नग्नपरीषह विजयी कहिए। बहुरि नग्नमुद्रा विषें कोई प्रकार भी लज्जा कों न प्राप्त होना, सो नग्न परीषह कहिये। ❋

७. बहुरि अनेक प्रकार अनिष्ट का संयोग जो कांटादिक लगना वा किरकि-रादि रेणु, लोचन विषें आय प्राप्त होय, इत्यादिक विषें जो अरतिभाव को न प्राप्त होय, सो अरति परीषह विजयी कहिये।

८. बहुरि अनेक प्रकार तरुणी रूप की खानि स्त्री कामचेष्टा करै, तहां विकारभाव कों न प्राप्त होना, सो स्त्री परीषह विजयी कहिये।

९. बहुरि गमन करतां जे कंटक, कंकर आदि चुभै, वा महा धूप-शीतादि विषैं धरती अत्यन्त शीत, उष्णता कों प्राप्त भई, ता विषैं पांव धरतां खेद नाहीं मानै,सो चर्या परीषह विजयी कहिये।

१०. बहुरि आसन मांड़ि बैठे हैं, तहां बैठक के तलैं अनेक उपद्रव का कारण कंटक-कंकरादि आय जाय हैं, तिनकी अत्यन्त वेदना होतैं भी आसन कों चलाचल नाहीं करैं हैं, सो निषद्या परीषह विजयी कहिये।

११. बहुरि जब रात्रि के पिछले पहर अपने शरीर कों संकोचि, एक करवट अल्प निद्रा सहित सोवैं हैं, तहां शरीर के तलैं आय गये जे कंकर-कंटकादिक, ताकी घोर वेदना होतां भी शरीर कों चलाचल नाहीं करैं हैं, सो शय्या परीषह जय कहिये।

१२. बहुरि केई दुष्ट जीव अनेक प्रकार गाली आदि करकस (कर्कश) वचन, मर्मच्छेद वचन कहैं हैं, तहां क्रोधभाव को प्राप्त न होना, क्षमा न छोड़नी, सो आक्रोश परीषह जय कहिये।

❋ यह अंश श्री पार्श्वनाथ दि० जैन चैत्यालय, बापूनगर; जयपुर की हस्तलिखित प्रति से लिया गया है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

१३. बहुरि केई दुष्ट जीव आय मारैं हैं, बांधैं हैं, प्राण नाश करैं हैं, तहां बहुत वेदना होतां संतां क्रोध कों रंचमात्र भी नाहीं विस्तारैं हैं, सो वध परीषह जय कहिये।

१४. बहुरि अनेक प्रकार शीत-उष्णादिक की वा क्षुधा-तृषादिक की वा रोगादिक की वेदना होते संतै अजाची रहैं हैं, कोई प्रकार कोई ही सों जाचना नाहीं करैं हैं, सो याचना परीषह जय कहिये।

१५. बहुरि जहां अनेक उपवासों के पारणे आहार को गये हैं, अर जहां आहार का अलाभ भया, तहां रंचमात्र भी खेद कों नाहीं प्राप्त होय हैं, सो अलाभ परीषह जय कहिये।

१६. बहुरि शरीर विषैं नानाप्रकार दुष्ट रोग होते संतै कंपायमान न होय हैं, वेदना कों जीतैं हैं, सा रोग परीषह जय कहिये।

१७. बहुरि चर्या, शय्या, आसन विषैं अनेकप्रकार तीक्ष्ण कांटे शरीर विषैं चुभैं हैं। तिनकी वेदना कों जीतैं हैं, सो तृणस्पर्श परीषह जय कहिये।

१८. बहुरि जावज्जीव है स्नान का त्याग जिनकैं, अर शरीर विषैं पसेव रज के संबंध करि बहुत मैल जम गया है, ताकी अत्यंत वेदना होय है, सो नाहीं गिनैं हैं, सो मल परीषह जय कहिये।

१९. बहुरि मुनि महाराज कों कोई धर्मात्मा जीव तो सत्कारादि नमस्कारादि करैं हैं, अर कोई जीव अपमान करैं हैं, सो तिन दोनों विषैं राग-द्वेषादि नाहीं करैं हैं, समभाव व्रत कौं नाहीं छोड़ैं हैं; सो सत्कार-पुरस्कारादि परीषह जय कहिये।

२०. बहुरि अनेक प्रकार शास्त्राभ्यास करैं हैं, अर श्रुतज्ञानावरण कर्म के उदय तैं शास्त्र स्फुरायमान होय नाहीं, तहां कर्म का विपाक विचारैं, खेद को नाहीं प्राप्त होय हैं, सो प्रज्ञा परीषह जय कहिये।

२१. बहुरि घनाकाल तप करते होय गये अर अवधिज्ञानादि उत्पन्न नाहीं भये, तहां मुनि खेद कों प्राप्त न होय हैं, सो अज्ञान परीषह जय कहिये। बहुरि बहुत काल मुनिपद विषैं प्रवर्तते भये, अर बहुत प्रकार तपश्चरणादि करे, अर कोई रिद्धि-चमत्कारादि प्रगट न भया; तौ भी तिनके परिणामनि विषैं कोई भी प्रकार भ्रांति नाहीं होय, सो अदर्शन परीषह जय कहिये। ऐसें बाईस परीषहजय कही।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तिन विषैं ज्ञानावरण कर्म के उदय तें तो प्रज्ञा परीषह अर अज्ञान ये दोय परीषह उत्पन्न होय हैं। तहां दर्शनमोह कर्म के उदय तें अदर्शन परीषह होय है। अर अन्तराय कर्म के उदय तें एक अलाभ परीषह होय है। बहुरि चारित्रमोह के उदय तें नग्न, अरति, स्त्री, निषद्या, आक्रोश, याचना सत्कार-पुरस्कार ये सप्त परीषह होय हैं। बहुरि अवशेष एकादश परीषह वेदनीय कर्म के उदय तैं जाननी — क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, दंशमशक, चर्या, शय्या, वध, रोग, तृणस्पर्श, मल।

इन बाईस परीषह विषैं अनिवृत्तिकरण नवें गुणस्थान पर्यन्त तो सर्व परीषह पाईये। अर सूक्ष्मसाम्पराय दशम गुणस्थान विषैं तथा उपशांत कषाय अर क्षीणकषाय इन तीन गुणस्थाननि विषैं मोहकर्म के उदय के अभाव होतें मोहकर्म सम्बंधी आठ परीषह न पाईये, चौदह ही पाइये। बहुरि ज्ञानावरण अर अंतराय का नाश होतें तीन परीषह का अभाव होय है।

तब वेदनीय संबंधी एकादश परीषह सयोग केवली, अयोगकेवली, गुणस्थान विषैं उपचार करि पाईए। तातैं जहाँ वेदनीय के सहकारी कारण मोहकर्म का अभाव है, तातें वा असातावेदनीय के द्रव्य विषैं शक्ति के अनुभाग का अभाव है, तातैं बहुरि असातावेदनीय का द्रव्य प्रदेश उदय होय खिर जाय हैं, तातें परीषह कार्यरूप होय दुःख को नाहीं प्राप्त करै है। तातें वेदनीय के उदय की अपेक्षा इस संबंधी एकादश परीषह को सद्भाव कह्यो है; परन्तु कार्यभूत नाहीं, तातें उपचार करि कही है ऐसा जानना।

बहुरि बाईस परीषह विषैं एकै काल एक जीव के होंय तो एक नैं आदि दे दोय, तीन, आदि उगणीस पर्यन्त होय हैं। यातैं शीत-उष्ण विषैं एकै काल एक ही होय। बहुरि निषद्या–चर्या–शय्या इन तीन परीषहनि विषैं एकै काल एक ही होय; दोय न होय। जो एकै काल बहुत होय तो उगणीस परीषह को सद्भाव होय।

उपसर्ग के चार प्रकार

बहुरि चार प्रकार उपसर्ग को सहैहैं– देवकृत, मनुष्यकृत, तिर्यंचकृत, अकस्मात् कहिये वज्रपात, पाषाण, काष्ठादिक तें उत्पन्न भया सौं या प्रकार परीषह, उपसर्ग को सहै। मुनि अपने चारित्र तें तो च्युत न होय है। निरवांछक मोह वासना रहित, अडिग मेरुवत् होते सतै सहै है। ता करि कर्मनि की निर्जरा करैं हैं। अब तैं

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

मुनि द्वादश प्रकार तप विषैं वा तेरा प्रकार चारित्र विषैं प्रवर्तता संता वा बाईस परीषह, उपसर्ग सहने विषैं कर्म के उदय तैं प्रमाद करि अपने सामायिक चारित्र सों परिणाम चलै तो ताके अर्थि छेदोपस्थापना संयम को निरंतर धारैं हैं, सो छेदोपस्थापन संयम को स्वरूप कहैं हैं ।

सामायिक चारित्र को धारि बहुरि प्रमाद तैं स्खलित होय सावद्यक्रिया कों प्राप्त हुवा, तिस सावद्य पर्याय कों छोड़ि अपने सामायिक चारित्र विषैं तिष्ठना, सो छेदोपस्थापना कहिये । वा सावद्य जो पाप ताकों छेदि अपने सामायिक धर्म विषैं स्थापित होना, सो छेदोपस्थापना कहिये । वा अपना सामायिक चारित्र छेद भया, ताकों बहुरि स्थापना, सो छेदोपस्थापना कहिये ।

ऐसे सामायिक-छेदोपस्थापना जो दोय संजम कों धारता संता जो अपने दश विशेषण सहित जो आत्मा के दशलक्षण धर्म, ताकों पुष्ट करैं हैं, ताकी सिद्धि करैं हैं ।

धर्म के दश लक्षण

अब धर्म के दश विशेषण कहिये लक्षण, सो कहिये हैं – उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य, ब्रह्मचर्य ।

केई दुष्ट जीव वा अज्ञानी जीव अनेकप्रकार मुख थकी कुवचन कहैं हैं, उपसर्ग करैं हैं, परीषह दें हैं, इत्यादि अनेक क्रोध के कारण होतां संतां भी रंचमात्र भी क्रोधभाव कों नाहीं प्राप्त होय हैं, अपने क्षमाभाव कों नाहीं छोड़ैं हैं, सो **उत्तम क्षमा धर्म** भाव का प्रथम लक्षण है ।

बहुरि अनेक प्रकार श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनः पर्ययज्ञान, तिनकरि मंडित हैं अर उत्पन्न भई हैं अनेक प्रकार ऋद्धि जिनकों, अर पूजैं हैं तीनलोक के जीव चरणारविंद जिनकै, तौ पण मान कषाय के वशीभूत होय मदभाव कों नाहीं प्राप्त होंय, सो **मार्दव** कहिये ।

बहुरि महा सरल स्वभाव कों धरैं हैं, छोड़ा है सर्वप्रकार कपट रूप वक्रभाव जिनने, जैसा मन विषैं विचारना तैसा ही मुख थकी कहना, तैसा ही काय थकी करना ऐसें मन, वचन, काय को एकी भाव रूप कों प्राप्त करैं, सो **आर्जव धर्म** कहिये ।

बहुरि सर्वप्रकार करि छोड़ा है असत्य वचन का बोलना जिनने, वचन बोलैं तो सर्व जीवनि के हितरूप मर्यादीक बोलैं वा मौन धरि रहैं, सो **सत्य धर्म** का **अंग है** ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि छोड़ा है इसभव परभव संबंधी सांसारिक सुख का लोभ जिननें, सो **शौच धर्म** का लक्षण है।

बहुरि वशीभूत किये हैं पांचों इंद्रिय अर मन, तिनको विषय वासना विषैं नाहीं विचरण दे हैं। अर पालें हैं मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना करि षटकाय के जीवनि की दया, सर्व जीवनि कों आप समान जानै हैं, सो **संयम** कहिये।

बहुरि करै हैं अपनी शक्तिप्रमाण द्वादश प्रकार उग्रोग्र तप अरु किया है सर्व प्रकार इच्छा का निरोध, सो **तप धर्म** कहिये।

बहुरि बुद्धिपूर्वक त्याग दिये हैं सम्यक् श्रद्धान-ज्ञान करि परद्रव्य अर परभाव जानै, अर अबुद्धिपूर्वक होय हैं कषायभाव वा बनि रह्या है शरीर का संबंध, तिनकों छोड़ने का निरंतर उपाय धरें हैं, सो **त्याग धर्म** का लक्षण है।

बहुरि तिल-तुषमात्र भी परद्रव्य विषैं ममकार भाव नाहीं धारैं हैं। एक अखंड चिन्मूर्ति आत्मा वा अपने ज्ञानादिक स्वभाव भाव, तिनही विषैं अहंकार, ममकार भाव धारैं हैं, सो **आकिंचन धर्म** कहिये।

बहुरि तज दिये हैं सर्व प्रकार स्त्री अर तज दिये हैं सर्व काम विकारभाव अर दूर भई है सर्व परद्रव्यनि सौं रमनचेष्टा जाकी, अर थिरीभूत भये हैं अपने ज्ञाता-दृष्टा स्वभावभाव विषैं, अर अपने स्वभाव ही विषैं है चर्या जिनकी, सो **ब्रह्मचर्य धर्म** है। ऐसें दश लक्षण धर्म को सदाकाल धारैं हैं।

पंचाचार

बहुरि पंचाचार कों आचरैं हैं – दर्शनाचार, ज्ञानाचार, चारित्राचार, तपाचार, वीर्याचार। इन पंचाचाररूप है आचार जिनके, ऐसे क्षायोपशमिक चारित्र के धारक मुनि, ते अनेक उत्तरगुणनि कों विस्तारैं हैं। धारें हैं अतुल पराक्रम, ता करि प्रमाद रहित, जे सप्तम गुणस्थान, ता विषैं आरूढ़ होय हैं। तहाँ पदस्थ, पिंडस्थ, रूपस्थ, रूपातीत इन चार प्रकार धर्मध्यान, तिनकों ध्यावैं हैं। तहां कर्मनि का जोर अत्यन्त आय पड़ै है, तहां तें भाव उतरैं हैं। तब षष्टम गुणस्थान जो प्रमत्त किंचित् प्रमाद सहित, ता विषैं तिष्ठैं हैं।

तहां पंच प्रकार शास्त्राध्ययन करैं हैं – वांचना कहिये द्रव्यश्रुत कों कच्ची दशा में आचार ग्रंथ कों वांचैं। बहुरि शास्त्र का अर्थ विचारैं। ता विषैं कोई संदेह

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

उपजै तो ताको निवारण के अर्थी बहुज्ञानी आचार्यादि पास जाय प्रश्न करैं, सो पृच्छना कहिये। बहुरि धारै हुए शब्द-अर्थ का बारंबार चिंतवन करैं, सो अनुप्रेक्षा कहिये। बहुरि सर्व द्रव्य अर्थ का शुद्ध घोकना करैं, सो आम्नाय कहिये। बहुरि चार अनुयोग रूप शास्त्र की भलीप्रकार सिद्धि होय, तहां धर्मोपदेश दैं। असें शास्त्र के पंच अंगनि का अध्ययन करैं।

बारह अनुप्रेक्षा

बहुरि जहां उपसर्ग-परीषह सहित कर्मनि का तीव्र उदय होय, तहां द्वादशानुप्रेक्षा का चिंतवन करैं – अनित्यानुप्रेक्षा, अशरणानुप्रेक्षा, संसारानुप्रेक्षा, एकत्वानुप्रेक्षा, अन्यत्वानुप्रेक्षा, अशुचित्वानुप्रेक्षा, आस्रवानुप्रेक्षा, संवरानुप्रेक्षा, निर्जरानुप्रेक्षा, लोकानुप्रेक्षा, बोधिदुर्लभानुप्रेक्षा, धर्मानुप्रेक्षा।

तहां असा चिंतवन करैं – यह असमानजातीय जो अपनी मनुष्यपर्याय वा स्त्री, पुत्रादिक वा हस्ती, घोटकादिक अर समानजातीय पर्याय जे धन संपदादिक, मंदिरादिक, तिनका जीव के साथ संयोग होय है, तिनका निश्चय करि वियोग होय है। सर्व ही असमानजातीय, समानजातीय पर्याय विनाशीक हैं, अनित्य हैं, असें पुनः पुनः सर्व इष्ट सामग्री कों अनित्य चिंतवना; सो अनित्यानुप्रेक्षा कहिये।

बहुरि अपनी मनुष्यपर्याय वा स्त्री, पुत्रादिक कुटुम्ब वा दासी, दास आदि अनुचर वा हस्ती, घोटकादिक वा राज्यादि विभूती, धन-संपदादि संयोग, जहां कर्म के उदय तैं अन्यथा परणमै वा वियोग होय; तहां कोई भी राखने को समर्थ नाहीं; सर्व कों अशरण विचारणा; सो अशरणानुप्रेक्षा कहिये।

बहुरि जो द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भाव इन पंच प्रकार का जो परिवर्तन रूप संसार, सोई भया चक्र, ता विषैं धर दिया कर्म रूप कुलाल करि राग-द्वेष-मोह भावरूप उपादान शक्ति को धरया, संसारी जीवरूप पिंड, सो नाना अवस्था कों प्राप्त होय, दुःखी होय; ऐसा संसार का स्वरूप विचारना चिंतवना, सो संसारानुप्रेक्षा कहिये।

बहुरि जहां ऐसा विचारैं कि जो यह जीव सदाकाल अकेला है। कोई काल विषैं, कोई भी प्रकार परद्रव्य सों किसी भी क्षेत्र विषैं कोई ही भाव करि याका संबंध नाहीं है। जदपि परद्रव्य, याके एकक्षेत्रावगाही होय प्रवर्तैं, तथापि सब न्यारे

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

हैं। पाप, पुण्य कर्म, आप अकेलो ही बांधे है। बहुरि तिनके उदयकाल विषैं दु:ख-सुख आप अकेलो ही भोगे है। नरक-स्वर्गादिक विषैं आप अकेलो ही जाय है। बहुरि अपना परमहित जो मोक्ष, ताकों आप अकेला ही साधै है। अर अपने एकाकी भाव करि बांधे जे कर्म, तिनका विध्वंस आप एकाकी होय ही करै है। तातैं मैं सदा अकेला ही हूं, ऐसा आपके एकाकी चिंतवना, सो एकत्वानुप्रेक्षा कहिये।

बहुरि एकक्षेत्रावगाही शरीर अर ए सर्व कुटंबादि परिवार अन्य हैं, मंदिर, ग्रह, धन, संपदादिक अन्य हैं, मैं अन्य हूं, मेरा कोई भी नाहीं, मैं कोई का नाहीं, ऐसा जहां सर्व परद्रव्यनि कूं अन्य चिंतवना, सो अन्यत्वानुप्रेक्षा कहिये।

बहुरि जहां ऐसा चिंतवना जो यह सप्त धातु करि निर्मापित शरीर महा-घिनावना, कृमि-कीटकादिक को भाजन, महा अशुचि, ताविषैं मुद्रित कियो आयुनाम नामकर्म बंदिग्रह को रक्षक, अमूर्तीक, ज्ञानस्वरूप, सुखपिंड, जीव द्रव्य रूप आतमा, सो तहां नानाप्रकार दुख भोगवै है, ऐसे शरीर सूं कैसे राचैं ? न राचैं। ऐसे शरीर कूं बारंबार अशुचि चिन्तवना, सो अशुचित्वानुप्रेक्षा कहिये।

बहुरि मिथ्यात्व, कषाय, अव्रत, योग इन चार प्रकार आस्रव भावनि करि पर-णयो संसारी जीव चार प्रकार – प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभागबंध, प्रदेशबंध कों करै है। ताके उदयकाल विषैं नानाप्रकार दु:ख-संकट कों भोगवै है। ये आस्रव, जीव कों महा अहित के कारण हैं, तातैं हेय हैं – ऐसे इनकों बारंबार हेय चिंतवना, सो आस्रवानुप्रेक्षा कहिये।

बहुरि इन आस्रव भावनि कूं रोकनहारा ऐसा जो सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की एकता रूप संवर भाव, सो जीव को उपादेय है। ताकों ग्रहण करना। इस संवर भाव विना आस्रव भाव नाहीं रुकै, अर आस्रव भाव रुकै विना कर्मास्रव रुकै नाहीं; ऐसा संवरभाव, तहाँ बारबार चिंतवन करना; सो संवरानुप्रेक्षा कहिये।

बहुरि जहां स्थिति पूरी करि अपना विपाक दे कर्म का खिरना, सो सवि-पाक निर्जरा कहिये। सो तो सर्व संसारी जीवनि कैं हुवा ही करै है, ताकरि तो किछु सिद्धि होती नाहीं। तातैं सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र पूर्वक जो तपरूप भावना है, ताकरि समय-समय असंख्यात गुणी निर्जरा होय; सो अविपाक निर्जरा, मोक्ष को हेतु है, ऐसा निर्जरास्वरूप बारंबार विचारना, सो निर्जरानुप्रेक्षा कहिये।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जहां पुरुषाकार स्वरूप को धरयां चौदह् राजू ऊंचा, दक्षिण-उत्तर सर्वत्र सात राजू चौड़ा, पूर्व-पश्चिम अधोभाग विषैं सात राजू चौड़ा, अर मध्यभाग विषैं एक राजू चौड़ा, ब्रह्म स्वर्ग निकट पांच राजू चौड़ा, लोक के अंत विषैं एक राजू चौड़ा, तीन सौं तेतालीस राजू घनाकार, तीन वातवलयनि करि वेष्टित, जीवादिक षट् द्रव्यनि करि पूर्ण भया, ऐसा लोक, ताका जिनसूत्रानुसार राग-द्वेष रहित चिंतवन करना; सो लोकानुप्रेक्षा कहिये ।

बहुरि जीव को अनादिकाल तैं चतुर्गति संसार विषैं भ्रमण करतां संता सर्व दुःख-सुख सामग्री अनेक बार मिली, कोई भी सामग्री अलभ्य न रही; परन्तु एक सम्यग्ज्ञान करि ही हीन रह्या, तातैं संसार का भ्रमण न मिटा। तातैं इस घोर संसार विषैं एक सम्यग्ज्ञान ही दुर्लभ है, जो जीवनि के सर्व कल्याण का कारण है। तातैं सम्यग्ज्ञान होने का यत्न करना, ऐसे सम्यग्ज्ञान को दुर्लभ भावना, सो बोधि-दुर्लभानुप्रेक्षा कहिये ।

बहुरि जहां अपना स्वरूप कह्या, सो विचारना; जिनधर्म का स्वरूप विचारना; बहुरि धर्म के दश लक्षण, तिनकों विचारना; इत्यादि धर्म का चिंतवन करना, सो धर्मानुप्रेक्षा कहिये ।

इत्यादि अनुप्रेक्षा का चिंतवन करना, इत्यादि क्रिया षष्ठम गुणस्थान विषैं होय है। ऐसें क्षायोपशमिक चारित्र धारक जीव, अप्रमत्त का प्रमत्त विषैं अर प्रमत्त का अप्रमत्त विषैं कितनेक काल ताईं गमन किया करै है। तहां अपना जोर पड़ै है, तब तो अप्रमत्त गुणस्थान विषैं आरूढ़ होय है; अर कर्म को जोर पड़ै है, तब उतरि प्रमत्त गुणस्थान विषैं आ प्राप्त होय है। या क्षयोपशम चारित्र की स्थिति जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोनकोटिपूर्व है। बहुरि कोई जीव क्षायोपशमिक चारित्र का धारक केवली-श्रुतकेवली के पादमूल निकट अति शुद्धता नें धारतां संता षोडश भावना को युगपत् संपूर्ण भाय तीर्थंकर प्रकृति का बंध करै है। जातैं तीर्थंकर प्रकृति के बंध का कारण विशुद्धभाव केवली-श्रुतकेवली की भक्ति करते, तिनके चरणारविंद के निकट ही होय है; ऐसा भाव औठैं (और ठौर-अन्यत्र) न होय ।

अब षोडश भावना का स्वरूप कहिये हैं। १. तहां पच्चीस दोष रहित निर्मल सम्यक्त्व भाव का होना, सो **दर्शनविशुद्धि** कहिये। २. बहुरि जहां विनय भाव विषैं रत – लीन होना, सो **विनयसम्पन्नता** कहिये। ३. अर सर्व अतीचार रहित प्रवर्तै है

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

शीलभाव जहां, सो **शीलव्रतेष्वनतिचार** कहिये। ४. बहुरि सम्यक् श्रुतज्ञान विषैं प्रवर्तै है पुनः पुनः उपयोग जिनके, सो **अभीक्ष्णज्ञानोपयोग** कहिये। ५. बहुरि चतुर्गति संसार सों है विरागभाव जिनके, सो **संवेग** कहिये। ६. बहुरि अपनी शक्तिप्रमाण भया है परद्रव्य का त्यागभाव जिनकैं, सो **शक्तितस्त्याग** कहिये। ७. बहुरि धार रहे हैं, तप के भेदनि विषैं कोई भेद रूप भाव, सो **शक्तितस्तप** कहिये। ८. बहुरि धार रहे हैं सम्यग्ज्ञानरूप समाधिभाव, सो **साधुसमाधि** कहिये। ९. बहुरि दशप्रकार वैय्यावृत्य करने विषैं सदाकाल प्रवर्तै हैं, तातैं तिनही भाव करि युक्त है, सो **वैय्यावृत्यकरण** कहिये। १०. बहुरि हृदय विषैं बस रही है अर्हंत की भक्ति भाव जिनके, सो **अरहंत की भक्ति** कहिये। ११. बहुरि भक्ति सहित बसे है हृदय विषैं अपने दीक्षा दैन हारे आचार्यगुरु, सो **आचार्य भक्ति** कहिये। १२. बहुरि तैसें ही भक्तिभाव युक्त करि विराजैं हैं अपने हृदय विषैं अपने पढ़ावनहारे बहुश्रुत के धारक जे उपाध्याय, सो **बहुश्रुत भक्ति** कहिये। १३. बहुरि द्वादशांग वाणी विषैं लग रहा है भक्ति सहित अनुराग जिनका, सो **प्रवचन भक्ति** कहिये १४. अर अपने पदयोग्य धारे हैं षट् आवश्यकनि विषैं कोई आवश्यकभाव, सो **आवश्यकापरिहाणि** कहिये। १५. बहुरि अपनी आत्मा को किया है सर्व दोषनि करि रहित अर जिनमार्ग की उच्चता दिखावने कों तत्पर हैं, सो **सन्मार्गप्रभावना** कहिये। १६. बहुरि प्रवचन कहिये आप्त, आगम, पदार्थ, जिनधर्म वा चतुर्विध संघ, तिनविषैं है प्रीति जिनकी; सो **प्रवचन वात्सल्य** कहिये।

प्रश्नः – बहुरि किसी क्षायोपशमिक संयम वाले के तीसरा परिहारविशुद्धि संयम होय है, सो कौनसे जीव के होय है ?

उत्तर – जो तीस वर्ष की अवस्था विषैं ही दीक्षा धारै अर गृहस्थ अवस्था विषैं खान-पान जाकै सुख सों भया होय, अर आठ वर्ष तांई केवली के निकट प्रत्याख्यान नामा नवम पूर्व पर्यन्त पढ़ा होय, तिसकै परिहारविशुद्धि संयम होय है। सो संयम के माहात्म्य करि सर्व पाप सों कमलवत् निर्लेप रहै, चौरासी लाख उत्तरगुण का पालक होय; नितप्रति दोय कोस गमन करै, सो तिनके पांव करि कोई जीव विराधना न होय। दिनके तीनों संध्या टाल गमन करे, रात्रि विषैं गमन नाहीं करै, अर वर्षाकाल विषैं गमन करै भी अर न भी करै, किछु नेम नाहीं। इस परिहारविशुद्धि संयम की स्थिति जघन्य अंतर्मुहूर्त है। जातैं और गुणस्थान होय जाय, तो यह संयम रहै नाहीं। जातैं याके गुणस्थान प्रमत्त-अप्रमत्त दोऊ ही हैं। अर उत्कृष्ट स्थिति

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अड़तीस वर्ष घाटि कोड़िपूर्व है। ऐसा परिहारविशुद्धि संयम का स्वरूप गोम्मटसार विषैं कह्या है।

इत्यादि क्षायोपशमिक चारित्र भावनि के भेद संक्षेप मात्र कहै। और भी अनेक भेद हैं, सो बडे शास्त्रन सों जानना। इस चारित्र के सर्व भेद केवलीगम्य हैं। यह क्षायोपशमिक चारित्र भाव वर्तमान भी सुखरूप है अर आगामी स्वर्ग-मोक्ष का कारण है।

यह क्षायोपशमिकचारित्र भाव **गुणस्थान** तो प्रमत्त, अप्रमत्त दोय ही विषैं पाइये है। **मार्गणा** – **गति** – मनुष्य; **जाति** – पंचेन्द्रिय, **काय** – त्रस; **योग** – मन के चार, वचन के चार, औदारिककाय योग, आहारककाय योग, आहारकमिश्र काय योग, ऐसैं ११; **वेद** – ३, **कषाय** – संज्वलनचतुष्क, छह हास्यादिक, ऐसे १०; **ज्ञान** – केवल विना ४; **संयम** -- सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि ३, **दर्शन** – केवल विना ३, **लेश्या** – पीत, पद्म, शुक्ल ३, **भव्य१ सम्यक्त्व** – औपशामिक, क्षायोपशमिक, क्षायिक ऐसे ३, **संज्ञी**; **आहारक**, इनविषैं पाइये है।

इति श्री भावदीपिका ग्रंथ के क्षायोपशमिकभावाधिकार विषैं सातवां
क्षायोपमिक चारित्र भाव अंतराधिकार तथा क्षायोपशमिक
भावाधिकार पांचवां समाप्त भया।

परिणामों की विचित्रता

देखो परिणामों की विचित्रता! कोई जीव तो ग्यारहवें गुणस्थान में यथाख्यात चारित्र प्राप्त करके पुनः मिथ्यादृष्टि होकर किंचित् न्यून अर्द्धपुद्गल-परावर्तन काल पर्यन्त संसार में रुलता है, और कोई नित्य निगोद से निकल-कर मनुष्य होकर मिथ्यात्व छूटने के पश्चात् अन्तर्मुहूर्त में केवलज्ञान प्राप्त करता है।

ऐसा जानकर अपने परिणाम बिगड़ने का भय रखना और उनके सुधारने का उपाय करना।

— **पं. टोडरमल, मोक्षमार्ग प्रकाशक; सातवाँ अधिकार**

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

छठवाँ अधिकार : औपशमिक भावाधिकार

(दोहा)

अनादि दुष्ट मिथ्यात्व कों, करि उपशम जिन जीव ।
शक्ति धारि मोह मारियो, करूं प्रणाम सदीव ।।

आगै औपशमिक भावाधिकार लिखिये हैं । मोह कर्म का उपशम होतैं जो भाव निपजै, सो औपशमिक कहिये । सो औपशमिक भाव के दोय भेद हैं – औपशमिक सम्यक्त्व, औपशमिक चारित्र ।

तहां प्रथम ही औपशमिक सम्यक्त्व भाव लिखिये हैं :–

तहां प्रथम ही औपशमिक सम्यक्त्व की उत्पत्ति को विधान कहिये हैं – औपशमिक सम्यक्त्व संज्ञी, पर्याप्त, गर्भज, पंचेन्द्रिय, चारों गति के जीवनि के होय है । बहुरि इन विषैं कैसे जीवनि के होय है ? भव्य होय; मंदकषायरूप विशुद्धता का धारक होय; गुण-दोष का विचार रूप जो साकार ज्ञानोपयोग, ताकरि युक्त होय; निद्रा रहित जागता जीव होय; तिनके औपशमिक सम्यक्त्व होय है । सो सम्यक्त्व के उपजने के दोय स्थानक हैं । अनादि वा सादि मिथ्यादृष्टी जीव के मिथ्यादृष्टि गुणस्थान तैं छूटि औपशमिक सम्यक्त्व होय, सो प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहिये । बहुरि उपशम श्रेणी चढ़ते क्षायोपशिक सम्यक्त्व तैं होय, सो द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कहिये ।

तहां प्रथम ही प्रथमोपशम सम्यक्त्व का विधान कहिये हैं । प्रथमोपशम सम्यक्त्व के होने तें पहले मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं पंच लब्धि होय हैं । क्षायोपशमिक, विशुद्धि, देशना, प्रायोग्यता, करण – ये पंच लब्धि हैं । तहां आदि की चार लब्धि तो भव्य जीवनि के होय हैं वा अभव्य के भी होय । अर करण लब्धि भव्य के ही होय है ।

ज्ञानावरणादिक जे अप्रशस्त कर्म प्रकृति, तिनकी शक्ति जो अनुभाग; सो जिसकाल विषैं समय-समय प्रति अनंतगुणा घटता अनुक्रमरूप होय उदय आवै, तिसकाल विषैं **क्षायोपशमिक लब्धि** कहिये ।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि क्षायोपशमिक लब्धि होतें जीव के उपजा जो सातावेदनीय आदि प्रशस्त प्रकृतिबंध का कारण धर्मानुराग रूप शुभपरिणाम, ताकी जो प्राप्ति; सो **विशुद्धि लब्धि** कहिये ।

बहुरि षट् द्रव्य, नव पदार्थ के उपदेश करणहारे आचार्यादिक की वा तिनके उपदेश की प्राप्ति वा उपदेशित पदार्थ के धारणे की प्राप्ति, सो **देशना लब्धि** कहिये ।

अर जहां नरकादि विषैं उपदेश देनेवाला न होय, तहाँ पूर्वभव विषैं धारे हुऐ तत्त्वार्थ के संस्कार के बल तैं सम्यग्दर्शन होय है । बहुरि पूर्वोक्त तीन लब्धि संयुक्त जीव समय-समय विशुद्धता करि वर्धमान होते संते आयुकर्म बिना सात कर्मनि की स्थिति अंतः कोड़ाकोड़ी मात्र अवशेष राखैं, तिसकाल विषैं जो पूर्वस्थिति थी, ताकौं एक कांडक घात करि छेदि, तिस कांडक के द्रव्य कों अवशेष रही स्थिति विषैं निक्षेपण करै है । बहुरि घातिया कर्मनि का दारु-लतारूप अघातिया कर्मनि की नींब-कांजी रसरूप द्विस्थान गत अनुभाग इहां अवशेष रहै है । पूर्व अनुभाग था, तामें अनंत का भाग दियें बहुभाग मात्र कूं छेद अवशेष रहा अनुभाग विषैं प्राप्त करै है, तिस कार्य करने की योग्यता की प्राप्ति, सो **प्रायोग्य लब्धि** कहिये ।

सो ए चार लब्धि तो भव्य-अभव्य के समान होय हैं । बहुरि विशुद्धता की वृद्धि करि वर्धमान होता संता प्रायोग्य लब्धि के प्रथम समय तैं लगाय पूर्वस्थितिबंध के असंख्यातवें भागमात्र अंतः कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण आयु विना सात कर्मनि की स्थिति बंध पीछै करै है । अंतर्मुहूर्त (पर्यंत) समानता लिये इसतैं पल्य का संख्यातवां भाग मात्र घटता स्थितिबंध तीसरा अंतर्मुहूर्त पर्यन्त करै, ऐसें ही क्रम तैं एक-एक अंतर्मुहूर्त में पल्य का संख्यातवां भाग मात्र स्थितिबंध घटाय-घटाय करै, याका नाम स्थितिबंधापसरण कहिये ।

जहां संख्यात स्थितिबंधापसरण होय, तहां पृथक्त्व सौ सागर स्थितिबंध घटै, तहां पहला प्रकृति बंधापसरणस्थानक होय । बहुरि तिस अनुक्रम तैं पृथक्त्व सौ सागर स्थितिबंध और घटै, तहां दूसरा प्रकृतिबंधापसरण स्थानक होय । असें इसही अनुक्रम तैं चौंतीस प्रकृतिबंधापसरण स्थानक होंय । इस जगह पृथक्त्व नाम सातवें, आठवें का है । तातै पृथक्त्व सौ सागर कहने तैं सात सौ वा आठ सौ सागर जानना ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अब चौंतीस स्थानक तिन विषैं क्रम तैं छियालीस प्रकृति के बंध तैं विच्छेद होय हैं, सो कहिये हैं – पहले विषैं १. नरकायु, २. तिर्यगायु, ३. मनुष्यायु, ४. देवायु, ५. नरकगति-नरकगत्यानुपूर्वी, ६. सूक्ष्मपर्याप्त साधारण, ७. सूक्ष्मअपर्याप्त प्रत्येक, ८. बादरपर्याप्त साधारण, ९. बादरपर्याप्त प्रत्येक, १०. द्वि-इंद्रियजाति अपर्याप्त, ११. त्रीन्द्रियजाति अपर्याप्त, १२. चतुर्न्द्रिय अपर्याप्त, १३. असैनी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, १४. संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, १५. सूक्ष्म पर्याप्त साधारण, १६. सूक्ष्म पर्याप्त प्रत्येक, १७, बादरपर्याप्त साधारण, १८. बादरपर्याप्त प्रत्येक, १९. द्वींन्द्रिय पर्याप्त, २०. त्रीन्द्रियपर्याप्त, २१. चतुरिन्द्रियपर्याप्त, २२. असैनी पंचेन्द्रियपर्याप्त, २३. तिर्यंगति-तिर्यंगत्यानुपूर्वी-उद्योत, २४. नीच गोत्र, २५. अप्रशस्तविहायोगति-दुर्भग-दुस्वर-अनादेय, २६. हुंडक संस्थान-असंप्राप्तासृपाटिका संहनन, २७. नपुंसक वेद, २८. वामन-संस्थान-कीलितसंहनन, २९. कुब्जक संस्थान-अर्धनाराच संहनन, ३०. स्त्री वेद ३१. स्वाति संस्थान-नाराच संहनन, ३२. न्यग्रोध संस्थान-वज्रनाराच संहनन, ३३. मनुष्यगति-मनुष्यगत्यानुपूर्वी-औदारिक शरीर-औदारिक अंगोपांग-वज्रर्षभनाराच संहनन, ३४. अस्थिर-अशुभ-अयशस्कीर्ति अरति-शोक, असाता वेदनीय ऐसें ए चौंतीस स्थानक तो भव्य वा अभव्य के समान होय हैं। इन चौंतीस स्थानकनि करि छियालीस प्रकृति बंध तैं व्युच्छित्ति होय है।

(इन प्रकृतियों की बंध-व्युच्छित्ति को निम्न सारणी से भी सरलता से समझ सकते हैं।)

बंधापसरण का स्थान	बंधापसरण प्रकृति की संख्या	बंधापसरण प्रकृतियों के नाम का खुलासा
१	१	नरकायु, यहां से लेकर नरकायु का बंध नहीं होता (इसी प्रकार जिस स्थान में जो प्रकृति लिखी है, उनका आगे-आगे के स्थान में बंध नहीं होगा ऐसा समझना)
२	१	तिर्यग् आयु का
३	१	मनुष्य आयु का
४	१	देव आयु का
५	२	नरगति, नरकगत्यानुपूर्वी का
६	१	सूक्ष्म पर्याप्त साधारण का
७	१	सूक्ष्म अपर्याप्त प्रत्येक का

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

बंधापसरण का स्थान	बंधापसरण प्रकृति की संख्या	बंधापसरण प्रकृतियों के नाम का खुलासा
८	१	बादर पर्याप्त साधारण का
९	१	बादर पर्याप्त प्रत्येक का
१०	१	द्वि-इन्द्रियजाति अपर्याप्त का
११	१	त्रि-इन्द्रियजाति अपर्याप्त का
१२	१	चतुर-इन्द्रिय अपर्याप्त का
१३	१	असैनी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त का
१४	१	संज्ञी पंच इन्द्रिय अपर्याप्त का
१५	१	सूक्ष्म पर्याप्त साधारण का
१६	१	सूक्ष्म पर्याप्त प्रत्येक का
१७	१	बादर पर्याप्त साधारण का
१८	१	बादर पर्याप्त प्रत्येक का
१९	१	द्वि-इन्द्रिय पर्याप्त का
२०	१	त्री-इन्द्रिय पर्याप्त का
२१	१	चतुर-इन्द्रिय पर्याप्त का
२२	१	असैनी पंचेन्द्रिय पर्याप्त का
२३	३	तिर्यंचगति, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी, उद्योत का
२४	१	नीच गोत्र का
२५	४	अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय का
२६	२	हुंडक संस्थान, स्फटिक संहनन का
२७	१	नपुंसक वेद का
२८	२	वामन संस्थान, कीलित संहनन का
२९	२	कुब्जक संस्थान, अर्धनाराच संहनन का
३०	१	स्त्री वेद का
३१	२	स्वाति संस्थान, नाराच संहनन का
३२	२	न्यग्रोध संस्थान, वज्रनाराच संहनन का
३३	५	मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, औदारिक शरीर, औदारिक आंगोपांग, वज्रवृषभ नाराच संहनन का
३४	६	अस्थिर, अशुभ, अयशस्कीर्ति, अरति, शोक, असाता वेदनीय का

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तहां मनुष्य-तिर्यंच के बंध योग्य प्रकृति एक सौ सतरा में छियालीस प्रकृति की व्युच्छित्ति भई। अवशेष इकहत्तर प्रकृति का बंध प्रायोग्य लब्धि का अनंतरवर्ती समय तैं करै है। अर देव, नारकी, वज्रवृषभनाराचसंहनन का बंध सिवाय करै। तातैं बहत्तर का करै है। अर इनका अन्तरविशेष लब्धिसार शास्त्र जी तैं जानना। बहुरि अनुभाग अप्रशस्त प्रकृतिनि का तौ घातिया दारु-लता द्विस्थानगत अर अघातिया का नींब, कांजीर दोय स्थान को प्राप्त समय-समय अनंत गुणां घटता बांधे है। प्रशस्त प्रकृतिनि का चार स्थान को प्राप्त समय-समय अनंगुणां बधता बांधे है।

करण तीन प्रकार है। अध:प्रवृत्तिकरण, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण। ये तीन करण करै। तिनका काल प्रत्येक का अन्तर्मुहूर्त है, परन्तु अनिवृत्तिकरण का काल स्तोक है। तिसतैं संख्यातगुणा काल अपूर्वकरण का है। जिसतैं संख्यातगुणा काल अध:प्रवृत्तकरण का है।

अब अध:प्रवृत्तकरण विषैं समय-समय प्रति अनंगुणी परिणामनि की विशुद्धता होय है। सातावेदनीय आदि प्रशस्त प्रकृतिनि का समय-समय प्रति अनंतगुणां चतुस्थानरूप अनुभाग बंध करै है। असातावेदनीय आदि अप्रशस्त प्रकृतिनि का समय-समय प्रति अनंतवैंभाग मात्र अनुभाग बंध करै है। बहुरि स्थिति बंध अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त पूर्व स्थिति बंध तैं पल्य का असंख्यातवां भाग मात्र घटता बांधे है। अर इसमें दूसरा अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त पल्य का असंख्यातवां भाग मात्र घटता बांधे है। अर इसतैं दूसरा अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त पल्य का असंख्यातवां भाग मात्र घटता बांधे है – ऐसे एक-एक अन्तर्मुहूर्त करि पल्य का असंख्यातवां भाग मात्र स्थितिबंधापसरण होय है। ऐसें या विषैं अपसरण असंख्यातहजार होय हैं। ऐसैं होते इस करण की आदि के समय विषैं स्थितिबंध अन्त: कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण था। ताके अंत समय विषैं संख्यातगुणां घाटि होय है।

बहुरि दूसरा अपूर्वकरण करै है, तहां गुणसंक्रमण तो नाहीं करै है। तीन-तीन आवश्यक और होय हैं।

समय-समय असंख्यात-असंख्यातगुणी कर्मनि की निर्जरा होय। तहाँ गुणश्रेणि आयाम अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण के काल तैंसाधिक गलितावशेष हैं, सो अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

स्थितिकांडक घात करै – अन्तर्मुहूर्त काल में अपूर्वकरण के प्रथम समय में जेती-जेती कर्मनि की स्थिति सत्व विषैं पाइये है, तिन विषैं जेती स्थिति घटावै, तिन निषेकनि के द्रव्य की अवशेष रही स्थिति, तिनके निषेकनि विषैं समय-समय असंख्यात-गुणा कर्मनि कूं लियां अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त दे है। तहां सम्पूर्ण द्रव्य दे चुकै, तब एक कांडक भयौ। ऐसे ही औपशमिक सम्यक्त्व का अंतपर्यन्त अनेक स्थिति कांडक घात करै, सो स्थिति कांडक घात कहिये। इहाँ पल्य के असंख्यातवां भाग मात्र एक-२ कांडक तैं स्थिति घटावै है। बहुरि सत्ता विषैं तिष्ठते कर्मनि का अमुक भाग, ताके अनंत स्पर्धक हैं। तिनविषैं अनंते उपर के बहुत अनुभाग कों धरैं स्पर्धक, तिनका अनुभाग घटाय, अवशेष रहा स्पर्धक, तिनकै अनुसार एक अंतर्मुहूर्त में करै, सो अनुभागकांडकघात कहिये। ऐसें अनंत स्पर्धकनि के कांडक एक-एक अंतर्मुहूर्त में करै, सो अनुभागकांडक-घात कहिये।

ऐसें गुणश्रेणि निर्जरा, स्थितिकांडक घात, अनुभागकांडकघात ए तीन आवश्यक अपूर्वकरण विषैं होय हैं।

बहुरि अनिवृत्तिकरण करै है। तहां पल्य का संख्यातवां भाग मात्र स्थिति-कांडक घात करैं हैं। तहाँ संख्यात हजार स्थितिबंधापसरण भये। तहाँ उपशम-करण करैं है। तहाँ सत्ता में तिष्ठते मिथ्यात्व के द्रव्य, ताको समय-समय असंख्यात असंख्यात गुणों द्रव्य, ताकों उपशमावै है।

उपशमकरण कहिये उदीरणाहोय उदय में न आय सकै, ऐसा कर्म करै है; सो अनिवृत्तिकरण के अंत समय पर्यंत सर्व मिथ्यात्व को द्रव्य उपशमभाव को प्राप्त करै है।

बहुरि अंतरकरण करै है। तहां अनिवृत्तिकरण के अंत समय पर्यंत स्थापै है, अनिवृत्तिकरण के अंत समय तैं लगाय अंतर्मुहूर्त के समय प्रमाण निषेकनि विषैं तिष्ठतौ जो मिथ्यात्व को द्रव्य, ताकों कितनौंक तौ उपरितन स्थिति विषैं उत्कर्षण करि चढ़ाय दे हैं। अर कितनौंक द्रव्य अपकर्षण करि निषेक नीचे दे काढ़े है।

अंतर्मुहूर्तकाल प्रमाण जो प्रथम स्थिति, ता विषैं अंतर्मुहूर्त प्रमाण मिथ्यात्व के द्रव्य रहित करै है। ऐसी क्रिया अनिवृत्तिकरण के अंत पर्यन्त करै है। बहुरि अनिवृत्तिकरण के अनंतर समय अर अंतरायाम के प्रथम समय को प्राप्त होतैं दर्शन-

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

मोहनीय अर अनंतानुबंधी चतुष्क, इनके प्रकृति, प्रदेश, स्थिति अनुभाग के समस्त पने उपशम होने तैं औपशमिक तत्त्वार्थ श्रद्धानरूप सम्यग्दर्शन कों पाय जीव सम्यग्दृष्टि भाव कों प्राप्त होय है।

तहां प्रथम समय विषैं उपरितन स्थिति विषैं तिष्ठता मिथ्यात्व का द्रव्य, ताकों गुण संक्रमण भागहार का भाग देइ, एकभाग काढ़ि, ताकों असंख्यात का भाग देइ बहुभाग तो द्रव्य मिथ्यात्वरूप ही परिणमावै है। बहुरि एक भाग को असंख्यात का भाग देइ तहां बहुभाग मिश्रमोहनीय रूप परिणमावै है; अर एक भाग सम्यक्त्व मोहनीय रूप परिणमावै है। ऐसैं संख्यात आवलीप्रमाण गुणसंक्रमण का काल है। तहाँ पर्यंत तो मिथ्यात्व के द्रव्य कों समय-समय असंख्यात-असंख्यात गुणों द्रव्य गुणसंक्रमण भागहार का भाग देइ-देइ, काढ़ि-काढ़ि मिथ्यात्वरूप, सम्यक्मिथ्यात्व, सम्यक्प्रकृति-मिथ्यात्व रूप परिणमावै। बहुरि गुणसंक्रमण काल के अंत समय पर्यंत मिथ्यात्व बिना अन्य सर्व कर्मनि की गुणश्रेणी वा स्थितिकांडकघात वा अनुभागकांडकघात पाइये हैं। बहुरि गुणसंक्रमण के अनन्तर अवशेष रह्या जो मिथ्यात्व का द्रव्य, ताकों विध्यात-संक्रमण भागहार का भाग दिये, जो प्रमाण आवै, तितने द्रव्य कों मिश्रमोहनीय, सम्यक्त्वमोहनीय रूप परिणमावै। इहां विशुद्धता मंद भई, तातैं बड़े भागहार को भाग दिया द्रव्य थोड़ा आवै, तहाँ द्रव्य कों तिन रूप परिणमावै। दर्शनमोह का उपशम करनेवाला जो जीव, ताका मरण न होय है।

बहुरि उपशम सम्यक्त्व के काल विषैं उत्कृष्ट छह आवली अर जघन्य एक समय अवशेष रहै, अनंतानुबंधी क्रोधादि कषाय विषैं एक क्रोई का उदय होतैं सम्यक्त्व को विराधी मिथ्यात्व को प्राप्त न होय है, बीच में सासादन होय। यहाँ मिथ्यात्व रहित अनंतानुबंधी का उदय है, सो या सासादन का जघन्य काल एक समय उत्कृष्ट छह आवली प्रमाण है। सो अपने योग्यकाल सासादन विषैं तिष्ठि, फेरि नेम करि मिथ्यात्व को प्राप्त होय है।

जैसैं वृक्ष तैं टूटा फल नेम करि अपने अंतराल के काल को बीच में भोगि पृथ्वी विषैं आय पड़ै है; तैसैं सम्यक्त्वरूप वृक्ष तैं टूट्यो कहिये परिणमन भयो अनं-तानुबंधी कषाय भावरूप जो आकाश, ताको प्राप्त भयो संता, तहाँ अपने योग्य काल कूं भोगि मिथ्यात्वरूप भूमिका को प्राप्त होय है। अर जो जीव कै औपशमिक सम्यक्त्व के काल विषैं जो अनंतानुबंधी को उदय न आवै, तो सासादन न होय है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि औपशमिक सम्यक्त्व को अंतर्मुहूर्त काल पूर्ण हुया पाछे नेम करि जीव संक्लेशता नैं प्राप्त होय। ताकरि अंतरायाम को अंत के निषेकनि तें ऊपर निषेकनि विषैं तिष्ठतो तीन प्रकार मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्प्रकृतिरूप जो मिथ्यात्व को द्रव्य, ताको अपकर्षण भागहार का भाग देय, एकभाग प्रमाण द्रव्य काढ़ि, ताविषैं बहुत संक्लेशभाव होय तो मिथ्यात्व के द्रव्य को तो उदयवाली का प्रथम समय का निषेक सों लगाय अंतरायाम को पूरि ऊपरले सर्वनिषेकनि विषैं दे हैं। अर मिश्र-मोहनीय, सम्यक्त्वमोहनीय के द्रव्य नैं उदयावली के बाह्य निषेकनि विषैं दे है। अर अंतरायाम कों मिथ्यात्व के द्रव्य सों पूरे है। जातैं उपशम सम्यक्त्व के काल सों अंत-रायाम को काल संख्यात गुणो है, तातैं अवशेष रह्यो अंतरायाम को काल, ताकों ज्योंका त्यों मिथ्यात्व के द्रव्य सहित करै है। सो तो जीव सम्यक्त्व सूं छूटि मिथ्यात्व गुणस्थान कों प्राप्त होय है। तहाँ विपरीत श्रद्धानी होय है। ताही काल तैं धर्म-रुचि का अभाव होय। जैसे ज्वरवाले को मिष्टरस न रुचै, तैसे धर्मविषैं अरुचिता को प्राप्त होय है। धर्म जो अनेकांत वस्तु का स्वभाव वा रत्नत्रय रूप सो रुचै नाहीं, अर जिसतैं कोई जीव को घाटि संक्लेशता होय, सो जीव मिश्रमोहनीय के द्रव्य नैं तो उदयावली के प्रथम समय तें लगाय सर्व अंतरायाम नैं पूरि, उपरि स्थिति विषैं दे है। अर मिथ्यात्वमोहनीय, सम्यक्त्वमोहनीय के द्रव्य तैं उदयावली का बाह्य निषेकनि सों लगाय अंतरायाम नैं पूरि ऊपर स्थिति विषैं दे है। ताकूं सम्यक्त्व सूं छूटि तीसरो मिश्र गुणस्थान होय है। तहाँ मिश्रमोहनीय का उदय होतैं जीव एक ही समय में तत्त्व अर अतत्त्व को मिश्ररूप श्रद्धै है। जैसैं दही-गुड़ मिला हुवा और ही रसान्तर को प्राप्त होय है, तैसैं यहां सत्य-असत्य श्रद्धान मिला हुवा जानना।

अर यातैं भी कोई जीव के संक्लेशता घाटि होय, सो जीव सम्यक्त्वमोहनीय के द्रव्य को तो उदयावली के प्रथम निषेकनि सों लगाय सर्व अंतरायाम नैं पूरि उपर स्थिति विषैं दे है। अर मिथ्यात्वमोहनीय, मिश्रमोहनीय के द्रव्य को उदयावली बाह्य का प्रथम निषेक सों लगाय सर्व अंतरायाम नैं पूरि उपरि स्थिति विषैं दे है। सो ताकें सम्यक्त्वमोहनीय को उदय होतें क्षायोपशमिक सम्यक्त्व को अंगीकार करैं हैं। तहां चल, मल, अगाढ़ रूप तत्त्वार्थ को श्रद्धैं है। अर सम्यक्त्वमोहनीय के उदय तैं श्रद्धान विषैं चपलपनो होय है, वा मल लागै है, वा शिथिलभाव होय है; परन्तु मूल श्रद्धान का घात न होय है। या करि ही जीव आप विशेष न जानता अज्ञानी गुरु के निमित्त तैं आप असत्य श्रद्धान भी करै, परन्तु यहाँ "सर्वज्ञ की आज्ञा ऐसैं होय है" ऐसैं जानि

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

श्रद्धान करै, तातैं सम्यग्दृष्टि होय है। अर जो कदाचित् कोई कोई ज्ञानी गुरु सूत्र तैं सम्यक्स्वरूप दिखावै अर हठादिक तैं श्रद्धान न करै तो तिस ही काल तैं लगाय सो मिथ्यादृष्टि होय है। ऐसें औपशमिक सम्यक्त्वभाव का स्वरूप कहा है।

कैसा है औपशमिक सम्यक्त्वभाव ?

अनादि को लागो जो महा उद्धत मिथ्यात्व नामा कर्म, ताके उदय का अभाव करि प्रगट भया है। बहुरि कैसा है ? चल, मल, अगाढ़ दोष तैं रहित निर्मल है। बहुरि कैसा है ? तोड़ी है संसारी आगल जिननै, अर सर्वसिद्धी को कारण है।

बहुरि कोई जीव वेदक सम्यग्दृष्टि होय क्षायोपशमिक सकल चारित्र का ग्रहण करि उपशम श्रेणी चढ़ने को सन्मुख होय, सो फेरि द्वितीय उपशम सम्यक्त्व को करै है। तहाँ अप्रशस्त ऐसे तीन ही करण करै है।

तहां अधःप्रवृत्तकरण विषैं समय-समय अनंतगुणी विशुद्धता, स्थितिबधापसरण, प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग समय-समय अनंतगुणां वधता बंध करै, अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग समय-समय अनंतवें भाग करै ऐसे चार आवश्यक करै।

अपूर्वकरण विषैं गुणश्रेणी निर्जरा, स्थितिकांडकघात, अनुभागकांडकघात, ए तीन आवश्यक करै।

अर अनिवृत्तिकरण विषैं उपशमकरण अर अंतरकरणादि विधान सर्व प्रथमोपशम सम्यक्त्ववत् करै। इहां विशेष इतना कि प्रथमोपशम सम्यक्त्व विषैं तो एक मिथ्यात्व को ही करै है। अर द्वितीयोपशम सम्यक्त्व विषैं मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्प्रकृतिमिथ्यात्व इन तीन प्रकृति का अंतर करै, और सर्व विधान समान जानना।

बहुरि अनिवृत्तिकरण के अनंतर समय विषैं द्वितीयोपशमसम्यक्त्व कों प्राप्त होय है। तहाँ और विधान तो समान है; परन्तु प्रथम औपशमिक सम्यक्त्व विषैं गुणसंक्रमण भागहार का भाग सहित मिथ्यात्व के द्रव्य कों अपकर्षण कर तीन-प्रकृतिरूप करै था, इस विषैं विध्यातादि भाग जानना। ऐसा यह औपशमिक सम्यक्त्व भाव वेदक सम्यग्दृष्टी जीव के औपशमिक सम्यक्त्वभाव के सन्मुख अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती जीव के होय, सो द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कहिये।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

औपशमिक सम्यक्त्वभाव वर्तमान भी सुख का कारण है अर आगामी स्वर्ग-मोक्ष का कारण है। यह औपशमिक सम्यक्त्वभाव के गुणस्थान तो असंयत सों लगाय उपशांत कषाय एकादशम गुणस्थान पर्यन्त आठ गुणस्थान विषैं पाइये। अर मार्गणा **गति** – ४, **जाति** – पंचेन्द्रिय १, **काय** – त्रस १, **योग** – ४ मन के, ४ वचन के, ४ काय के – औदारिक काययोग, वैक्रियक, वैक्रियकमिश्र, कार्माण ऐसे १२, **वेद** – ३, **कषाय** – अनंतानुबंधी चतुष्कविना २१, **ज्ञान** – मति, श्रुत, अवधि ३, **संयम** – परिहारविशुद्धि विना ६, **दर्शन** – केवलविना ३, **लेश्या** – ६, **भव्य** १, **सम्यक्त्व** – स्वकीय १, **संज्ञी** १, **आहारक-अनाहारक** २, इनविषैं पाइये।

इति श्री भावदीपिका ग्रंथ के औपशमिक भावाधिकार विषैं
प्रथम सम्यक्त्वभाव अंतराधिकार समाप्त भया।

उपशम सम्यक्त्व का स्वरूप

दंसणमोहुवसमदो, उप्पज्जइ जं पयत्थसद्दहणं।
उवसमसम्मत्तमिणं, पसण्णमलपंकतोयसमं॥

गाथार्थ :– दर्शनमोहनीय [सम्यक्त्व विरोधी पांच अथवा सात प्रकृतियों] के उपशम से जो पदार्थों का श्रद्धान उत्पन्न होता है, उसको उपशम सम्यक्त्व कहते हैं।

जैसा निर्मली आदि पदार्थों के निमित्त से कीचड़ आदि मल के नीचे बैठ जाने पर जल निर्मल होता है, वैसा ही यह सम्यक्त्व निर्मल होता है।

— आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धांत चक्रवर्ती
गोम्मटसार जीवकाण्ड, गाथा ६५०

—✱—

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

औपशमिक चारित्र भावांतराधिकार

(दोहा)

उपशम श्रेणी मांड के, कियो मोह बेहाल ।
तोर जोर क्षण में चढ़े, तिन पद ढोक त्रिकाल ।।१।।

आगे औपशमिक चारित्र भाव अंतराधिकार निरूपिये हैं – औपशमिक चारित्र भाव द्वितीयोपशम सम्यक्त्व सहित भी होय है, अर क्षायिक सम्यक्त्व सहित भी होय । जातैं उपशम श्रेणी द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टी भी मांडै अर क्षायिक सम्यग्दृष्टी भी मांडै । तहां अप्रमत्त गुणस्थान विषैं अत्यन्त परिणामनि की विशुद्धता सहित होय । अनंतानुबंधी के चतुष्कविना अवशेष इक्कीस चारित्रमोह की प्रकृति, तिनकैं उपशमावने को उद्यम करै है । अन्य प्रकृतिनि का उपशम होता नाहीं, तातैं तिनकैं उपशमकरण नाहीं है । तहां सप्तम गुणस्थान विषैं अध:प्रवृत्तिकरण, अपूर्वकरण ये तीन करण करै है । अर स्थितिबंधापसरण, क्रमकरण, देशघातिकरण, अंतरकरण, उपशमकरण, ऐसैं आठ करण करै है । याही तैं आठ अधिकार चारित्रमोह का उपशमविधान विषैं पाइये हैं ।

तहां अध:प्रवृत्तकरण का लक्षण अर ताकरि किये जे कार्य, जैसें औपशमिक सम्यक्त्व कों सन्मुख होतैं कहे हैं, तैसें ही जानने ।

बहुरि अपूर्वकरण के प्रथम समय विषैं स्थितिबंध अर स्थितिसत्व अंत: कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण हैं । तहाँ विशेष इतना कि स्थितिबंध तैं स्थितिसत्व संख्यातगुणां है । यहां उदयावली तैं बाह्य गलितावशेष गुणश्रेणी का आरंभ भया । अर गुणसंक्रमण, स्थितिकांडकघात, अनुभागकांडकघात ए आवश्यक होय हैं । सो अपूर्वकरण आदि समय तैं लगाय अंत समय पर्यन्त संख्यात हजार स्थितिबंधापसरण है ।

बहुरि अनिवृत्तिकरण कों प्राप्त होय है, तहाँ सर्व ही कर्मनि का उपशम, निधत्ति, निकाचन इन तीन करण का अभाव भया सर्व ही कर्म उदीरणा, संक्रमण, अपकर्षण, उत्कर्षण करने योग्य भये । यहाँ पल्य का संख्यातवां भाग मात्र प्रमाण

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

स्थितिबंधापसरण करतां संतां संख्यात हजार स्थितिबंधापसरण करि अनिवृत्तिकरण के काल के संख्यातवें भाग अवशेष रह्या, तहाँ क्रमकरण होय है।

क्रमकरण कहिये कर्मनि का स्थितिबंध पूर्वं जिस अनुक्रम तैं होता था, तिसही अनुक्रम करि भया। या भांति अनेक नाना अनुक्रम स्थापि बंध करै है। जैसें पूर्वं मोहनीय का स्थितिबंध अधिक होता था, अन्य प्रकृतिनि का घाटि होता था, अर अभी तिनके समान होय है। ऐसा अनुक्रम स्थापै हैं। अर कभी तिनतैं भी घाटि अनुक्रम स्थापै हैं; तिनतैं घाटि स्थितिबंध करै है, उनका बाधि (ज्यादा) होय है, ऐसें अनेक अनुक्रम स्थापि, जघन्य स्थिति चार घातिया की अंतर्मुहूर्त, वेदनीय की बारा मुहूर्त, नाम-गोत्र की आठ मुहूर्त तें दूनी बंध होय है, सो क्रमकरण कहिये।

बहुरि देशघाति करण करै है – घातिया कर्मनि का शैल, अस्थि, दारु, लता चतुःस्थान अनुभागबंध होता था। ताकों मेटि दारु, लता द्विस्थान बंध वा एक लता-भाग स्थान अनुभागबंध करै है, सो देशघातिकरण कहिये।

बहुरि अन्तरकरण कहिये हैं – चारित्रमोह की अनंतानुबंधी चतुष्क विना इक्कीस प्रकृति का अंतरकरण करै है। सूक्ष्मसांपराय गुणस्थान का अनंतरवर्ती समय तैं लगाय उपशांत कषाय गुणस्थान का कालप्रमाण समयनि विषैं तिष्ठता चारित्र-मोहनीय की इक्कीस प्रकृति, तिनका द्रव्य, ताका अंतरकरण करै है। कितनाक द्रव्य तो सूक्ष्मसांपराय का अंत पर्यन्त स्थापि जो प्रथम स्थिति, तिन विषैं अपकर्षण कर दे है। अर कितनाक द्रव्य उपशान्तकषाय का अंत का अनन्तरवर्ती निषेक तैं लगाय उपरितन स्थिति विषैं दे है। अर उपशान्तकषाय का काल प्रमाण निषेक मोह का द्रव्य रहित करै है, सो अंतरकरण कहिये।

बहुरि उपशमकरण करै है – उदीरण होय उदय न आवै ऐसा करै है। तहाँ प्रथम ही अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान इन आठ कषायनि कों उपशमावै है। पीछे नपुंसकवेद, स्त्रीवेद, हास्यादिक, पुरुषवेद, संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ ऐसें अनु-क्रम सों उपशमावै है, सो उपशमकरण कहिये।

बहुरि यहां पूर्वस्पर्धकनि के अपूर्वस्पर्धक करै है। पूर्वस्पर्धकनि के अनन्तवें भाग अनुभाग राखै है। बहुरि अनिवृत्तिकरण के अंत पर्यन्त लोभकषाय की सूक्ष्म-कृष्टि करै है। अपूर्वस्पर्धकनि के अनन्तवें भाग अतिसूक्ष्म अनुभाग राखै है। इत्यादि अनेक क्रिया अनिवृत्तिकरण विषैं करतां संतां समाप्ति करै है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान कों प्राप्त होय है। तहां सूक्ष्म है लोभकषाय की अनुभागशक्ति जिन विषैं, ऐसी सूक्ष्म प्रकृतिनि कूं भोगवै है।

बहुरि सूक्ष्मसाम्पराय कों समाप्त करि उपशान्तकषाय गुणस्थान को प्राप्त होय है। तहां यथाख्यातचारित्र कों अंगीकार करै है। मोहभाव रहित होय है। सिद्ध-समान आत्मीक सुख अवस्था कों प्राप्त होय है।

फिर तातैं पड़ै है, सो पड़ना दोय प्रकार ही है – भवक्षय तैं, कालक्षय तैं। जो आयु का अन्त होतैं मरण कों पाय गिरै तो देवगति कों प्राप्त होय है। तहां असंयम गुणस्थान होय है, सो तो भवक्षय तैं पड़ना होय। अर जहाँ उपशांतकषाय गुणस्थान काल पूरा भया पड़ना होय, सो कालक्षय तैं पड़ना भया। इन बिना और कोई संक्लेशादि पड़ने का कारण नाहीं। कालक्षय तैं गिरै है, सो अनुक्रम तैं गिरै हैं।

प्रथम उपशान्तकषाय तैं सूक्ष्मसांपराय गुणस्थान कों प्राप्त होय, तहाँ सूक्ष्म-लोभ कों भोगवै है। तहां ज्ञानावरणी ५, दर्शनावरणी ४, अन्तराय ५, उच्चगोत्र, यशस्कीर्ति – इन सोलह प्रकृतिनि का बंध तैं अभाव भया था, सो बंध होने लगा। सो पड़ते समय तिस स्थानक विषैं जितना स्थिति बंध करै था, तिस स्थानक तैं दूना स्थितिबंध होने लगा। तैसें ही अनुभाग बंध अप्रशस्त प्रकृतियों का अनन्तवें भाव समय-समय करै था, सो समय-समय अनन्तगुणां होने लगा। अर प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग समय-समय अनन्तगुणां बंध होता था, सो अनन्तवें भाग होने लगा।

बहुरि अनिवृत्तिकरण को प्राप्त होय है। तहां उपशमकरण का अभाव होय है। तहां संज्वलन चतुष्क अर पुरुषवेद का उदय होय है। तहां बादर अनुभाग सहितनि कों भोगवै है। बहुरि देशघातियाकरण को अभाव होय, चतुःस्थानरूप अनु-भागबंध करै है। बहुरि क्रमकरण उलटा होय है। चढ़तां जिस अनुक्रम सों स्थिति-बंध करै था, तिसतैं उलटै क्रम तैं करने लगा। स्थितिबंधापसरण विपरीत होय, स्थितिबंध घाटि करै था, सो अधिक-अधिक करने लगा। तैसे स्थितिकांडकघात, अनुभागकांडकघात विपरीत होने लगा। पहले स्थिति-अनुभाग घटाय-घटाय कांडक करै था, सो अधिक-अधिक स्थिति-अनुभाग सहित कांडक करने लगा। बहुरि गुण-संक्रमण, गुणश्रेणी निर्जरा असंख्यात-असंख्यातगुणां होना था, सो समय-समय प्रति असंख्यातवें भाग होने लगा। इत्यादि उपशम श्रेणी चढ़तां जो क्रिया होती थी, सो उतरतां सर्व क्रिया विपरीत होय है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि अनिवृत्तिकरण का अभाव होय अपूर्वकरण कों प्राप्त होय है। बहुरि अपूर्वकरण का अभाव करि अधःप्रवृत्तकरण विषैं आवै। यहां पर्यन्त तो अनुक्रम तैं उतरे यहां ते फेर नेम नाहीं। फेरि विशुद्धता बधै फेर श्रेणी मांडे, तो ऊपर के गुणस्थान कों प्राप्त होय।

एक जीव एक पर्याय में बहुत मांडै, तो दोय बार उपशमश्रेणी मांडे। अर अनेक पर्यायनि विषैं चार बार मांडे। प्रत्याख्यान का उदय आय जाय, तो देशसंयत गुणस्थान होय जाय है। अर अप्रत्याख्यानचतुष्क का उदय आय जाय तो असंयत कों प्राप्त होय। अर अनन्तानुबंधी चतुष्क का उदय आय जाय, तो सासादन गुणस्थान हो, इत्यादि नेम नाहीं।

बहुरि क्रोधादि चार कषाय विषैं एक कोई कषाय अर तीन वेदनि विषैं एक कोई वेद सहित श्रेणी मांडे है, तातैं श्रेणी मांडनेवाला बारा प्रकार होय है। सो ए तो लोभकषाय पुरुषवेद सहित श्रेणी मांडनेवाले की अपेक्षा संक्षेप कथन लिखा है। अन्य प्रकार श्रेणी मांडनेवाला के कोई-कोई क्रिया विशेष है, सो सर्व विधान का विशेष करि कथन लब्धिसार नामा ग्रन्थ तैं जानना।

इस प्रकार औपशमिक चारित्रभाव का कथन किया। सो औपशमिक चारित्र भाव जगत्पूज्य तथा वर्तमान भी सुखरूप है। अर आगामी सौधर्मादि स्वर्ग तैं लेय सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त कूं कारण है। अर परम्परा मोक्ष कूं कारण है। तहां औपशमिक चारित्रभाव गुणस्थान तो अपूर्वकरण तैं लेय उपशांतकषाय पर्यन्त चार गुणस्थान विषैं पाइये है। अर **मार्गणा** विषैं – **गति** – मनुष्य, **जाति** – पंचेन्द्रिय, **काय** – त्रस, **योग** – मन के चार ४, वचन के चार ४, अर औदारिककाययोग। ऐसें ९, **वेद** – तीन ३, **कषाय** – संज्वलनचतुष्क ४, हास्यादिक ६, **ज्ञान** – केवल-विना ४, **संयम** – सामायिक, छेदोपस्थापना, सूक्ष्मसाम्पराय, यथाख्यात ४, **दर्शन** – केवलविना ३, **लेश्या** – शुक्ल, **भव्य**, **सम्यक्त्व** – औपशमिक, क्षायिक २, **संज्ञी**, आहारक इन विषैं पाइये है।

इति श्री भावदीपिका ग्रंथ के औपशमिक भावाधिकार विषैं
औपशमिक चारित्रभाव अंतराधिकार दूजा समाप्त भया।

ऐसें दोय अंतराधिकारनि विषैं औपशमिकभावाधिकार छट्ठा पूर्ण भया

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

सातवाँ अधिकार : क्षायिक भावाधिकार

अथ क्षायिकभावाधिकार प्रारभ्यते – जे कर्म के क्षय होतैं आत्मा विषैं भाव प्रगट होय है, सो क्षायिक भाव कहिये। इस क्षायिक भाव के नव भेद हैं। केवलज्ञान, केवलदर्शन, क्षायिक सम्यक्त्व, क्षायिक चारित्र; बहुरि दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य ए पांच क्षायिक लब्धि, ऐसें नव भाव हैं।

तिन विषैं **प्रथम ही क्षायिक सम्यक्त्वभावाधिकार** लिखिये हैं।

क्षायिक सम्यक्त्वभाव अंतराधिकार

(दोहा)

अनन्तानुबंधी चतुष्क, दर्शनमोह महंत।
तिनको क्षयकरि धारि बल, चारितमोह दहंत ॥१॥

तिनके पद मन वच थकी, सीस धारि परिणाम।
करूं त्रिकाल मंगल करन, सब विधि पूरन काम ॥२॥

जो मनुष्य कर्मभूमि विषैं उपज्यो होय, सो केवली-श्रुतकेवली के पादमूल विषैं तिष्ठतो होय, सो ही दर्शनमोह की क्षपणा को प्रारंभक होय है, यातैं अन्यत्र ऐसी विशुद्धता न होय है।

अधःकरण के प्रथम समय तैं लगाय जावत मिथ्यात्वमोहनीय अर मिश्रमोहनीय को द्रव्य सम्यक्त्वप्रकृतिरूप होय संक्रमण करै, तावत् अन्तर्मुहूर्त काल दर्शनमोह की क्षपणा को प्रारंभक कहिये। सो दर्शनमोह की क्षपणा के पहले तीन करण विधान करि अनंतानुबंधीचतुष्क को विसंयोजन करै। तिनके द्रव्य कों चारित्रमोह की अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान, संज्वलनरूप बारा कषाय, छह हास्यादिक, तीन वेद इन प्रकृतिनि विषैं गुणसंक्रमण भागहार को भाग देई-देई अपकर्षण करि समय-समय असंख्यातगुणां क्रमने लिया संक्रमण करै, तद्रूप करै, ऐसा अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त संक्रमण विधान करि परिणमावै। अनंतानुबंधी चतुष्क को अनिवृत्तिकरण के अंत में अभाव करै; ताका नाम विसंयोजन कहिये। सो विसंयोजन असंयत, देशसंयत, प्रमत्त, वा अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती वेदक सम्यग्दृष्टी जीव करै है। तहां पहले अधःप्रवृत्तकरण करै, समय-समय अनंतगुणी परिणामनि की विशुद्धता करतां संतां सर्वविधान स्थितिबंधापसरण, अनुभाग बंधापसरणादि सर्वक्रिया करतां संतां संख्यात हजार स्थिति-

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बंधापसरण करि अध:प्रवृत्तकरण को समाप्त करि अपूर्वकरण को प्राप्त होय । तहां गुणसंक्रमण, गुणश्रेणी निर्जरा, स्थितिकांडकघात, अनुभागकांडकघात इत्यादि आवश्यकादि क्रिया करतां संतां अपूर्वकरण का काल अन्तर्मुहूर्त पूरा करि, अनिवृत्तिकरण नैं प्राप्त होय । यहाँ गुणसंक्रमण अनंतानुबंधी का ही है, और प्रकृतिनि का नाहीं है । तहाँ अनंतानुबंधी का स्थिति सत्व, ताका चार पर्व होय हैं । स्थिति घटने की मर्यादा करि चार विधान होय हैं । अपूर्वकरण के प्रथम समय विषैं अंत:कोड़ाकोड़ी प्रमाण कर्मनि का स्थिति सत्व, ताकों अनेक स्थितिकांडकघात करि घटाय अनिवृत्तिकरण के पहले समय अनन्तानुबंधी का स्थितिसत्व पृथक्त्व लक्ष सागर प्रमाण राखै, एक पर्व तो यह भया ।

पीछे संख्यात हजार स्थितिकांडकघात भये असंज्ञी पंचेन्द्रिय का स्थितिसत्व समान हजार सागर राखै, पीछे फेर संख्यात हजार स्थितिखन्ड भये चौइन्द्रिय का स्थितिसत्व समान सौ सागर राखै, ऐसैं ही तेंद्रिय का पचास सागर, बेंद्रिय का पच्चीस सागर, एकेंद्रिय का एक सागर प्रमाण स्थितिसत्व रहै है । बहुरि पल्य प्रमाण स्थितिसत्व रहे हैं, यह दूसरा पर्व भया ।

बहुरि हजारों स्थितिखन्ड होतां संतां पल्य का असंख्यातवां भाग मात्र स्थितिसत्व रहै, ऐसे यह तीसरा पर्व भया ।

बहुरि संख्यात हजार स्थितिखन्ड भये उच्छिष्टावली है नाम जाका, ऐसा आवलीमात्र अनन्तानुबन्धी का स्थितिसत्व रहै है, सो चौथा पर्व भया ।

सो यहां पर्यन्त तो समय-समय असंख्यात-असंख्यातगुणां द्रव्य गुणसंक्रमण करि अनन्तानुबन्धी कों इक्कीस प्रकृति रूप संक्रमण करि परिणमावै । बहुरि उच्छिष्टावली मात्र निषेकनि के द्रव्य कों एक-एक समय विषैं एक-एक निषेक कों बारह कषाय, नोकषायरूप परिणमाय अभाव करै है, ऐसैं अनंतानुबंधी को विसंयोजन करै है । पीछे अंतर्मुहूर्त काल विश्राम करि, अन्य क्रिया करि, तहाँ पीछे बहुरि तीन करण करि अनिवृत्तिकरण काल विषैं मिथ्यात्व, मिश्रमिथ्यात्व, सम्यक्त्वप्रकृतिमिथ्यात्व – इन तीन प्रकार मोहनीय कों क्रम तैं नाश करै है । सो ही कहिये हैं – दर्शनमोह की क्षपणा के सन्मुख होते संते जीव समय-समय अनंतगुणी विशुद्धता युक्त होय, दर्शनमोह के उपशमन विषैं जैसैं विधान कह्या था, तैंसे सर्व जानना । अध:प्रवृत्तिकरण करि पीछे अपूर्वकरण कों प्राप्त होय, अनिवृत्तिकरण कों प्राप्त होय है । तहां मिथ्यात्व

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

मोहनीय अर मिश्रमोहनीय के द्रव्य कों गुणसंक्रमण करि सम्यक्त्वमोहनीयरूप परिणमावै है। यहाँ दर्शनमोह की स्थितिसत्व पृथक्त्व लक्ष सागर प्रमाण है। बहुरि यातें परै दर्शनमोह की स्थिति पल्य प्रमाण रहैं, तहाँ पर्यन्त स्थितिकांडकायाम का प्रमाण पल्य के संख्यातवें भाग मात्र रहै। तहाँ संख्यात हजार संख्यात हजार कांडक करतें-करतें असंज्ञी पंचेद्रिय, चौन्द्रिय, तेइन्द्रिय, बेंन्द्रिय, एकेन्द्रिय क्रमतें हजार सागर, सौ सागर, पचास सागर, पच्चीस सागर, एक सागर प्रमाण दर्शनमोह की स्थिति सत्व राखै है। ऐसें चार पर्व करै हैं। तहां दर्शनमोह के द्रव्य कों उदीरणा करि असंख्यात-असंख्यात समयप्रबद्ध प्रमाण द्रव्य उदयावली विषें दीजिये है। बहुरि संख्यात हजार स्थितिकांडक भये मिथ्यात्व की स्थिति तहाँ उच्छिष्टावलीमात्र अवशेष रहै है। बहुरि संख्यात हजार स्थितिकांडक भये मिथ्यात्व की स्थिति का अंत कांडक का अंतकाल हो है। ता समय मिश्रमोहनीय की स्थिति उच्छिष्टावली मात्र अवशेष रहै है, सम्यक्त्वमोहनीय की स्थिति अष्ट वर्ष प्रमाण रहै है। बहुरि मिथ्यात्व प्रकृति के अंतकांडक की अन्तफाली जिस समय मिश्रमोहनीय विषें संक्रमण होय है, तिस समय मिथ्यात्व का तो अभाव ही होय है। अर मिश्रमोहनीय का द्रव्य उत्कृष्ट होय है। अर मिश्रमोहनीय के अंतकांडक की अन्तफाली का द्रव्य सम्यक्त्वमोहनीय विषें संक्रमण होय है। तिस समय मिश्रमोहनीय को अभाव होय है। तिससमय सम्यक्त्वमोहनीय का द्रव्य उत्कृष्ट होय है, किंचिदून डेड़ गुणहानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण होय है। बहुरि गुणश्रेणी, गुणसंक्रमण, स्थितिकांडकघातादि अनेक क्रिया होते संते सम्यक्त्वमोहनीय की स्थिति अन्तर्मुहूर्त रहै है। तहां सर्व क्रिया का अभाव होय है अर अनिवृत्तिकरण की समाप्ति होय है। गलितावशेष गुणश्रेणी आयाम कृतकृत्यवेदक का कालप्रमाण रहै है। तहां यह जीव कृतकृत्यवेदक सम्यक्दृष्टी होय है। जातैं किये हैं करने योग्य कार्य जानैं, तातैं कृतकृत्यवेदक नाम पावै है। यहां पर्यन्त दर्शनमोह की क्षपणा को प्रारम्भ करै है, यहांपर्यन्त मरण नाहीं है। अर कृतकृत्यवेदक काल में आयु का अंत होय तो मरण करै। अब जो कृतकृत्यवेदक काल विषें ही अपने आयु के अन्त के वश थकी मरण को प्राप्त होय, तो सम्यक्त्व ग्रहण तैं पहले जो आयु बांधा था, ताके वश तैं मरण करि चारों गतिनि विषैं उपजे है।

कृतकृत्यवेदक काल के चार भाग एक-एक अंतर्मुहूर्तमात्र कहिये। तहाँ प्रथम भाग विषैं मूवा हुआ जीव देवगति विषैं ही उपजै। बहुरि दूसरे भाग विषैं मूवा

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

जीव देव, मनुष्य दोऊ गति विषैं उपजै । बहुरि तीसरे भाग में मूवा जीव मनुष्य, देव, तिर्यंच तीन गति विषैं उपजै; अर चौथे भाग में मूवा जीव चारों गतिनि विषैं उपजै । जो गति पूर्वैं बांधी होय, ताही के अनुसार परिणाम होय, तिनके योगकाल विषैं मरण होय । बहुरि अधःकरण के प्रथम समय विषैं दर्शनमोह की क्षपणा का आरंभक जीव के पीत, पद्म, शुक्ल लेश्या जो होय, सो समय-समय अनंतगुणी विशुद्धता के क्रम करि अनिवृत्तिकरण के अन्त समय विषैं तिस लेश्या का उत्कृष्ट अंश सम्पूर्ण होय, ताकै पूर्वैं देवायु बंधी होय, ताकै चारों ही भाग में मरै तो लेश्या नाहीं । सर्वभाग का मूवा कल्पवासी देव होय, अर जिनकै तीन अन्य आयु बंधी होय, सो दूसरे, तीसरे, चौथे भाग में मरै, सो शुभ लेश्या की क्रम तें हानि होय करि मरण होय । ता समय कापोत लेश्या का जघन्य अंश होय; जातैं यहाँ जाकै पूर्व मनुष्य, तिर्यंच आयु बंधी होय तो भोगभूमियां मनुष्य, तिर्यंच होय । अर जाकै पूर्वैं नरकायु बंधी होय, सो चौथे भाग में मरण करि प्रथम नरक विषैं उपजै, आगै न उपजै । सो जा गति विषैं उपजै, ता गति विषैं निष्ठापन करि क्षायिक सम्यक्त्व को प्राप्त होय है । अर मरन नाहीं होय तो तहां ही अंतर्मुहूर्तकालप्रमाण कृतकृत्यवेदक दशा को भोगि, निष्ठापन करि क्षायिक सम्यक्त्व को प्राप्त होय, अर ऐसैं अनंतानुबंधी चतुष्क, दर्शनमोह त्रिक, इन सात प्रकृतिनि के क्षय तें क्षायिक सम्यक्त्व होय है ।

सो कैसा है क्षायिक सम्यक्त्व ? निःकम्प है, निश्चल है, बहुरि निर्मल है, शंकादिमल रहित है, अक्षय है, शिथिलता के अभाव तें गाढ़ा (दृढ़) है, अनंत कहिये अन्त रहित है । दर्शनमोह के क्षय होतैं क्षायिक सम्यग्दृष्टी जीव तिसही भव विषैं वा तीसरे भव विषैं वा चौथे भव विषैं, नेम करि सिद्धपद कों पावै । ऐसा यह क्षायिक लब्धिरूप क्षायिक सयक्त्वभाव है । सो ए भाव वर्तमान विषैं भी सुख के कारण हैं, अर आगामी मोक्षसुख के कारण हैं । बहुरि गुणस्थान तो असंयत सौं लगाय अयोगी पर्यन्त ग्यारह गुणस्थान पर्यन्त पाइये हैं । मार्गणा – **गति** – ४, **जाति** – पंचेन्द्रिय, **काय** – त्रस, **योग** – १५, **बेद** – ३, **कषाय** – २१, **ज्ञान** – सुज्ञान ५, **संयम** – ७, **दर्शन** – ४, **लेश्या** – ६, **भव्य** – १, **सम्यक्त्व** – स्वकीय १, **संज्ञी** १, **आहारक** अनाहारक इनविषैं पाइये ।

इति श्रीभावदीपिका का क्षायिक भावाधिकार विषैं क्षायिक सम्यक्त्वभाव अंतराधिकार पूर्णभया ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

क्षायिक चारित्रभाव अंतराधिकार

(दोहा)

मोह अरी को क्षय करन, ध्याये सिद्ध सुधीर ।
मार लियो क्षण एक में, नमूं महँत बरबीर ।।१।।

अब क्षायिक चारित्रभावाधिकार लिखिये हैं –

चारित्रमोह की इक्कीस प्रकृतिनि का क्षय होते संते जो भाव निपजै, ताका नाम क्षायिक चारित्र भाव कहिये । चारित्र मोह की क्षपणा विषैं षोड़श करण होय हैं – १. अधःकरण, २. अपूर्वकरण, ३. अनिवृतिकरण, ४. बंधापसरणकरण, ५. सत्वापसरणकरण, ६. क्रमकरण, ७. अष्ट कषाय षोड़शप्रकृतिनि का क्षपणाकरण, ८. देशघातिकरण, ९. अन्तरकरण, १०. संक्रमणकरण, ११. अपूर्वस्पर्धककरण, १२. बादरकृष्टिकरण, १३. सूक्ष्मकृष्टिकरण, १४. कृष्टिअनुभवनकरण, १५. ज्ञानावरणादिक्षपणाकरण १६. योगनिरोधकरण ।

मोह की सप्त प्रकृतिनि का नाश करि क्षायिक सम्यग्दृष्टी चारित्रमोह की इक्कीस प्रकृतिनि के सत्व सहित होय – अप्रत्याख्यानचतुष्क, प्रत्याख्यानचतुष्क, संज्वलनचतुष्क, हास्यादिक ६, बेद ३ । सो जीव संसार में जघन्य रहै तो अंतर्मुहूर्त, अधिक न रहै । अर उत्कृष्ट रहै तो अंतर्मुहूर्त सहित अष्ट वर्ष करि हीन दोय कोड़ि पूर्व अधिक तेतीस सागर कालप्रमाण रहै, अधिक न रहै । सो जीव कोई काल में चारित्रमोह की क्षपणा के योग्य जे विशुद्ध परिणाम, तिनकरि सहित होय ।

सो क्षपक कैसें होय ?

मुनिपद को अंगीकार करि अप्रमत्तगुणस्थान को प्राप्त होय । बहुरि अप्रमत्त सौं प्रमत्त विषैं हजारों बार गमनागमन करै । महामुनि, सो ही भये चक्रवर्ती, सो यथाख्यताचारित्ररूप एक छत्रराज करने के अर्थि क्षपकश्रेणीरूप दिग्विजय करने के सन्मुख होते संते प्रथम सातिशय अप्रमत्त गुणस्थान विषैं अधःकरणरूप प्रस्थान करैं हैं ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि कैसा है क्षपणाकरण ? अति विशुद्ध है परिणाम जाके, चार मन के योगनि विषैं कोई एक मन योग, चार वचन योगनि विषैं कोई एक वचन योग होय, अर औदारिक काययोग होय। बहुरि कैसा है ? संज्वलन चार कषायनि के विषैं कोई एक हीयमान कषाय होय। बहुरि कैसा है ? बहुत मुनिन कों प्रसिद्ध उपदेश करता श्रुतज्ञान उपयोग होय। बहुरि शुक्ल लेश्या होय। बहुरि तीन वेदनि विषैं कोई एक वेद होय। (दीक्षा)द्रव्यपुरुषबेद ही होय। बहुरि कैसा होय ? दर्शनमोह की प्रकृति ३, अनंतानुबंधीचतुष्क, भुज्यमान मनुष्यायु बिना तीन आयु, ऐसी दश प्रकृतिनि के सत्व रहित होय। बहुरि यहां कर्मनि की स्थितिसत्व अंतःकोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण होय। बहुरि अनुभाग प्रशस्तप्रकृतिनि का गुड़, खन्ड, शर्करा, अमृत रूप चतुःस्थानक अर अप्रशस्तप्रकृतिनि विषैं घातिया का दारु, लता, अर अघातिया का निंब, कांजीर रूप द्विस्थानक सत्व होय है। प्रदेश अजघन्य व अनुत्कृष्ट है। इत्यादिभावनिरूप सामग्री युक्त जीव चारित्रमोह की क्षपणा को आरंभ करै है, सो प्रथम अधःप्रवृत्तिकरण करै है।

तहां प्रशस्त प्रकृतिनि का समय-समय प्रति अनंतगुणा क्रम लिये विशुद्धता की वृद्धि करि वर्धमान होय है। अर समय-समय अनंतगुणां क्रम लिये चतुःस्थानक अनुभागबंध करै हैं। अप्रशस्त प्रकृतिनि का समय-समय प्रति अनन्तवां भाग क्रम लिये द्विस्थानक अनुभागबन्ध करै है। बहुरि पूर्व स्थितिबन्ध में पल्य का संख्यातवां भाग प्रमाण मात्र स्थितिबन्ध को घटाय एक अन्तर्मुहूर्त काल पर्यन्त समय-समय प्रति समान बन्ध होय, सो यह एक स्थितिबन्धापसरण भया। ऐसे संख्यात हजार स्थितिबंधापसरण अधःप्रवृत्तिकरण विषैं होय हैं।

आगै अपूर्वकरण का वर्णन करिये हैं। यहां पृथक्त्ववितर्क वीचार नामा शुल्कध्यान को प्रथम पाद प्रगट होय है। बहुरि यहां गुणश्रेणी, गुणसंक्रमण, स्थितिखंडन, अप्रशस्तप्रकृतिनि का अनुभागखन्डन – ये चार आवश्यक होय हैं। बहुरि अधःप्रवृत्तकरण के अन्तसमय विषैं जो स्थितिबन्ध होता था, तातैं पल्य का असंख्यातवां भाग घटता और ही स्थितिबंधापसरण को प्रारंभ होय है।

बहुरि गुणश्रेणी आयाम का प्रमाण अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्पराय, क्षीणकषाय इन चार गुणस्थान का मिलाया हुवा काल के प्रमाण तैं साधिक है। सो उदयावली तैं बाह्य गलितावशेषरूप जो यहु गुणश्रेणीआयाम, ता-

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

विषैं गुणश्रेणी का अपकर्षण किया द्रव्य का असंख्यातगुणा क्रम ने लिये समय-समय विषैं निक्षेपण करै है।

बहुरि गुणसंक्रमण करै है, जिन प्रकृतिनि का यहां बंध न पाइये, ऐसी जे अप्रशस्त प्रकृति, तिनका द्रव्य समय-समय असंख्यातगुणा क्रम लिये, तिनका यहाँ बंध पाइये। ऐसी जे प्रशस्त प्रकृति, तिनके विषैं संक्रमण करै है, तद्रूप परिणमै है। जैसें असातावेदनीय का द्रव्य सातावेदनीयरूप परिणमै, ऐसें ही अन्य प्रकृतिनि का जानना। बहुरि स्थितिकांडकघात करै है। ताका आयाम पल्य के संख्यातवें भाग मात्र है, तथापि जघन्य तैं उत्कृष्ट संख्यातगुणा है।

बहुरि अनुभागकांडकघात करै है। एक स्थितिकांडकघात के काल विषैं संख्यात हजार अनुभागकांडकघात होय हैं। सो एक-एक अनुभागकांडक विषैं अनुभागसत्व अनंतवें भाग अप्रशस्त प्रकृतिनि का खंड करि राखै है। प्रशस्त प्रकृतिनि का अनुभागखंड नेम तैं न होय है, जातैं विशुद्ध परिणामनि तैं शुभप्रकृतिनि के अनुभाग का घटावना संभवै नाहीं।

अब अनिवृत्तिकरण कहिये हैं – इहां अपूर्वकरण के अन्त समय तैं घटता और ही स्थितिकांडक, अनुभागकांडक घात होय हैं। बहुरि यहाँ अप्रशस्त प्रकृतिनि को उपशम, निधत्ति, निकाचना इन तीन करणनि का अभाव भया। अब सर्व ही कर्म उदीरण, संक्रमण, उत्कर्षण, अपकर्षण करने योग्य भये।

अब क्रमकरण कहिये हैं – अनिवृत्तिकरण विषैं संख्यात हजार स्थितिबंधापसरण भये जहाँ अनिवृत्तिकरण के काल का संख्यात बहुभाग तो व्यतीत होय अर एक संख्यातवां भाग अवशेष रहै, तहां कर्मनि का स्थितिबंध असंज्ञी पंचेन्द्रिय समान हजार सागर होय। बहुरि संख्यात हजार स्थितिबंधापसरण होतां-होतां चौन्द्रिय प्रमाण सौ सागर, तेंद्रिय प्रमाण पचास सागर, बेंद्रिय प्रमाण पचीस सागर, एकेंद्रिय प्रमाण एक सागर हो है। तहाँ पर्यन्त तो कर्मनि का स्थितिबंध पूर्वोक्त प्रकार भया। दर्शनमोह तैं चारित्रमोह का चार सातवां भाग मात्र, ज्ञानावरणादि चार प्रकृतिनि का तीन सातवां भाग मात्र, नामगोत्र का दोय सातवां भाग मात्र अनुक्रम था, सो भया; जातैं कर्मनि की उत्कृष्ट स्थितिबंध दर्शनमोह की सत्तर कोडाकोडी सागर की बांधै। तहां नेम करि चारित्रमोह की चालीस कोड़ाकोड़ी; ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, अन्तराय चार कर्मनि की तीस कोडाकोडी; नाम-गोत्र की बीस

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

कोडाकोड़ी सागर बंधै। ताही अनुसार जहां दर्शनमोह की जेती स्थितिबंध होय, ताकों सात का भाग दीजै जो प्रमाण आवै, ताकों सात करि गुणै जो प्रमाण आवै, तितनी दर्शनमोह की; अर चार करि गुणें जो प्रमाण आवै, तितनी चारित्रमोह की, अर तीन करि गुण्यां जो प्रमाण होय, सो तीसयनि[१] की; अर दोय करि गुण्यां जो प्रमाण आवै, सो बीसयनि[२] की स्थितिबंध होय है; सो यहां पर्यन्त तो ऐसा ही अनुक्रम रहा।

यहां पीछे संख्यात हजार स्थितिबंधापसरण और भये, तहां बीसयन का पल्य मात्र स्थितिबंध भया, तहाँ तीसयन का ड्योढ़ा (मोह का) चारित्र मोह का दूना ऐसें अनुक्रम सों स्थितिबंध होने लगा। ऐसे अनेक प्रकार अनुक्रम पलटि स्थितिबंध होय है। ऐसा ही स्थितिसत्व का अनुक्रम होय है। बहुरि जहाँ पल्य का संख्यातवां भाग प्रमाण स्थितिबंध होय, तहां असंख्यात समय प्रबद्धनि की उदीरणा होय है।

आगै क्षपणाधिकार कहिये हैं – अनिवृत्तिकरण के क्षपणा भागन विषैं प्रथम भाग में स्त्यानगृद्धि, निद्रा-निद्रा, प्रचला-प्रचला ए तीन तो दर्शनावरण की; नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, तिर्यंग्गति, तिर्यंग्गत्यानुपूर्वी, एकेंद्रिय, बेंद्रिय, तेंद्रिय, चौंद्रिय, ए चार जाति अर आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म, साधारण ये तेरह नाम कर्म की, ऐसे सोलह प्रकृति के सत्व का अभाव भया।

बहुरि दूसरे भाग में अप्रत्याख्यान-प्रत्याख्यान चारित्रमोह की आठ प्रकृति के सत्व का अभाव भया।

बहुरि देशघातिकरण कहिये हैं – मनःपर्ययज्ञानावरण कूं आदि देय बारह प्रकृतिनिपूर्वै द्विस्थानगत सर्वघाति अनुभागबन्ध होता था, अब द्विस्थानगत देशघाति बन्ध होने लगा।

आगैं अन्तरकरण कहिये हैं – देशघाती करण तैं परे संख्यात हजार स्थितिकांडक भयें चार संज्वलन अर नव नौ कषाय, इन तेरह प्रकृतिनि का अन्तर करै है, औरनि का अन्तर न होय है। नीचले-ऊपरले निषेकनि कों छोड़ि, अन्तर्मुहूर्तमात्र बीच के निषेकनि का अभाव करना, सो अन्तरकरण जानना। सो एक स्थितिकांडकोत्करण मात्र काल विषैं अन्तर कों पूर्ण करै हैं। संज्वलन चतुष्क विषैं कोई एक कषाय, अर

---

१. ज्ञानावरण, वेदनीय और अंतराय की, २. नाम और गोत्र कर्म की।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तीन वेदनि विषैं कोई एक वेद सहित श्रेणी मांडै, ते तौ उदयप्रकृति हैं, तिनकी तो अन्त मुंहूर्त प्रमाण प्रथम स्थिति पावै, अवशेष जिनका उदय न पाइये ऐसी ग्यारह प्रकृति, तिनकी आवलीमात्र प्रथम स्थिति स्थापै, सो वर्तमान समय सम्बन्धी निषेक तैं लगाय प्रथम स्थिति प्रमाण निषेकनि कों नीचे छोड़ि, तिनके ऊपर के निषेकनि का अन्तर करै। तिन अन्तररूप निषेकनि के द्रव्य कों अन्तरकरण काल के प्रथम समय तैं लगाय अन्त समय पर्यन्त समय-समय असंख्यातगुणां क्रमनै लिया अंतरकरै है। तिन कितनेक प्रकृतिनि के द्रव्य कों प्रथम स्थिति विषैं दे है। अर कितनेक प्रकृतिनि के द्रव्य कों अन्तरकरण के अन्त समय के अनन्तरवर्ती समय तैं लगाय उपरितन स्थिति विषैं दे है। अर कितनेक प्रकृतिनि का द्रव्य प्रथम स्थिति वा उपरितन स्थिति दोनों विषैं दे है। अन्तर्मुहूर्त काल में अन्तर्मुहूर्त प्रमाण अन्तरायाम मोहनीय का द्रव्यरहित करै।

अब संक्रमणकरण कहिये हैं – यहां सात करण का प्रारम्भ युगपत् होय है। मोहनीय का बन्ध और उदय तो केवल लताभागरूप होता भया। दोय करण तो ए भये अर मोहिनीय का स्थितिबन्ध पल्य का असंख्यातवां भाग प्रमाण होता था, सो घटि संख्यात वर्ष मात्र होने लगा। बहुरि मोहनीय की प्रकृतिनि का पूर्वैं जहां तहां सजाती प्रकृतिनि विषैं संक्रमण होता था, सो आनुपूर्वी संक्रमण होने लगा। बहुरि पूर्वैं लोभ का अन्य प्रकृतिनि विषैं संक्रमण होता था, अब न होय। बहुरि नपुंसक वेद को आव्रतसंक्रमण करि याको अन्य प्रकृतिरूप परिणमाय नाश करने का उद्यमी भया। बहुरि पूर्वैं कर्म बंधै पीछे आवली व्यतीत भये ही उदीरणा होती थी, अब छह आवली व्यतीत भये पीछे ही उदीरणा होय। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद का द्रव्य तो पुरुषवेद विषैं संक्रमण होय है। पुरुषवेद, छह हास्यादिक ऐसैं सात नोकषायन के द्रव्य संज्वलन क्रोध विषैं संक्रमण होयहै। बहुरि क्रोध मान विषैं, मान माया विषैं, माया का लोभ विषैं संक्रमण होय है। ऐसैं प्रकृतिनि का द्रव्य अन्य-अन्य प्रकृतिन विषैं संक्रमण होय आप नाश को प्राप्त होय है; येहु आनुपूर्वी संक्रमण जानना। बहुरि जहाँ बत्तीस वर्ष मात्र स्थितिबन्ध होने लागै,तहां स्थितिबन्धापसरण अन्तर्मुहूर्तमात्र है।

बहुरि अपूर्वस्पर्धकविधान कहिये – कर्मरूप परिणये जे पुद्गलपरमाणू, सो एक-एक परमाणु विषैं अपने-अपने रस देने की शक्ति के अविभाग प्रतिच्छेद अनन्तानन्त हैं, परन्तु अधिक हीन प्रमाण कों लिये हैं, सर्व ही परमाणुनि विषैं अविभाग

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रतिच्छेद समान नाहीं; तातैं अनेक नानाप्रकार गणनारूप शक्ति का अविभाग प्रतिच्छेद कों धरैं परमाणु, सो वर्ग कहिये। तहां समान अविभाग प्रतिच्छेद के धारक वर्गनि के समूह का नाम वर्गणा कहिये; जातैं एक-एक वर्गणा विषैं अनंतानंत वर्ग हैं। वर्गणानि के समूह का नाम स्पर्धक कहिये। एक-एक स्पर्धक विषैं अनन्त वर्गणा हैं। जिस वर्ग विषैं घाट सौं घाट शक्ति के अविभाग प्रतिच्छेद होंय, सो जघन्यवर्ग कहिये। जघन्यवर्ग के समूह का नाम जघन्यवर्गणा कहिये। जघन्यवर्ग तैं एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद जिन वर्गणि विषैं बधता होय, तिनके समूह का नाम द्वितीयवर्गणा कहिये। बहुरि उसतैं भी एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद जिन वर्गणि विषैं बधता होय, तिनके समूह का नाम तृतीय वर्गणा कहिये। ऐसै अनन्त वर्गणा होय। बहुरि जहां जघन्य वर्गणा विषैं जितने अविभाग प्रतिच्छेद कों धरै वर्ग हैं, तिनतैं दूणां अविभाग प्रतिच्छेद जिन वर्गनि विषैं पाईये, तिनके समूह कौं धारैं द्वितीय स्पर्धक की जघन्य आदि वर्गणा हैं।

इहांतैं आगै दूसरे स्पर्धक का आरम्भ भया। यहां पहली-पहली प्रथम स्पर्धक की वर्गणा कहिये – ऐसें ही द्विगुणां, तिगुणां, चौगुणां, पंचगुणां इत्यादि प्रमाण कों धर्यां जघन्य वर्गनि तैं जहां-जहां वर्गनि का समूहरूप वर्गणा होय, तहां-तहां अन्य-अन्य स्पर्धक जानना। ऐसै प्रथम स्पर्धक का नाम जघन्यस्पर्धक कहिये। अर अन्त के स्पर्धक का नाम उत्कृष्ट अनुभाग कों धरैं उत्कृष्ट स्पर्धक कहिये। मध्य के अनंत भेद हैं। ऐसें एक-एक स्पर्धक विषैं अनंती वर्गणा हैं। अर एक-एक वर्गणा विषैं अनंते वर्ग हैं। अर एक-एक वर्ग विषैं अनंतानंत शक्ति के अविभाग प्रतिच्छेद हैं। जो प्रथम जघन्य वर्गणां के वर्ग विषैं जो अविभाग प्रतिच्छेद हैं, तासों ताही स्पर्धक की उत्कृष्ट वर्गणा का वर्ग विषैं अनंतगुणां अविभाग प्रतिच्छेद हैं। बहुरि जो प्रथम जघन्यवर्गणा विषैं अविभाग प्रतिच्छेद पाइये, तासों अनंत गुणा अविभाग प्रतिच्छेद ताही स्पर्धक की अंत की उत्कृष्टवर्गणा विषैं पाइये। बहुरि जघन्यस्पर्धक विषैं जो अविभागप्रतिच्छेद जितने प्रमाण कूं लियां होय, तासों अनंतगुणां अविभागप्रतिच्छेद अंत के उत्कृष्टस्पर्धक विषैं पाइये। बहुरि वर्गणा-वर्गणा प्रति वर्ग जघन्य सों लेय उत्कृष्टपर्यंत चय-चय प्रमाण घटता-घटता है। ऐसै स्पर्धकरूप शक्ति कौं धरैं कर्म, सर्व संसारी जीवनि के सत्व विषैं तिष्ठैं हैं। ऐसा तो अपूर्वस्पर्धक का स्वरूप है।

बहुरि अपूर्वस्पर्धक इहां करै हैं – चारों संज्वलन कषायनि का युगपत् अपूर्वस्पर्धक देशघाती जघन्यस्पर्धक तैं नीचे अनंतगुणां घटता अनुभागरूप करै है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पूर्वस्पर्धकनि विषैं जघन्यस्पर्धक की ज्यों जघन्यवर्गणा थी, ताकै नीचै घटता अनुभाग लिये कोई वर्गणा थी नाहीं। सो ही अब यहां जघन्यस्पर्धक की जघन्यवर्गणा के नीचे अपूर्वस्पर्धकनि की वर्गणानि की रचना भई। तहां पूर्वस्पर्धकनि की जघन्यवर्गणा तैं भी अपूर्वस्पर्धकनि की उत्कृष्ट वर्गणा विषैं अनुभाग के अविभाग प्रतिच्छेद अनंतवां भागमात्र हैं। ऐसें अपूर्वस्पर्धक अनंतप्रमाण करै है। जघन्य अपूर्वस्पर्धक तैं उत्कृष्ट अपूर्वस्पर्धक विषैं अनुभाग (अविभाग) के प्रतिच्छेद अनंतगुणे जानने। इति अपूर्व-स्पर्धक करण।

बहिर बादरकृष्टिकरण कहिये हैं – यहां अपूर्वस्पर्धकनि कों भोगवतां संतां जीव बादरकृष्टि करै है। जहाँ कर्मनि का अनुभाग (क्रमकरि) हीन करिये, सो कृष्टि कहिये। पूर्व-अपूर्व स्पर्धकनिरूप तिष्ठता जो सत्ता में द्रव्य, ताकों अपकर्षण भागहार का भाग देई, द्रव्य का अपकर्षण करि, ताकों पल्य के असंख्यातवें भाग का भाग देइ बहुभागमात्र द्रव्य की तो बादरकृष्टि करै है अर एक भागमात्र द्रव्य पूर्व अपूर्व-स्पर्धकरूप परिणमावै है। सो एक स्पर्धक विषैं जो वर्गणानि का प्रमाण पाईये, ताका (घटता ऐसा) अनंतवां भागमात्र कृष्टि करै है, सो कृष्टि-कृष्टि विषै द्रव्य चय-चय प्रमाण घटता है। अर अनुभाग कृष्टि-कृष्टि प्रति अनंतगुणां घटता है। जो अपूर्व-स्पर्धक जघन्य विषैं अनुभाग है। ताके अनंतवें भाग कृष्टि अनुभाग उत्कृष्ट बादर कृष्टि विषैं हैं, ताके अनंतवें भाग अनुभाग जघन्य बादर कृष्टि विषैं है, सो कृष्टिन का प्रमाण अनंत जानना। इहां चारों कषायनि विषैं एक-एक कषायनि के विषैं तीन-तीन तो संग्रह कृष्टि है। अर एक-एक संग्रह कृष्टि विषैं अंतर कृष्टि अनंतानंत हैं। तहा नीचे ही नीचे लोभ की कृष्टि है। ताके ऊपर माया की अर ताके ऊपर मान की अर ताके ऊपर क्रोध की कृष्टि पाइये हैं, ऐसी कृष्टि रचना होय है। बहुरि नोकषाय के द्रव्य की कृष्टि होय है, सो क्रोध की कृष्टिनि विषैं जुड़ी हुई है। जातैं नोकषायनि का सर्व द्रव्य संज्वलन क्रोधरूप संक्रमण भया है। बहुरि जो जीव क्रोध के उदय सहित श्रेणी मांडै, सो तो बारह संग्रह कृष्टि करै। अर जो मान के उदय सहित श्रेणी चढ़े, सो क्रोध की तीन संग्रह कृष्टि नाहीं करै। तातैं क्रोध का पहले ही संक्रमण करि क्षय करै है। बहुरि तैसें ही जो माया के उदय सहित श्रेणी चढ़ै, ताके क्रोध-मान का पहले ही संक्रमण करि क्षय होय जाय है। तातैं दोय कषायन की क्षय ही संग्रह कृष्टि करै। बहुरि जो लोभ के उदय सहित श्रेणी चढ़ै, ताके क्रोध, मान, माया का पहले ही संक्रमण करि क्षय होय। तातैं एक लोभ की ही

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तीन संग्रहकृष्टि होय हैं। तहाँ जे तीन संग्रहकृष्टि होय, तिन ही विषैं कृष्टि प्रमाण का विभाग यथासंभव जानना। तैसे ही क्रोध की आदि कृष्टि ते लगाय लोभ की अन्त कृष्टि पर्यन्त अनुभाग अनंतगुणां घटता जानना। अर लोभ अन्त कृष्टि ते क्रोध की आदि कृष्टि पर्यन्त अनुभाग अनंतगुणां बधता होय है।

अब बादरकृष्टि अनुभवन अर सूक्ष्मकृष्टिकरण कहिये – यहाँ बादर कृष्टि कों भोगवै है। द्वितीय स्थिति के निषेकनि विषैं तिष्ठ कृष्टिनि कों प्रथम स्थिति के निषेकनि विषैं प्राप्त करि भोगवै। प्रथम समय विषैं चार संज्वलनरूप मोह का स्थितिबंध चार मास है; अर स्थितिसत्व आठ वर्षमात्र है। अर तीन घातियानि का संख्यात हजार वर्षमात्र, अर तीन अघातियानि का असंख्यात हजार वर्षमात्र इहां स्थितिसत्व जानना। इहां पीछे बादरकृष्टि कों भोगवता जीव पूर्वोक्त अनेक विधान करि कर्मनि का चारों प्रकार सत्व घटाय, जो क्रोध कषाय अर पुरुषवेद सहित श्रेणी मांडै, सो प्रथम नपुंसकवेद के द्रव्य कों पुरुषवेदादिक के द्रव्य में संक्रमण करि क्षय कों प्राप्त करै हैं। तैसें ही पीछे स्त्रीवेद कों, पीछें छह हास्यादिक कों, पीछे पुरुषवेद कों, पीछे संज्वलन क्रोध कों, पीछे संज्वलन मान कों, पीछे संज्वलन माया कों क्षय करै है। अर जो स्त्रीवेद सहित श्रेणी मांडै, सो भी पहले नपुंसकवेद, पीछे स्त्रीवेद, पीछे पुरुषवेद को खिपावै है। अर जो नपुंसकवेद सहित श्रेणी मांड़ै, सो तो पहली स्त्रीवेद कों, पीछे नपुंसक वेद कों, पीछे पुरुषवेद कों खिपावै है। ऐसैं और भी अनेक विशेष हैं; सो अन्य ग्रंथ तैं जानना।

बहुरि लोभ की द्वितीय बादरकृष्टि भोगवतां जीव लोभ की सूक्ष्मकृष्टि करै है, सो भी अनंत प्रमाण करै है। लोभ की बादरकृष्टि जघन्य जो अनुभाग है, ताके अनंतवें भाग अनुभाग उत्कृष्ट सूक्ष्मकृष्टि विषैं होय है। ताके भी अनंतवें भाग अनुभाग जघन्य सूक्ष्मकृष्टि विषैं होय है। ऐसैं अनिवृत्तिकरण के अंतपर्यन्त सूक्ष्मकृष्टि करै है। बहुरि अनिवृत्तिकरण की समाप्ति करि सूक्ष्म साम्पराय गुणस्थान कों प्राप्त होय है। तहाँ सूक्ष्मकृष्टि कों प्राप्त भयो जो लोभ, ताकों अनुभवै है। बहुरि अन्तर्मुहूर्तप्रमाण सूक्ष्मसाम्पराय के काल विषैं सूक्ष्म लोभ नैं भोगवतो संतो सूक्ष्मसाम्पराय संयमवर्ती जीव अन्त विषैं लोभ के सत्व कों सर्व प्रकार अभाव करि क्षीण कषाय गुणस्थान कों प्राप्त होय है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि समस्त चारित्रमोह के क्षय होते अपने काल विषैं सो जीव क्षीण भये हैं द्रव्य-भावरूप समस्त कषाय जाकै, ऐसा क्षीणकषाय होय है ।

सो स्थिति-अनुभागबंध रहित योग निमित्त तैं प्रकृति-प्रदेशबंध जाकै सातावेदनीय का संभव है, सो ईर्यापथबंध है । प्रथमसमय विषैं बंधी अनन्तर समय विषैं निर्जरै है । यहां छह कर्मनि की गुणश्रेणी निर्जरा होय है; सो सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान तैं असंख्यात गुणे द्रव्य का अपकर्षण करि गुणश्रेणी आयाम विषैं असंख्यात गुणक्रम तें लिया द्रव्य दीजिए है । अर जितना द्रव्य प्रथम समय अपकर्षण करै, तितना द्रव्य द्वितीयादि समय समान अपकर्षण करै; जातैं यहां परिणाम समान पाइये हैं, तातैं यहां गुणश्रेणी और ही होय है । याकै गुणश्रेणी आयाम प्रथम गुणश्रेणी आयाम का संख्यातवां भाग क्षीणकषाय गुणस्थान का काल सो संख्यातवांभाग अधिक है । अर स्थितिसत्व घातिया की तीन प्रकृति के अंतर्मुहूर्त मात्र है । सो क्षीणकषाय के काल तैं संख्यातगुणा है । अर आयु विना तीन अघातियानि का स्थिति सत्व असंख्यात वर्षमात्र है । ऐसा जीव यथाख्यातचारित्र कों ग्रहण होते संते सिद्ध-समान आत्मीक सुख का भोक्ता होय है ।

बहुरि क्षीणकषाय गुणस्थान का काल का संख्यातभाग कीजे, तहां बहुभाग पर्यन्त तौ पहलो शुक्लध्यान पृथक्त्ववितर्कवीचार नामा वर्तै है । बहुरि संख्यातवां एक भाग विषैं एकत्ववितर्क अवीचार नामा दूसरा शुक्लध्यान प्रवर्तै है ।

इहां तीन घातियानि के अन्त कांडक को ग्रहण करै है । यहां क्षीण कषाय काल जितना अवशेष रहा, तिस विना तीन घातियानि का अवशेष रही समस्त स्थिति को अन्त काण्डक करि घाते हैं । ताके द्रव्य कों लांछित करै है; ताकों क्षीणकषाय काल प्रमाण अवशेष रह्या निषेक, तिनविषैं काल करि समय-समय असंख्यातगुणा क्रम लिये निपेक्षण करिये है । तहां अन्त की फालि का पतन करि अन्तकाण्डक की समाप्ति होते कृतकृत्य छद्मस्थ कहिये ।

अवशेष आवलीमात्र निषेक करै है; तिनकों एक-एक समय विषैं एक-एक निषेक कों भोगवतां संतां क्षीणकषाय के दोय समय अवशेष हैं; तहां निद्रा, प्रचला

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

दोय कर्म के सत्व अर उदय का व्युच्छेद भया। यहां शुक्लध्यान होते भी अव्यक्त निद्रा वा प्रचला का उदय संभवै था; सो भी नाश भया।

बहुरि अन्त के चरम समय पंच प्रकार ज्ञानावरण, अर चार प्रकार दर्शनावरण, पंच प्रकार अन्तराय इन चौदह कर्मनि का सत्व अर उदय का अभाव भया। बहुरि क्षीणकषाय के प्रथम समय तैं लगाय शरीर विषैं तिष्ठते निगोद जीव अनन्ते मरे हैं। तातैं द्वितीयादि समयनि विषैं अधिक-अधिक मरें हैं। वा क्षीणकषाय के पिछले भागन विषैं असंख्यातगुणे क्रम नै लिया जीव मरे हैं। तहां अन्त के समय सर्व निगोद जीवनि का अभाव होतें केवली का शरीर निगोद रहित होय है। यहां शुक्लध्यान के बलकरि तिनके निपजने का निरोध ही है। अर पहली उपजे थे, ते स्वयमेव अपने आयु के नाश होते मरे हैं। यावत् निगोद जीवनि का जघन्य आयु मात्र क्षीणकषाय का काल अवशेष रहै, तावत् निगोद जीव तहां उपजैं भी हैं अर पूर्व उपजे जीव मरे भी हैं। तहां पीछे फेर उपजैं नाहीं, आयुनाश तैं केवल मरे ही हैं। ऐसैं क्षीणकषाय के अन्त समय विषैं घातिया कर्मनि का नाश करि ताके अनन्तर सयोग केवली जिन ही सर्वज्ञ सर्वदर्शी होय हैं।

घातिया कर्मनि के चतुष्टय का नाश होतें अनन्तचतुष्टय की उत्पत्ति होय है – अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तसुख, अनन्तवीर्य ऐसे विशेष गुणन कों प्राप्त होय है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण इन दोनों का नाश करि केवलज्ञान अर केवलदर्शन होय है।

सो कैसा है केवलज्ञान ?

इन्द्रिय वा मन वा प्रकाशादिक के सहाय रहित है। सूक्ष्म, अन्तरित, दूर आदि सर्व पदार्थनि कों प्रत्यक्ष युगपत् जानैं हैं। बहुरि तैसैं ही केवलदर्शन करि देखैं हैं। जैसे चन्दबिम्ब विषैं शीत स्पर्श अर शीत वर्णपनौ युगपत हैं; तैसे जिनेंन्द्र विषैं केवल ज्ञान, केवलदर्शन युगपत् होय है। बहुरि वीर्यान्तिराय कर्म के क्षय करि अनन्तवीर्य होय है। समस्त ज्ञेय पदार्थनि कों सदाकाल जानने तें भी खेद नाहीं उपजे है। अर काहू करि घाता न जाए ऐसी सामर्थ्य कों धारैं हैं।

बहुरि नव नोकषाय अर दानादि अन्तराय चतुष्क के क्षयतैं अनंत सुख होय है। कैसा सुख होय है ? जो अन्यत्र ऐसा न पाइये, तातैं अनोपम्य है। बहुरि काहू

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

करि बाधित नाहीं, तातैं अव्याबाध है। बहुरि आत्माकर उत्पन्न है, तातैं आत्म-समुत्थ है। बहुरि इन्द्रिय, विषय तथा प्रकाशादिक की अपेक्षा रहित है, तातैं निर-पेक्ष है। ऐसा ज्ञान-वैराग्य, ताकी उत्कृष्टता कों प्राप्त भया जो केवली जिन, अनाकुल दयालु है लक्षण जाका, ऐसा अनन्तसुख प्राप्त होय है। यहां नव क्षायिकभाव सम्पूर्ण प्रगट होय हैं।

पहले तो चौथे वा पांचवे वा छठे वा सातवें गुणस्थान विषैं तीन दर्शन मोह और अनंतानुबंधी को चतुष्क इन सप्त प्रकृतिनि का क्षय करि क्षायिकसम्यक्त्व भाव भया था; सो तो यहां परमावगाढ़ को प्राप्त भया होय है। बहुरि त्रिकालवर्ती सर्वत्र तिष्ठते ऐसेद्रव्य-गुण-पर्याय, तिनको युगपत जाने ऐसे केवलज्ञान, केवलदर्शन ए दोय भाव प्रगट भये।

बहुरि इक्कीस प्रकृतिरूप संपूर्ण चारित्रमोह के क्षय तैं संपूर्ण अपने स्वभाव विषैं स्थिरीभूत ऐसा क्षायिक चारित्रभाव भया।

बहुरि पंच क्षायिक लब्धिभाव प्रगट भया – दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य। बहुरि त्याग दिये हैं परद्रव्य अर परभावस्वभाव जानै, वा अनंत संसार छूटने का करै है उपदेश, सो क्षायिक दानलब्धि कहिये। बहुरि भया है अनंतसुख का लाभ, सो क्षायिक लाभलब्धि कहिये। बहुरि अनुभवै हैं, आस्वादें हैं, समय-समय स्वाभाविक आत्मजन्य सुख, सो क्षायिक भोगलब्धि कहिये। बहुरि ताही सुख को बारम्बार निरंतर आस्वादैं हैं, धारै हैं, सो क्षायिक उपभोगलब्धि कहिये। बहुरि अंतररहित शक्ति को धारैं हैं, सो क्षायिक वीर्यलब्धि कहिये। ऐसै नव क्षायिक भाव प्रगट भया।

यहां कोई आशंका करै कि केवली के असातावेदनीय के उदय तैं क्षुधादि परीषह पाइये हैं, तातैं आहारादि क्रिया संभवै है?

ताका उत्तर – नोकषाय अर अन्तराय चतुष्क इनके उदय बल करि दुःख-रूप असातावेदनीय आदि अशुभ प्रकृतिनि का उदय करि उपजा ऐसा इन्द्रियनि के द्वारा होय खेद – आकुलता, ताका नाम दुःख है। सो केवली के नाहीं संभवै है। बहुरि जो नोकषाय का उदय अर अंतराय चतुष्क का क्षयोपशम के बल करि साता-वदनीय आदि शुभ प्रकृतिनि के उदय करि उपजा जो इन्द्रियनि के संतोष – किछु निराकुलता, ताका नाम इन्द्रियजनित सुख है। सो भी केवली के नाहीं संभवै है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

जातैं केवली के राग-द्वेष नष्ट भया है, बहुरि इन्द्रियजनित ज्ञान भी नष्ट भया है; तातैं साता-असातावेदनीय के उदय करि निपज्या जो इन्द्रियजनित ऐसा सुख-दुख, सो केवली के नाहीं है। इस हेतु तें यह सिद्ध भया कि जो कारण के सद्भाव तैं केवली के असातावेदनीय के उदय तैं उपजे ऐसे परीषह उपचार मात्र कहिये हैं, तथापि तिनकें दुःख नाहीं व्यापै, जातें घातिया कर्मनि के उदय के बल तैं सुख-दुःख व्यापे है। जैसे अपघात, परघात नामा नामकर्म के उदय तैं भी घातिकर्म के उदय बल बिना अपना वा अन्य का घात न होय है। जो ऐसे न होय तो परीषह के निमित्त तैं केवली को दुःख होय। तब लोभ के अर्थ कार्य करै तो जैसे मूल नासै है, तैसे एहू कार्य भया; सो असंभव है। तातें "केवली के आहार है" ऐसा वचन असंभव है।

बहुरि केवली के एक समय मात्र स्थिति लिये सातावेदनीय का बंध होय है, सो उदयरूप ही है। तातें ताकै असाता का उदय है, सो भी साता रूप होय परिणमे है। तातैं यहां परमविशुद्धता करि साता के अनुभाग की बहुत अधिकता पाइये हैं; तातें असाताजनित क्षुधादि परीषह की वेदना नाहीं है। वेदना विना ताका प्रतिकार रूप आहार कैसे संभवै ? अर केवली को आहारक कहिये हैं, सो औदारिक शरीर संबंधी जो समय प्रबद्ध बांधै है; ग्रहण करै है, सो नोकर्म वर्गणा का ग्रहण ही का नाम आहारमार्गणा है, ताका सद्भाव केवली के है। जातें उज्ज, लेप, मानस, कवल, कर्म, नोकर्म भेद तैं आहार छह प्रकार है, तिन विषैं कर्म-नोकर्म ए दोय प्रकार आहार केवली के संभवे है।

अब केवली के समुद्घात कब होय है, सो कहैं हैं — ईर्यापथबंध के कारण ऐसा योग, तिसकरि सहित केवली तीर्थंकर भया, सो समोशरण विषैं मंडप के मध्य तीन पीठ के उपर जो सिंहासन, तिस विषैं विराजमान अष्ट प्रातिहार्य, चौंतीस अतिशय सहित है। धातु-मल रहित, परम औदारिक शरीर सहित, लोक पूज्य हैं। बहुरि एक योजन विषैं तिष्ठते ऐसै दूर वा निकटवर्ती तिर्यंच वा मनुष्य वा देव, तिनकी अठारह महाभाषा, सात सौ क्षुल्लक भाषा, ताकों आकार परिणमी ऐसी जो दिव्यध्वनि, ताकरि आसन्नभव्य जीवन कों संसार समुद्र तैं पार करै है। जैसे बिना इच्छा चन्द्रमा समुद्र को बढ़ावै है, तैसै अबुद्धिपूर्वक केवली जगत के हित कों करै है। बहुरि भगवान् विहार करै, तब आकाश विषैं दोय सौ पच्चीस कमलनि के ऊपर स्वयमेव गमन करैं हैं। सो या प्रकार उत्कृष्ट तो किंचिदून कोड़िपूर्व अर

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

जघन्य पृथक्त्ववर्ष प्रमाण तीर्थंकर केवली की स्थिति सयोग गुणस्थान विषै जाननी। सामान्य केवली के अतिशय आदिक यथासंभव जाननें। जघन्य स्थिति अंतर्मुहूर्त जाननी। तहां सयोगी के प्रथम समय तैं लगाय उदयादि अवस्थित गुणश्रेणी निर्जरा पाइये हैं। तहां अंतर्मुहूर्त आयु का अवशेष रहै, तहांपर्यन्त समय-समय समान द्रव्य अपकर्षण करि गुणश्रेणी आयाम, तिन विषैं असंख्यातगुणा लिए कर्म दीजिये हैं, सो क्षीणकषाय तैं असंख्यातगुणे हैं।

बहुरि अपना आयु का अंतर्मुहूर्त अवशेष रहै, केवली समुद्घात क्रिया करै है। तहां दंड, कपाट, प्रतर, लोकपूरण रूप समुद्घात क्रिया कों करै है। दंडसमुद्घात करने के काल के अंतर्मुहूर्त काल पहले आवर्जितनामाकरण होय है। सो जिनेन्द्रदेव के जो समुद्घात क्रिया कों सन्मुखपना, सो ही आवर्जितकरण कहिये हैं। आवर्जित-करण करने के पहले जो स्वस्थान, तिस विषैं अर आवर्जितकरण विषैं भी सयोग केवली के कांडकादि विधान करि स्थिति-अनुभाग का घात नाहीं है। बहुरि आव-र्जितकरण पहले स्वस्थान केवली करि अपकर्षण किया गुणश्रेणी के द्रव्य तैं आवर्जित-करण युक्त केवली करि अपकर्षण किया द्रव्य असंख्यातगुणा है, अर गुणश्रेणी आयाम संख्यात भाग है।

बहुरि आवर्जितकरण काल के अंतर्मुहूर्त काल पीछे समुद्घात क्रिया होय है, सो अघातियाकर्मनि की स्थिति समान करने के अर्थि जीव के प्रदेशनि का समुद्गमन – फैलना, ताका, नाम समुद्घात है। सो दंड, कपाट, प्रतर लोकपूरण भेद तैं चार प्रकार है। सो समुद्घात करनेवाले जीव दोय प्रकार हैं – पूर्वसन्मुख, उत्तरसन्मुख। बहुरि पद्मासन आसन युक्त वा कायोत्सर्ग आसन युक्त। सो प्रथम समय विषैं दंड समुद्घात करैं हैं। तहां कायोत्सर्ग स्थिति उत्कृष्ट अवगाहन युक्त केवली का शरीर एक सौ आठ प्रमाणांगुल प्रमाण ऊंचो होय। ताके नवमें भाग चौड़ा होय। सो बारह अंगुल चौड़ाई को सूक्ष्म परिधि तेंतीस अंगुल, अर एक अंगुल का एक सौं तेरहवां भाग में पिच्याणवें भागमात्र होय। बहुरि पद्मासन स्थिति की चौड़ाई का प्रमाण तासौं तिगुणा छत्तीस अंगुल है। ताकी सूक्ष्म परिधि का प्रमाण एक सौ तेरह अंगुल अर एक अंगुल का एक सौ तेरहभाग में सत्ताईस भाग मात्र होय है। अर किंचिदून चौदह राजू ऊंचे प्रदेश होय हैं। यहां नींचले, ऊंचले वातबलयनि विषैं जीव के प्रदेश न फैलें हैं, तातैं किंचिदून कह्या है, ऐसे दंड समुद्घात कह्या।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि द्वितीय समय विषैं कपाट समद्घात करैं है। तहां पूर्व दिशा सन्मुख कायोत्सर्ग ग्रासन युक्त केवली के प्रदेश किंचिद्न चौदह राजू ऊंचे ग्रर सात राजू चौड़े, बारह ग्रंगुल मोटे होय हैं। बहुरि पूर्व सन्मुख पद्मासन स्थित केवली के प्रदेश ऊंचे, चौड़े, पूर्वोक्त मोटे, छत्तीस ग्रंगुल होय हैं। बहुरि उत्तर सन्मुख कायोत्सर्ग स्थित केवली के प्रदेश किंचिद्न चौदह राजू ऊंचे, सात राजू, क्रम तैं घटि मध्य लोक निकट एक राजू, बहुरि क्रमतैं बधि ब्रह्म स्वर्ग निकट पांच राजू, क्रमतें घटि ऊपर एक राजू चौडे ग्रर बारह ग्रंगुल मोटे प्रदेश होय हैं। बहुरि उत्तर सन्मुख पद्मासन स्थित केवली के प्रदेश ऊंचे, चौड़े तैसै ही मोटे छत्तीस ग्रंगुल होय हैं, ऐसैं कपाट समुद्घात कह्या।

बहुरि तीसरे समय प्रतर करै है। तहां वातवलय विना ग्रवशेष सर्वलोक विषैं ग्रात्मा के प्रदेश फैलै हैं। बहुरि याका नाम मथान भी है। बहुरि चतुर्थ समय विषैं लोकपूरण होय है, बातवलय सहित सर्वलोक विषैं ग्रात्मा के प्रदेश फैलें हैं। ऐसैं चार समय विषैं दंड, कपाट, प्रतर, लोकपूरण होय हैं।

यहां स्थितिकांडकघात होय है। ताका ग्रायाम ग्रंतर्मुहूर्तमात्र है। ग्रर यहां समय-समय ग्रपवर्तन होय है। समय-समय स्थिति-ग्रनुभाग घटावै है। पांचवें समय लोक-पूरण कों समेटि प्रतररूप ग्रात्मप्रदेश करै है। बहुरि छठे समय प्रतर समेटि कपाटरूप ग्रात्मप्रदेश करै हैं। ग्रर सातवें समय कपाट समेटि, दंडरूप ग्रात्मप्रदेश करै है। ग्रर ग्रष्ट समय दंड समेटि सर्व प्रदेश मूल शरीर विषैं प्रवेश करै है।

तहाँ करने तथा समेटने के दंड के दोय समयनि विषैं ग्रौदारिक काययोग है। कपाट के दोय समयनि विषैं ग्रौदारिक काययोग हैं। ग्रर प्रतर का दोय समय ग्रर लोकपूरण का एक समय इन तीन समय विषैं कार्माण काययोग है। इहां नोकर्म का ग्रहण नाहीं है, तातैं ग्रनाहारक है, ऐसा जानना। ऐसैं संक्षेप करि समुद्घात क्रिया का वर्णन किया।

ग्रब शरीर विषैं प्रवेश हुवा पीछे ग्रन्तर्मुहूर्त काल तहां विश्राम करि तहां संख्यात हजार स्थितिकांडक करै है। पीछे योगनि का निरोध करै है। इहां निरोध नाम नाश का है ऐसा भावार्थ जानना। बादरकाययोग रूप होय बादरमनयोग, वचनयोग, उस्वासकाययोग इन चारों को क्रमतैं नष्ट करैं हैं। बहुरि सूक्ष्म काययोग रूप होय तिन चारू सूक्ष्म मन कों क्रम तैं नष्ट करैं हैं। सो ही कहिये हैं—

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

केवली भगवान बादर काययोगरूप प्रवर्ततो संतो पहले बादर मनोयोग कूं नष्ट करि सूक्ष्मरूप करै है। पीछे बादर वचनयोग को नष्ट करि सूक्ष्मरूप करै है। पीछे बादर उस्वास को नष्ट करि सूक्ष्मरूप करै है। पीछे बादर काययोग को नष्ट करि सूक्ष्मरूप करै है। याप्रकार जो बादररूप इनकी शक्ति पूर्वं थी, ताकों घटाय करि सूक्ष्म करि, बहुरि केवली सूक्ष्मकाययोग रूप प्रवर्ततो संतो पहले सूक्ष्म मनोयोग को, पीछे सूक्ष्म उस्वास कों, तापीछे सूक्ष्म काययोग कों नष्ट करैं हैं। तहां एक-एक बादर वा सूक्ष्म मनोयोगादिक कों निरोध करने का काल प्रत्येक अन्तर्मुहूर्तमात्र जानना। बहुरि सूक्ष्मकृष्टिरूप काययोग का वेदक जो सयोगी जिन, सो इहां तीसरा सूक्ष्मक्रिया-प्रतिपाति नामा शुक्लध्यान कों ध्यावें हैं। इहां सूक्ष्मकृष्टि कों प्राप्त काययोग जनित परिस्पन्दरूप क्रिया पाइये है। अर अप्रतिपाति कहिये पड़ने तैं रहित हैं, तातें या ध्यान का नाम सार्थक है। या ध्यान का फल योग का निरोध होना ही जानना। यद्यपि प्रत्यक्ष निरंतर केवलज्ञानी के चितानिरोध लक्षण रूप ध्यान संभवे नाहीं; तथापि योगनि का निरोध होते, आस्रव निरोध होने रूप ध्यान फल कों देखि उपचार तैं केवली के ध्यान कहा है। अथवा छद्मस्थनि के चिंता का कारण योग है; तातैं कारण विषैं कार्य का उपचार करैं, योग का भी नाम चिंता है, सो याका इहां निरोध होय है; तातैं भी याका नाम ध्यान कहना संभवे है। छद्मस्थनि के चिंता का निरोध का नाम ध्यान है, केवली के योगनिरोध का नाम ध्यान है, ऐसा नियम जानना।

सयोगी गुणस्थान का अंतर्मुहूर्तमात्र काल अवशेष रहै वेदनीय, नाम, गोत्र का अंतःस्थितिकांडक कों ग्रहैं हैं। ताकरि सयोगी का अवशेष काल रहा सो, अर अयोगी का सर्वकाल मिला, जो प्रमाण होय, तितने निषेकनि को छांड़ि अवशेष सर्वस्थिति के गुणश्रेणी सहित जे उपरितन स्थिति के निषेक, तिनकों लांछित करै है—नष्ट करने को प्रारम्भे है। तहां अंतकांडक के द्रव्य कों अपकर्षण करि असंख्यात-गुणा करि असंख्यातगुणां क्रम तैं उदय निषेक तें लगाय अंत निषेक पर्यन्त दीजिये है। ता समय फालीका करि द्रव्य का निक्षेपण करै है। तहां सयोगी के अंत समय विषैं तिनके अंत फालीका का पतन होय है। ऐसें सयोगी के अन्त समय विषैं अघा-तिया कर्मनि की अंतकांडक की अंत फालीका का पतन अर योग का निरोध अर सयोग गुणस्थान की समाप्ति युगपत् होय है। याके ऊपर अयोग गुणस्थान के काल विषैं गुणश्रेणी अर स्थिति-अनुभाग का घात नाहीं है। अधःस्थित गलन करि एक-

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

एक निषेक क्रम तैं उदयरूप होय है। इहां अयोगी जिन की आयु समान तीन अघातियानि की स्थिति होय है। सो अयोगी जिन चौथा समुच्छिन्नक्रियानिवृत्ति नाम शुक्लध्यान कूं ध्यावै है। समुच्छिन्न कहिये उच्छेद भई है मन, वचन, काय की क्रिया; अर निवृत्ति जो प्रतिपात, ताकरि रहित यह ध्यान है, तातैं याका नाम सार्थक है। यहां भी ध्यान का उपचार पूर्वोक्त प्रकार जानना। इहाँ भी समस्त आस्रव रहित केवली के अवशेष कर्मनिर्जरा का कारण जो स्वात्म विषें प्रवृत्ति, ताहीका नाम ध्यान है। समस्त शील-गुण का स्वामीपना होने तैं शैलेश्य अवस्था कों प्राप्त भया है। यद्यपि सयोगी जिन के समस्त शीलगुण का स्वामीपना संभवै है, परन्तु योगनि का आस्रव पाइये है, तातैं सकल संवर के न संभवन तैं तांकों शैलेश्य अवस्था का अभाव है। अयोगी के योगास्रव भी न पाइये है, तातैं सकलसंवरण होने तैं ताकैं शैलेश्य अवस्था संभवै है। बहुरि सो अयोगी जिन निरोधे हैं समस्त आस्रव जानैं, ऐसा है।

बहुरि कैसा है अयोगी जिन ?

कर्मबंधरूपी रज करि रहित है। अयोगी जिन का काल पंच ह्रस्व अक्षर जेते काल करि उच्चारण करिये, तेता है। तहां एक-एक समय विषैं एक-एक निषेक गलनरूप जो अधःस्थितिगलन, ताकरि क्षीण भई तिस काल के द्विचरम समय विषैं बहत्तर प्रकृति अर अन्तसमय विषैं तेरह प्रकृति, शुक्लध्यान रूपी ज्वलन जो अग्नि, ताकरि भस्म करै है। वेदनीय, देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, ५ शरीर, ५ बंधन, ५ संघात, ६ संस्थान, ३ अंगोपांग, ६, संहनन, २० वर्णादिक, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास, २ विहायोगति, अपर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, सुस्वर, दुःस्वर, दुर्भग, अनादेय, अयशस्कीर्ति, निर्माण, नीचगोत्र ऐसे बहत्तर (७२) प्रकृति तो द्विचरम समय विषैं क्षय भई। वेदनीय, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, मनुष्यायु, पंचेद्रिय जाति, त्रस, बादर, पर्याप्त, सुभग, आदेय, यशस्कीर्ति, तीर्थंकर, उच्चगोत्र ये तेरह प्रकृति अन्त समय विषैं क्षय भई। ऐसैं क्षयकरि ताके अनन्तर समय विषैं सिद्ध होय है।

जैसें कालिमा रहित शुद्ध सुवर्ण निष्पन्न होय है, तैसें सर्व कर्ममल रहित कृतकृत्यदशारूप निष्पन्न आत्मा होय है। सो जीव ऊर्ध्वगमन स्वभाव करि तीन लोक के शिखर विषैं ईषत्प्राग्भार नाम जाका, ऐसी जो आठवीं पृथ्वी, ताके ऊपर एक समय मात्र काल करि जाय तनुवातवलय का अंत विषैं विराजमान हो है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

कैसीक है वह पृथ्वी ?

समस्त लोक का शिरोमणिरूप आभूषण है। तथा मनुष्यपृथ्वी के समान पैंतालीस लाख योजन चौड़ी गोलाकार है। बहुरि आठ योजन ऊंची है। बहुरि स्थिर है। बहुरि छत्र के आकार श्वेतवर्ण है। अर बीच में मोटी, चौहटै छेहड़े पतली, ऐसी मनोहर है। ईषत्प्राग्भार नामा अष्टमी पृथ्वी घनोदधि वातवलय पर्यन्त है। तिस पृथ्वी के बीच पाइये है ऐसी जो सिद्धशिला, ताका ऐसा स्वरूप है। धर्मास्तिकाय के अभाव तैं तहां तैं ऊपर गमन न होय है। तहां ही चरम शरीर तैं किंचिदून प्रमाण आकारस्वरूप जीव द्रव्य अनंत ज्ञानानंदमय विराजै है।

बहुरि कैसेक हैं सिद्ध भगवान ?

त्रिभुवन करि पूजित अर बुद्ध कहिये सर्व का ज्ञाता, अर निरंजन कहिये कर्ममल रहित, अर नित्य कहिये विनाशरहित ऐसा जो सिद्ध भगवान, सो मुझ कों उत्कृष्टज्ञान, दर्शन, चारित्र की शुद्धता, अर समाधि कहि अनुभवदशा वा सन्यासमरण ताकों प्राप्त करो। इहां मोक्ष अवस्था सर्व कर्म का सर्वथा नाश तैं सम्पूर्ण आत्मस्वरूप की प्राप्तिरूप जाननी। या प्रकार नव क्षायिकभाव का संक्षेप कथन किया। विशेष कथन क्षपणासार नामा ग्रन्थ तैं जानना।

ये क्षायिकभाव वर्तमान भी परमसुख को कारण है अर आगामी मोक्ष का कारण है। बहुरि क्षायिक चारित्रभाव गुणस्थान तो अपूर्वकरण सों लेय अयोगकेवली गुणस्थान पर्यन्त छह गुणस्थान विषैं पाइये। अर मार्गणा – **गति** – मनुष्य, **जाति** – पंचेन्द्रिय, **काय** – त्रस, **योग** – मन का चार ४, वचन का चार ४, औदारिक मिश्र, कार्माण ऐसे ११, **वेद** – अनिवृत्तिकरण गुणस्थान तक तीन, ऊपर वेद की नास्ति, **कषाय** – अष्टम, नवम गुणस्थान विषैं १३, अनिवृत्तिकरण विषैं ७ अर सूक्ष्म साम्पराय में सूक्ष्मलोभ, ऊपर कषाय को अभाव, **ज्ञान** – सुज्ञान ५, **संयम** – सामायिक, छेदोपस्थापना, सूक्ष्मसाम्पराय, यथाख्यात ४, **दर्शन** – ४, **लेश्या** – शुक्ल, **भव्य** १, **सम्यक्त्व** – क्षायिक, **संज्ञी** १, **आहारक, अनाहारक** २ इन विषैं पाइये हैं।

इति श्री भावदीपिका ग्रंथ के क्षायिक भावाधिकार विषैं दूसरा क्षायिक चारित्रभाव अंतराधिकार समाप्त भया।

बावन भाव सहित क्षायिकभावाधिकार सातवां पूर्ण भया।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

आठवाँ अधिकार : चूलिका अधिकार

(दोहा)

अनादिकाल तैं जे थये, सिद्ध शिला सिधथोक ।
सहजानंद जगमुकुटमणि, अंत रहित नित धोक ।।१।।

अब चूलिका अधिकार लिखिये हैं – इस प्रकार अनेक विशेषण सहित, कहे जे जीव के तिरेपन भाव ते तीन प्रकार हैं। तीन प्रकार पारिणामिकभाव हैं, ते तौ जीव के स्वभाविकभाव हैं, जातैं ये कर्म की सापेक्ष्य रहित स्वभाव ही तें उत्पन्न हैं। बहुरि इकईस औदयिकभाव अर अठारह क्षायोपशमिक भाव अर दोय औपशमिक ये इकतालीस विभाव भाव हैं, जातैं ये कर्म की सापेक्ष्य सहित हैं; सो शुभाशुभ भेद करि दोय प्रकार हैं।

औदयिक भावनि विषैं मनुष्यगतिभाव, देवगतिभाव, अर पीत, पद्म, शुक्ल तीन लेश्या ऐसैं पांच भाव अर क्षायोपशमिक भावन विषैं तीन कुज्ञान बिना पंद्रहभाव अर औपशमिक भाव दोनों ऐसैं ये बाईस तो शुभभाव हैं।

अर अवशेष सोलह औदयिकभाव अर क्षायोपशमिक तीन कुज्ञान ऐसैं उगनीस अशुभभाव हैं।

बहुरि नव क्षायिक भाव, ते शुद्धभाव हैं।

ऐसैं ये स्वभाव, विभाव, शुद्ध भाव तीन प्रकार स्वरूप कों धरैं जीव के तिरेपन भाव हैं। तातैं इनकों भलीभांति जानि, श्रद्धान करना, त्यजन-ग्रहण करना अर्थात् अशुभभाव कों छोड़ना, शुभभावनि का ग्रहण करना, जातैं इन भावनि ही का निमित्त पाय कर्म दश प्रकार अवस्था कों प्राप्त होय हैं, सो ही कहिये हैं।

कर्म की दस अवस्थायें

१. बंध, २, सत्व, ३. उदय, ४, उदीरणा, ५. उत्कर्षण, ६. अपकर्षण, ७, संक्रमण, ८. उपशांत, ९. निधत्ति, १०. निकाचना – ये कर्म की दस अवस्थायें हैं। सो ये जीव के भाव के निमित्त तैं होय हैं।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रथम ही कर्म की बंध अवस्था कहिये हैं –

नवीन कर्म परमाणूनि की जीव के प्रदेशनि सों एकक्षेत्रावगाह सम्बन्ध होना, सो बन्ध कहिये। सो बन्ध चार प्रकार है – प्रदेशबंध, प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभागबंध।

जो सिद्धराशि के अनन्तवें भाग अर अभव्यराशि तें अनन्तगुणा मात्र प्रमाण ऐसा कर्मरूप होने योग्य पुद्गल परमाणूनि का समय-समय ग्रहण होय, सो समयप्रबद्ध कहिये। ताका ग्रहण होय आत्मप्रदेशनि सों एकक्षेत्रावगाह सम्बन्ध होना, सो प्रदेश बन्ध कहिये।

बहुरि ते पुद्गल कर्म परमाणु ज्ञानावरणादि मूल, उत्तर प्रकृतिरूप होय परिणवें सो प्रकृतिबन्ध कहिये।

बहुरि अपनी-अपनी जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट स्थिति धार तिष्ठता, सो स्थितिबन्ध कहिये।

बहुरि अपने-अपने कार्यरूप रस देने की शक्ति का मध्यम, जघन्य, उत्कृष्ट अविभाग कहिये अंश, ताका उत्पन्न होना, सो अनुभागबन्ध कहिये। ऐसा चार प्रकार बन्ध का स्वरूप जानना।

तहां प्रदेशबन्ध अर प्रकृतिबन्ध तो योगनि तैं होय हैं। नामकर्म के उदय तैं उत्पन्न भये जीव के द्रव्य, मन, वचन, काय, तिनकी चेष्टा का निमित्त पाय आत्मा का प्रदेश चंचल होय, ताकरि आत्मा के कर्म ग्रहणशक्ति होय, ताका नाम योग है। ताकरि पुद्गलकर्म वर्गणानि का ग्रहण होय, सो प्रदेशबन्ध कहिये।

सो मन, वचन, काय की चेष्टा कहिये प्रवृत्ति शुभाशुभ प्रवृत्तिरूप दोय प्रकार है, सो आत्मा के शुभाशुभ भावनि तैं होय है। तहां आत्मा शुभ लेश्यादि बाईस शुभभावनिरूप परिणवै, तहां मन, वचन, काय करि शुभ कार्यरूप प्रवृत्ति होय, ताका नाम शुभयोग कहिये।

अर अशुभ लेश्यादि उगनीस अशुभ भावनिरूप परिणवै, तहां मन, वचन, काय की अशुभ कार्यरूप प्रवृत्ति होय, ताका नाम अशुभयोग कहिये।

शुभयोग के होते शुभ कर्म परमाणु का बंध होय है। तहां शुभ ही सातावेदनीय आदि कर्म प्रकृतिनि का बन्ध होय है, अर अशुभ योग होते अशुभ कर्मपरमाणु का बंध होय है। तहां अशुभ ही असातावेदनीय आदि कर्म प्रकृतिनि का बंध होय है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि स्थितिबंध, अनुभागबंध कषाय तैं होय है, सो आत्मा के शुभाशुभ भावनि के अनुसार ही कषायनि की तीव्र-मंद प्रवृत्ति होय है ।

जब आत्मा शुभलेश्यादि शुभभावनिरूप परिणवै है; तहां कषाय मन्द होय प्रवर्तै है; तब सातावेदनीय आदि पुण्य प्रकृतिनि का स्थिति-अनुभाग बहुत बंध होय है । अर ज्ञानावरणादिक चार घातिया की अर असातावेदनीय आदि अघातिया की पापप्रकृतिनि का स्थिति-अनुभाग अल्प बंध होय है ।

बहुरि जब आत्मा अशुभलेश्यादि अशुभभावनि रूप परिणवै है, बहुरि तहां कषाय तीव्र होय प्रवर्तै है; तब ज्ञानावरणादि चारि घातिया की अर असातावेदनीय आदि अघातिया की पाप प्रकृतिनि की स्थिति-अनुभागबंध बहुत होय है; अर साता-वेदनीय आदि पुण्य प्रकृतिनि का स्थिति-अनुभाग बंध – अल्प होय है।

जैसा-जैसा उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य अनुभाग कों धरै शुभाशुभभावनिरूप आत्मा परिणमै है, तिनही के अनुसार उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य स्थिति-अनुभाग को धरैं शुभा-शुभ कर्म बंध होय है ।

अर जहां आत्मा निःकषायभाव रूप होय है, तहां स्थितिबंध-अनुभागबंध का अभाव होय है । अर जहां आत्मा योग रहित होय प्रवर्तै है, तहां प्रदेशबन्ध, प्रकृतिबन्ध का अभाव होय है । आत्मा के जिस-जिस भावनि का निमित्त पाय, जिस-जिस कर्म का बंध होय है, तहां तिस-तिस भावनि का अभाव होतें तिस-तिस कर्म के बंध का अभाव होय है । तातैं कर्मबंध को कारण आत्मा के भाव ही जानना ।

आगै कर्म की सत्व अवस्था कहिये हैं –

बंध काल तैं लगाय अपनी स्थिति का अंत पर्यन्त जावत् कर्मत्वशक्ति को धरैं पुद्गलपरमाणु (तिष्ठैं) उदय को न प्राप्त होय हैं; तावत्काल कर्म की सत्त्व अवस्था कहिये । जिस काल चार प्रकार विशेष को धरैं कर्मबंध होय है, तिस काल सों लगाय अपनी-अपनी योग्य आबाधाकाल छोड़ि निषेक रचना होय है ।

जेतो-जेती स्थिति पड़ै, ताका जेता-जेता समय होय, तिन समयनि प्रति आदि के समय तैं लगाय अंत का समय पर्यन्त गुणहानि रचना का अनुक्रम धरैं चय-चय

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रमाण घटता द्रव्य अर वर्गणा, स्पर्धक, गुणहानि का अनुक्रम धरें अनुभाग समय-समय प्रति बढ़तो होय तिष्ठै है; ताका नाम निषेक कहिये । तहां प्रथम निषेक की स्थिति एक समय अधिक आबाधाकाल प्रमाण है । दूसरे निषेक की स्थिति दोय समय अधिक आबाधाकाल – प्रमाण है । ऐसैं ही निषेक-निषेक प्रति एक-एक समय की स्थिति अधिक है । अंत निषेक की स्थिति अपनी-अपनी आबाधाकाल अधिक सम्पूर्ण स्थिति प्रमाण है । सो जावत् जिस-जिस कर्म की स्थिति पूर्ण होय उदय को प्राप्त न होय, तावत् कर्म का संचयरूप रहना, सो सत्व कहिये ।

सो सत्व भी चार प्रकार है – प्रदेशसत्व, प्रकृतिसत्व, उदयसत्व, अनुभाग-सत्व । सो स्थितिसत्व आदि इन चारों प्रकार सत्व कों भी जीव का शुभाशुभ भाव ही कारण है । जीवभाव का निमित्त पाय चारों ही प्रकार सत्व घटै है । उत्कृष्ट तैं मध्य-जघन्य, मध्य तैं उत्कृष्ट, जघन्य तैं उत्कृष्ट-मध्य नाना प्रकार अवस्था कों प्राप्त होय है । शुभभाव होते सातावेदनीय आदि अघातिया की शुभप्रकृतिनि का स्थिति-अनुभागादि सत्व विषैं बधि जाय है । ज्ञानावरणादि चार घातिया की अर असातावेदनीय आदि अघातिया की अशुभप्रकृतिनि का स्थिति-अनुभागादि घटि जाय है । अशुभभाव होते अशुभप्रकृतिन का स्थिति-अनुभागादि सत्व बधि जाय है । अर सातावेदनीय आदि शुभप्रकृतिनि की स्थिति-अनुभागादि सत्व घटि जाय है ।

आगै कर्म की उदय अवस्था को कहिये हैं –

जहां कर्म अपनी स्थिति पूरी करि, फल देय, क्षरने को सन्मुख होय, तहां उदय कहिये । सो उदय भी चार प्रकार है – प्रदेशउदय, प्रकृतिउदय, स्थिति-उदय, अनुभागउदय ।

तहां भी जीव के परिणामनि कों निमित्त पाय रस देय वा बिना रस दिये ही कर्म परमाणुनि का खिर जाना, सो प्रदेशउदय कहिये । अर मूल तैं कर्मप्रकृतिनि का खिर जाना, सो प्रकृतिउदय जानना । अर स्थिति का क्षीण हो जाना, सो स्थिति उदय कहिये ।

अर जघन्य, मध्य, उत्कृष्ट अपना-अपना रस देय खिर जाना, सो अनुभाग-उदय जानना । एक-एक समय विषैं एक-एक निषेक अपना-अपना रस देय उदय कों प्राप्त होय, रस देय खिर जाना; सो ही सविपाक निर्जरा कहिये ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

वा जो जीव सम्यक्त्व-चारित्रादि विशुद्धभावनिरूप परिणमै, तहां एक-एक समय विषैं असंख्यात-असंख्यात निषेक उदय होय, बिना रस दिये ही प्रदेश उदय होय खिरैं हैं; ताकों अविपाक निर्जरा कहिये।

असंख्यात-असंख्यात समय प्रबद्ध को बांधो द्रव्य एक-एक निषेक विषैं भेला होय उदय कों प्राप्त होय, ता निषेक विषैं सर्व ही शुभ-अशुभ कर्मनि का सत्व है; परन्तु जीव के गत्यादिक भावनि के अनुसार मुख्यता, गौणता लिये शुभाशुभ कर्मनि का उदय होय है। जो जीव नरकगति विषैं तिष्ठै है; तहां नरकगतिभाव नैं आदि दे, सर्व नरकगति सम्बन्धी अति संक्लेशभावनिरूप आत्मा परिणमै है। तहां असातावेदनीय आदि अशुभ कर्मनि के उदय की तो मुख्यता है। अर सातावेदनीय आदि शुभकर्मनि की अत्यन्त गौणता है। अर जो जीव देवगति विषैं तिष्ठैं हैं; तहां देवगतिभाव नैं आदि दे, सर्व देवगति सम्बन्धी मंदकषायादि रूप भावयुक्त आत्मा है; तहां सातावेदनीय आदि शुभकर्मनि के उदय की मुख्यता है; अर असातावेदनीय आदि अशुभ कर्मनि के उदय की अत्यन्त गौणता है। अर जो जीव तिर्यंच गति विषैं तिष्ठै हैं, तहां तिर्यंचगति-भाव नैं आदि दे सर्व तिर्यंचगति संबंधी भावरूप परिणवै है। तहां घनाकाल संबंधी तो असातावेदनीय आदि अशुभकर्मनि का उदय की मुख्यता है अर थोड़ा काल संबंधी कदाकाल किंचित् अनुभाग कों धरैं सातावेदनीय आदि शुभकर्मनि के उदय की मुख्यता होय है।

बहुरि जो जीव मनुष्यगति विषैं तिष्ठैं हैं, तहां मनुष्यगतिभाव नैं आदि दे, सर्व मनुष्यगति संबंधी भावनिरूप परिणवै है।

तहां उदय नैं प्राप्त भया जो निषेक, ताविषैं अशुभ कर्मनि का अनुभाग अधिक होय तो असातावेदनीय आदि अशुभकर्मनि के उदय की मुख्यता होय, अशुभकर्मनि का उदय होय; अर शुभकर्मनि का प्रदेश उदय होय।

अर जो उदयरूप निषेक विषैं शुभकर्म का अनुभाग अधिक होय तो साता-वेदनीय आदि शुभकर्मनि के उदय की मुख्यता होय; शुभकर्मनि का उदय होय; अर असातावेदनीय अघातिया अशुभ कर्मनि का प्रदेश उदय होय, अर ज्ञानावरणादिक घातिया कर्मनि का यथायोग्य उदय होय वा शुभलेश्यादि विशुद्ध भावनिरूप परिण-वता जीव के सातावेदनीय आदि शुभकर्म के उदय की मुख्यता भी होय वा असाता-वेदनीय आदि अशुभकर्मनि की भी अत्यन्त अनुभाग का जोरतैं मुख्यता होय; तो कछु

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अनुभाग क्षीण होय उदय नैं प्राप्त होई। अर सातावेदनीय आदि शुभकर्मनि का अनुभाग अधिक होइ उदय नैं प्राप्त होय।

अर कदाचित् अत्यन्त विशुद्धभावरूप परिणमै ता जीव के असातावेदनीय आदि अशुभ कर्मनि का सातावेदनीय आदि शुभकर्मनिरूप होइ उपजे है, वा प्रदेश उदय होइ खिर जाइ। बहुरि कृष्णादिक अशुभ लेश्यादि अशुभ भावनिरूप परिणमते जीव के असातावेदनीय आदि अशुभ कर्मनि का उदय की मुख्यता होय वा सातावेदनीय आदि शुभकर्मनि की भी अत्यन्त अनुभाग के जोर तैं मुख्यता होय तो कछु अनुभाग क्षीण होय, उदय नैं प्राप्त होय। अर असातावेदनीय आदि अशुभकर्मनि का अनुभाग अधिक होय उदय नैं प्राप्त होय, अर कदाचित् अत्यन्त संक्लेशभावरूप परिणमता जीव के सातावेदनीय आदि अशुभकर्मन रूप होय उदय होय है वा प्रदेश उदय सों खिर जाय; ऐसी नाना प्रकार कर्मन की उदय अवस्था भी जीवभावन का निमित्त पाय होय है।

आगें कर्मनि की उदीरणा अवस्था कहिये हैं –

ऊपर के निषेकनि का कर्मस्वरूप पुद्गलद्रव्य उदयावली विषैं आय प्राप्त होय है, सो उदीरणा कहिये। जो कर्म घनां काल की स्थिति धरैं, निषेकरूप सत्ता में तिष्ठै था, सो जीवभाव का निमित्त पाय उदयरूप निषेक ते आवली प्रमाण निषेक, तिनकों उदयावली कहिये; ता विषैं आय प्राप्त होय आवलीकाल पर्यन्त उदयरूप होय, सो उदीरणा कहिये।

सो कर्मनि की उदीरणा योग्य जीव का भाव दोय प्रकार है – एक तो अंतरंग तीव्र-मंद अनुभाग कों धरैं मोहादिक कर्मनि का उदय होय, ताके अनुसार तीव्र-मंद कषायादिकभाव होय, ताकरि कर्म की उदीरणा होय है। अरु एक बाह्यकर्मनि की उदीरणा योग्य परद्रव्यरूप सामग्री मिलै, ताका निमित्त पाय, ताहीके अनुसार उदीरणा योग्य जीव का कषायभाव होय कर्मनि की उदीरणा होय है। तहाँ तीव्र अनुभाग कों धरै मोहादिक मोहकर्मनि का उदय होय, तब आत्मा का तीव्र कषायरूप संक्लेश भाव होय है। जब आत्मा कृष्णादि अशुभलेश्यादि अशुभभावनिरूप प्रवर्तै है, तब सातावेदनीय आदि शुभकर्म का उदय मिटि अर असातावेदनीय आदि अशुभकर्म की उदीरणा होय है। जब जैसे दुःख के कारण पदार्थनि को अवलंबन करै है, तब जीव सुखी तैं दुःखी होय जाय है, रागी तैं द्वेषी होय जाय है, द्वेषी तैं रागी होय जाय है

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ज्ञानी तैं अज्ञानी होय जाय है, संयमी तैं असंयमी होय जाय है, क्रोधी-मानी-मायावी-लोभी तैं अन्य-अन्य क्रोधादिकषाय रूप होय जाय है, प्रसन्नता तैं शोकी होय जाय है, रतिभाव तैं अरतिभाव कों प्राप्त होय, अवेदभाव तैं सवेदभाव कों प्राप्त होय जाय, क्षुधा-तृषादि रहित भाव सों क्षुधा-तृषादि सहित भाव कों प्राप्त होय, इत्यादि उदीरणा होय कर्मनि की पलटन होते ही भावनि की पलटन हो जाय है। अर भावनि की पलटन होतें कर्म की पलटन होय जाय, ऐसा कर्मनि का उदय अर जीवभाव में निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है।

बहुरि जहां मन्द अनुभाग कों धरैं मोहादिक कर्मनि का उदय होय, तब आत्मा का मन्दकषायरूप विशुद्धभाव होय है; तब आत्मा शुक्लादि शुभलेश्यादि शुभभावनिरूप परिणमै है, तब असातावेदनीय आदि अशुभकर्म को उदय मिटि, अर सातावेदनीय आदि शुभकर्मनि की उदीरणा होय उदय होय है। जब जैसें ही सुख के कारण पदार्थनि का अवलम्बन करै है, तब जीव दुःखी तैं सुखी होय है। रागी तैं विरागी, अज्ञानी तैं ज्ञानी, असंयमी तैं संयमी होय जाय है। क्रोधादि अन्य कषायरूप होय जाय है। शोकभाव मिटि प्रसन्नभाव हो जाय; अरतिभाव तैं रतिभाव, सवेदभाव तैं अवेदभाव, क्षुधा-तृषादि सहित भाव तैं रहित भाव कों प्राप्त होय है। उदीरणा होतां ही इत्यादि भावनि की पलटन होय, सो इस भांति तो अन्तरंग शुभ-अशुभ कर्म के उदय होतैं शुभाशुभ भाव होय। तिन ही के अनुसार शुभाशुभ कर्म की उदीरणा होय है। जो जीव के कर्म की उदीरणा होय, उदय होय, ताही के अनुसार जीव का भाव होय है।

बहुरि शुभाशुभ कर्म की उदीरणा कों कारण ऐसे बाह्य शुभाशुभ पदार्थ का निमित्त पाय शुभाशुभ कर्म की उदीरणा होय, उदय होय, ताही अनुसार जीव का भाव होय है।

बहुति शास्त्र आप पढ़ाचा है, तिनका मद करते थकी, वा अन्य सम्यग्ज्ञानी पंडितनि में ईर्षा करने थकी, कुपथ के ग्रहण करने थकी, कुपथ का ग्रहण करि सम्यक्-ज्ञानी तैं विवाद करने थकी, अन्य कों कुपथ का ग्रहण करावने थकी रूठना, जैन आम्नाय सों विरुद्ध उपदेश देने थकी, वा मिथ्याशास्त्र, काव्य, श्लोकादि बनावने थकी वा शास्त्र के पढ़ावनेहारा उपाध्याय हैं, इनका अविनय करने थकी वा ज्ञान-चारित्र का आच्छादन वा घात करने थकी वा आपके विद्यागुरु कों छिपावने थकी वा यथात्व तैं दोष राखने थकी वा मूर्खनि की संगति थकी वा बहुत विकथा प्रलाप करने थकी,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुत विकथासक्त होने थकी, वा आलसी-प्रमादी होने थकी, वा बहुत क्रोध-लोभादि कषायनि के अभिनिवेश थकी, अर बहुत हास्य थकी वा रति, अरति, शोक, भय, ग्लानि के बहुत अभिनिवेश थकी, वा बहुत कामासक्त होने थकी, बहुत आरम्भ करने थकी वा कामोद्दीपनाहार करने थकी वा अमल युक्त वस्तु के खाने थकी इत्यादि बाह्य कारण थकी ज्ञानावरण, दर्शनावरण कर्म की उदीरणा होय उदय नैं प्राप्त होय है। तत्काल ज्ञान का नाश होय है। वा इन्हीं पूर्वोक्त बाह्य कारणन तैं दर्शनावरण कर्म की उदीरणा होय है। वा अन्य अभिप्रेत थकी अनुभयप्रेत थकी अनुभयप्रेत कहिये उपयोग के जोड़ने थकी, वा दही आदि निद्रा के कारण वस्तुनि के भखने थकी, वा निद्रा के कारण सुखशय्यादि सामग्री मिलावने थकी, वा निद्रा की इच्छा करि लंबा होय सोवने थकी पंच निद्रा आदि दर्शनावरण कर्म की उदीरणा होय उदय नैंप्राप्त होय है। तहां सर्व पदार्थनि के सामान्य अवलोकन का अभाव होय है।

बहुरि दुःख-शोक के कारण पदार्थनि के देखने थकी, याद करने थकी, वा दुःख-शोकादि के कारण बाह्य पदार्थनि को आपकी बुद्धिपूर्वक आपके संबंध करने थकी आसातावेदनीय कर्म की उदीरणा होय उदय नैं प्राप्त होय, तब जीव सुखी तैं दुःखी होय है।

बहुरि सुख के कारण इष्ट पदार्थनि के देखने थकी, पवनादि करने थकी, वा असाता का उदय विषैं अपनी बुद्धिपूर्वक आपके सुख के कारण पदार्थनि का संबंध करने थकी वा देव-गुरु-धर्मादिक सम्बन्ध करने थकी, वा सुमरण (स्मरण) ध्याने चिंतवने, जाप आदि करने थकी इत्यादि थकी सातावेदनीय कर्म की उदीरणा होय, उदय कों प्राप्त होय है, तब जीव दुःखी तैं सुखी होय है।

बहुरि केवली देव, शास्त्र, गुरु, धर्म, चतुर्विध संघ अर जीवादिक तत्त्व, इनका स्वरूप जानता थका भी अन्यथा कहने थकी अर कुगुरु, कुदेव, कुधर्म के धारक तिनकी सराहना करने थकी इत्यादि थकी दर्शनमोह जो मिथ्यात्वकर्म ताकी उदीरणा होय उदय कों प्राप्त होय है। तब ए जीव तत्काल सम्यग्दृष्टी तैं मिथ्यादृष्टी होय है।

बहुरि क्रोधादि तेरह कषाय के बाह्य कारण पदार्थनि के याद करने थकी वा दृष्टि कर देखने थकी, वाचक संबंध करने थकी तेरह प्रकार भेद कों धारैं चारित्रमोह नामा कर्म, ताका जैसा-जैसा भेद का कारन पदार्थनि का संबंध करने थकी, ताका तैंसा-तैंसा भेद की उदीरणा होय, उदय नैं प्राप्त होय है, तहाँ तिसही भाव रूप होय आत्मा परिणमै है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

क्रोध के कारण सूं वा अपने कार्य के बिगाड़नेवाला वा अपने मानादिक कषाय के भंग करनेवाला वा अपनी आज्ञा को लोपनहारा इत्यादि आपकों दुःख-दायक पदार्थनि कों याद करने थकी, वा दृष्टिगोचर होनेथकी, वा संबंध करने थकी, तत्काल क्रोध नामा चारित्रमोह की उदीरणा होय, ताही समय जीव क्रोधभाव कों प्राप्त होय है।

तैसैं ही मान के कारण पदार्थनि के संबंध तैं मान का, माया के कारण पदार्थनि तैं माया का, वा लोभ के कारण धनादिक इष्ट सामग्री के संबंधादिक होते लोभ का वा हास्य के कारण नकली बहुरुपियादिक वा रति के कारण इष्ट स्त्री-पुत्र वा इष्ट भोजनादिक वा पांच ही इंद्रियनि के मनोज्ञ बिषयादिक वा अरति के कारण अनिष्ट स्त्री-पुत्रादिक वा अनिष्ट भोजनादिक वा पांच ही इंद्रियनि का अनिष्ट विषयादिक वा शोक के कारण पदार्थनि तैं शोक का, वा भय के कारण पदार्थनि तैं भय का, वा ग्लानि के कारण दुर्गंधादिक सूंघना, विष्टा आदि द्रव्य वा अप्रिय पदार्थनि तैं जुगुप्सा का, वा रूपवान स्त्रीन के याद करने थकी, वा दृष्टिगोचर होने थकी, वा मन का चलायमान संबंध करने थकी पुरुषवेद का, वा रूपवान तरूण वस्त्र भूषणादि मंडित पुरुष कों देखने थकी स्त्रीवेद का, वा स्त्री-पुरुष दोनोंनैं के संबंधादि थकी नपुंसकवेद का, इत्यादि जिस-जिस चारित्रमोह कर्म के उदय का कारण पदार्थनि का संबंधादिक होय, तिस ही कर्म की उदीरणा होय उदय होय है। ताही के अनुसार जीव के भावनि की उत्पत्ति होय है।

बहुरि खान-पानादिक न मिलने थकी, वा रोगादिक होतें औषधादि प्रतिकारनि के न मिलने थकी वा अन्यथा मिलने थकी, वा अन्यथा क्रिया वा प्रकृतिविरुद्ध खान-पानादि थकी, वा विषादिक खाने थकी, वा शस्त्रादिक के घात थकी वा जल-अग्न्यादिक के संबंध थकी - इत्यादि अनेक घात के कारण पदार्थनि के संबंध होतें वा-दृष्टिगोचर होते वा सुमिरण होतें आयु कर्म की उदीरणा होय मरण कों प्राप्त होय है। जातैं इन पदार्थनि का संबंधादि होतें वा न होतें जीव के वैसे ही उदीरणा योग्य भाव होय हैं। तहां आयुकर्म की उदीरणा होय है।

अर जहां नाना प्रकार घात के कारण मिलते वा घात ही तैं जीव के आयु कर्म की उदीरणा होने योग्य भाव न हों तो उदीरणा न हो है, तहां अनेक घातादिक होतैं भी मरण न होय है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि ऐसैं ही नाम कर्म की गोत्र कर्म कीं उदीरणा के बाह्य कारण मिलते नाम कर्म की, वा गोत्र कर्म की उदीरणा होय है ।

बहुरि अंतराय कर्म की उदीरणा के बाह्य कारण मिलते अंतराय की उदीरणा होय है । दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्यरूप कार्य होते संते भयादि के कारण पदार्थनि का निमित्त पाय, दानादिक पंचभावनि तैं जीव के परिणाम अहोठा होय; तब तिन भावनि का निमित्त पाय दानांतराय, लाभांतराय, भोगांतराय, उपभोगांतराय, वीर्यांतराय इन पंच प्रकार अंतराय कर्म की उदीरणा होय उदय कों प्राप्त होय है । तहां दानादिक कार्यनि का अभाव होय है । जिस दानांतराय आदि कर्मनि की उदीरणा होय उदय को प्राप्त होय, तिसही-तिसही दानादिक कार्यनि का अभाव होय है । जो सुख-दुःख के कारण बाह्य पदार्थ अबुद्धिपूर्वक दुर्निवार आप ही आय प्राप्त होय, तहाँ तो अन्तरंग कर्म का उदय जघन्य जानना । अर जहाँ सुख-दुःख का कारण पदार्थनि का बुद्धिपूर्वक संबन्ध होने थकी जो कार्य निपजै; सो उदीरणा होय कर्म का उदय जानना; जातैं कर्म का उदय जैसा होय तैसा ही बाह्य पदार्थनि का सम्बन्ध होय; सो तो कर्म की स्थिति पूर्ण होय कर्म का उदय जानना । अर जहाँ पहली बाह्य पदार्थनि का निमित्त होते कर्म का उदय होय, सो कर्म की उदीरणा होय उदय जानना । जैसे पहले पुरुषवेद का उदय होते कामासक्त होय स्त्री का सम्बन्ध करना, सो तो वेद के उदय तैं जानना । अर जो पहली ही स्त्री कों देखि विकारभाव होना; सो उदीरणा होय वेद का उदय है । ऐसे सब कर्मनि का उदय उदीरणा जानना ।

बहुरि उदीरणा उदय प्राप्त कर्मनि की होय है । जिस गति विषैं जिन कर्मनि का उदय पाइये हैं, तिनही कर्मनि की तो उदीरणा होय है; अर जिन कर्मनि का उदय न पाइये है, तिन कर्मनि की उदीरणा न होय । तहां वेदनीय अर आयु की तो उदीरणा छठे गुणस्थान पर्यन्त ही होय है; अर अन्य कर्म की उदीरणा जहां पर्यन्त अपना उदय होय, तहां पर्यन्त ही होय ।

आगै कर्म की उत्कर्षण वा अपकर्षण अवस्था कहिये हैं –

सत्ता में तिष्ठते जे ज्ञानावरणादिक रूप द्रव्य कर्म, तिनका स्थिति वा अनुभाग जीवभाव का निमित्त पाय बधि जाना – अधिक होय जाना, सो उत्कर्षण कहिये; अर घटि जाना – हीन होय जाना, सो अपकर्षण कहिये ।

जहां पीत, पद्म, शुक्ल लेश्यादि शुभभावनिरूप जीव परिणामै, तहां सातावेदनीय आदि शुभ प्रकृतिनि का स्थिति व अनुभाग उत्कर्षण करि बहुत होय जाय, बधि-

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

जाय । अर ज्ञानावरणादिक चार घातिया का वा असातावेदनीय आदि अघातियारूप अशुभ प्रकृतिनि का स्थिति-अनुभाग अपकर्षण करि अल्प होय जाय घटि जाय ।

बहुरि जहां कृष्ण लेश्यादि अशुभ भावनिरूप जीव परिणवै, तहां ज्ञानावरणादिक चार घातिया वा असातावेदनीय आदि अघातियारूप अशुभ प्रकृतिनि का स्थिति-अनुभाग उत्कर्षण करि बधि जाय, बहुत हो जाय, अर सातावेदनीय आदि शुभ प्रकृतिन का स्थिति-अनुभाग अपकर्षण करि अल्प रहिजाय – घटिजाय ।

नीचले निषेकनि विषैं जघन्यादि थोड़ी स्थिति-अनुभाग धरैं तिष्ठैं थे जे ज्ञानावरणादि कर्मत्व रूप शक्ति को धरैं कर्मस्वरूप पुद्गल, तिनकी स्थिति-अनुभाग बधि, ऊपर निषेकनि विषैं उत्कृष्टादि स्थिति-अनुभाग कों धरैं तिष्ठैं हैं जे कर्म, तिनके समान बहुत होय जाय, सो उत्कर्षण कहिये ।

बहुरि ऊपरले निषेकनि विषैं उत्कृष्टादि बहुत स्थिति-अनुभाग धरैं तिष्ठते जे कर्मस्वरूप पुद्गल, तिनकी स्थिति-अनुभाग घटि, नीचले निषेकनि विषैं तिष्ठते जघन्यादिक स्थिति-अनुभाग सहित कर्म, तिन समान हीन होय जाना, सो अपकर्षण कहिये । ऐसा उत्कर्षण-अपकर्षण का स्वरूप जानना ।

अथ कर्म का संक्रमण कहिये हैं –

अन्य प्रकृतिनि के परमाणु अन्यप्रकृतिनि रूप होय परिणवै, सो संक्रमण कहिये ।

जहां मतिज्ञानावरण के परमाणु श्रुतज्ञानावरण रूप होय परिणवै, श्रुतज्ञानावरण के अवधिज्ञानावरण रूप, अर अवधिज्ञानावरण के मनःपर्ययज्ञानावरणरूप, व मनःपर्यय-ज्ञानावरण के केवलज्ञानावरणरूप, केवलज्ञानावरण के मनःपर्यय आदिज्ञानावरणरूप होय परस्पर परिणवै है, अर मतिज्ञानावरणादिक श्रुतज्ञानावरणादिक होय परिणवै, श्रुतज्ञानावरणादिक मतिज्ञानावरणादिकरूप होय परिणवै, जातैं परस्पर सजातीय द्रव्य का सजातीय विषैं संक्रमण होय, विजातीय विषैं संक्रमण न होय। ऐसैं ही दर्शनमोह के तीन प्रकृतिनि का दर्शनमोह की प्रकृतिरूप, चारित्रमोह की पच्चीस प्रकृतिनि का चारित्रमोह की प्रकृतिरूप, अंतराय की पांच प्रकृतिन का अपनी अन्तराय की प्रकृतिनि रूप, वेदनीय की दोय प्रकृतिनि का सातावेदनीय की असातावेदनीयरूप, असातावेदनीय की सातावेदनीयरूप, नामकर्म की तिराणवै प्रकृति परस्पर नामकर्म की प्रकृतिरूप, गोत्रकर्म की नीचगोत्र की उच्चगोत्ररूप, उच्चगोत्र की नीचगोत्ररूप होय अपनी-

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अपनी सजातीय प्रकृतिनिरूप होय परस्पर संक्रमरण होय है, विजातीय प्रकृतिरूप न परिणवे हैं ।

ऐसै आयु कर्म के विना सात कर्मनि का परस्पर संक्रमरण होय है । अर आयु कर्म के संक्रमण करण नहीं है । तातैं आयुकर्म के संक्रमरण करण बिना नव करण ही होय हैं । ऐसैं सत्तारूप तिष्ठतै आयु कर्म विना सात कर्म, तिनका अपनी-अपनी प्रकृतिनि का अपनी-अपनी प्रकृतिनि विषैं संक्रमण होय है । सो ऐसै संक्रमण करण भी आत्मा के भावनि के अनुसार ही है ।

जहां जो जीव शुभ लेश्यादिक शुभभावनि रूप परिणवै है,तहां असातावेदनीय आदि अशुभ प्रकृतिनि का द्रव्य सातावेदनीय आदि शुभ प्रकृतिनि विषैं संक्रमरण हो है ।

अर अशुभलेश्यादिक अशुभभावनिरूप परिरणवै है, तहाँ सातावेदनीय आदि शुभ-प्रकृतिनि का द्रव्य असातावेदनीय आदि अशुभप्रकृतिरूप होय परिणवै है । ऐसा संक्रमरण विषैं विधान जानना ।

अब कर्म का उपशांत करण कहिये हैं –

सत्ता विषैं तिष्ठता अपनी-अपनी स्थिति कों धरै हैं ज्ञानावरणादिक कर्म का द्रव्य जा विषैं, जाकी जावत् काल उदीरणा न होय, तावत्काल उपशांतकरण कहिये ।

जो शुभाशुभकर्म, आत्मा के तीव्र-मंदकषायनि कों अनुभाग सहित शुभाशुभ-भावनि करि जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट स्थिति कूं धरैं बंध्या है, सो दृढरूप होय तिष्ठै है । ताकी जावत् उदीरणा होने योग्य अधिक-हीन अनुभाग कों धरैं आत्मा के भाव न होय, तावत् तिस कर्म की उदीरणा करने को समर्थ न होय, तब वैसें ही तीव्र-मंद अनु-भाग धरचा आत्मा के उदीरणा योग्य भाव होय, तब तिस-कर्म की उदीरणा करनें को समर्थ होय । तातैं जावत्काल जिस कर्म की उदीरणा तो न होय अर और-और करण होय, तावत्काल उपशांतकरण कहिये हैं ।

अब निधत्तिकरण कहिये हैं –

सत्ता विषैं तिष्ठते ज्ञानावरणादिक कर्म, तिन विषैं तिस कर्म का द्रव्य जावत्काल उदीरणा भी न होय, अर संक्रमण भी न होय, तावत् काल निधत्तिकरण कहिये । जो कर्म जैसी स्थिति-अनुभाग कों धरैं आत्मा के शुभाशुभ भावनि करि

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

वरचा हैं, तैसे ही जावत्काल अति दृढ़ होय निधत्तिकरणरूप होय तिष्ठै है; ताकी जावत्काल उदीरणा वा संक्रमण न करि सकै, तावत् तिस कर्म की निधत्ति अवस्था कहिये है।

अब निःकाचित अवस्था कहिये हैं –

सत्तारूप तिष्ठते ज्ञानावरणादिक कर्म, तिन विषैं जिस कर्म के द्रव्य का जावत् काल उदीरणा भी न होय अर संक्रमण भी न होय, उत्कर्षण, अपकर्षण भी न होय; तावत् काल तिस कर्म की निःकाचित अवस्था कहिये, जो कर्म जैसा स्थिति-अनुभाग कों धरैं, आत्मा के शुभाशुभ भावनि करि बंध्या है, तैसे ही अत्यन्त दृढ़ होय निःकाचित अवस्था कों धरैं तिष्ठै है। ताकी जावत्काल उदीरणा, संक्रमण, उत्कर्षण, अपकर्षण चारों करण करवाने आत्मा का परिणाम असमर्थ होय, तावत्-काल तिस-कर्म की निःकाचित अवस्था जाननी।

ऐसै ए कर्म की दश अवस्था होय हैं। सो तिनकों जीव का भाव ही कारण है। तहां अपूर्वकरण अष्टम गुणस्थान पर्यन्त तो सर्व दश ही करण होय हैं। ऊपर अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान पर्यन्त उपशांतकरण, निधत्तिकरण, निःकाचितकरण ये तीन करण न पाइये, तहाँ सात करण ही हैं। ऊपर संक्रमणकरण का अभाव भया; तहाँ छह प्रकार करण ही है। अर उपशांतकषाय ग्यारहवें गुण-स्थान विषैं संक्रमण करण करै है। तातैं तहां सात करण हैं, जातें तहाँ मिथ्यात्व को संक्रमण पाइये हैं। तिसतैं ऊपर अयोगी विषैं सत्त्व अर उदय दोय करण पाइये हैं।

अब पंच सामान्य-भाव अर तिरेपन विशेष-भाव, गुणस्थान अर मार्गणास्थान विषैं लगावे हैं।

प्रथम गुणस्थान पर लिखिये हैं – सामान्य पंच भावनि विषैं मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र तीन गुणस्थानन विषैं औदयिक, क्षायोपशमिक, पारिणामिक तीन भाव कहै हैं। बहुरि असंयतादि अप्रमत्तपर्यन्त चार विषैं वा उपशम श्रेणी के अपूर्वकरणादि उपशांतकषायपर्यन्त चार विषैं इन आठ विषैं औपशमिक, क्षायोपशमिक, क्षायिक, पारिणामिक ये पांच भाव हैं। बहुरि अपूर्वकरणादि क्षीणकषाय पर्यन्त चार गुण-स्थान विषैं औपशमिक भाव विना चार भाव पाइये हैं। सयोगी, अयोगी दोय विषैं औदयिक, क्षायिक, पारिणामिक ए तीन भाव पाइये हैं।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अब गुणस्थानन विषैं विशेष भाव कहिये हैं –

मिथ्यात्व गुणस्थान विषैं – औदयिक २१, पारिणामिक ३, क्षायोपशमिक कुमति, कुश्रुति, कुअवधि, ऐसैं ये ३, चक्षुदर्शन-अचक्षुदर्शन, अर ५ क्षायोपशमिकलब्धि-दान, लाभ, भोग,उपभोग, वीर्य ऐसै चौंतीस भाव पाइये ।

सासादन विषैं – पूर्वोक्त चौंतीस भाव विषैं मिथ्यात्व, अभव्य, दोय भाव विना बत्तीस भाव पाइये ।

मिश्र विषैं – मिथ्यात्व विना औदयिक का २० अर क्षायोपशमिक ११ – मति श्रुत, अवधि, मिश्रज्ञान, चक्षु, अचक्षु, अवधिदर्शन[1] ,क्षायोपशमलब्धि ५ अर पारिणामिक के २ – जीवत्व, भव्यत्व ऐसै तैंतीस भाव पाइये ।

असंयत विषैं – मिथ्यात्व बिना औदयिक २०, अर क्षायोपशमिक के बारह – मति, श्रुत, अवधिज्ञान ३, केवलविना दर्शन ३, लब्धि ५, क्षायोपशमिक सम्यक्त्व अर पूर्वोक्त पारिणामिक के २, औपशमिक सम्यक्त्व अर क्षायिक सम्यक्त्व, ऐसै छत्तीस भाव पाइये ।

बहुरि देशसंयत विषैं – औदयिक का १४ – मनुष्यगति-तिर्यंचगति २, कषाय ४ वेद ३, लेश्या – पीत-पद्म-शुक्ल ३, अज्ञान, असिद्धत्व; क्षायोपशमिक का मति-श्रुत-अवधिज्ञान ३, दर्शन केवल विना ३, लब्धि ४, क्षायोपशमिक सम्यक्त्व, देशसंयम ए तेरह; पारिणामिक का २, अर औपशमिक सम्यक्त्व, क्षायिक सम्यक्त्व, ऐसै इकतीस भाव पाइये ।

प्रमत्त विषैं – पूर्वोक्त औदयिक का १४ विषैं तिर्यंचगति विना १३, क्षायोपशमिक विषैं पूर्वोक्त १३ तेरह विषैं देशसंयम विना १२, अर मन:पर्ययज्ञान अर क्षायोपशमिक चारित्र ऐसैं १४, पारिणामिक का २ औपशमिक सम्यक्त्व, क्षायिक-सम्यक्त्व ऐसै इकतीस भाव हैं ।

अप्रमत्त विषैं – प्रमत्त गुणस्थानवत् ।

---

१. अवधिदर्शन का अध्वान चौथे गुणस्थान से बाहरवें गुणस्थान तक माना गया है । सर्वार्थ सिद्धि सूत्र ९, पेज नं. २३, अध्वान शब्द का अर्थ है – कहाँ से कहाँ तक ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अपूर्वकरण विषैं – औदयिक के बारह – मनुष्यगति, कषाय ४, वेद ३, लेश्या-शुक्ल, अज्ञान, असिद्धत्व; क्षायोपशमिक के १२ – केवलबिना सुज्ञान ४, केवल बिना दर्शन ३, लब्धि ५; पारिणामिक के २, औपशमिक के २ – औपशमिक सम्यक्त्व, औपशमिक चारित्र, अर क्षायिक के २ - क्षायिक सम्यक्त्व, क्षायिकचारित्र ऐसे उनतीस भाव हैं।

अनिवृत्तिकरण में – २६ भाव हैं, अपूर्वकरण गुणस्थानवत्।

सूक्ष्मसाम्पराय विषैं – औदयिक के ४ - मनुष्यगति, लोभकषाय, लेश्या शुक्ल, अज्ञान, असिद्धत्व, क्षायोपशमिक के पूर्वोक्त १२, पारिणामिक के २, औपशमिक के २, क्षायिक के २; ऐसें तेईस भाव हैं।

उपशांतकषाय विषैं – मनुष्यगति, लेश्या शुक्ल, अज्ञान, असिद्धत्व ये औदयिक के ४; क्षायोपशमिक के पूर्वोक्त बारह १२, पारिणामिक के २, औपशमिक के २, क्षायिक का १ ऐसे इकतीस भाव हैं।

क्षीणकषाय गुणस्थान विषैं – औदयिक के ४, क्षायोपशमिक के १२, पारिणामिक के २, क्षायिक के २ ऐसें बीस भाव हैं।

सयोग केवली विषैं – मनुष्यगति, शुक्ललेश्या, असिद्धत्व एसें तीन औदयिक का, पारिणामिक का २, क्षायिक के ६ ऐसे चौदह भाव हैं।

अयोग केवली विषैं – पूर्वोक्त १४ विषैं लेश्या बिना तेरह भाव हैं।

गुणस्थानातीत सिद्ध केवलदर्शन, केवलज्ञान, क्षायिक सम्यक्त्व, अनंतवीर्य ऐसे चार तो क्षायिक के अर जीवत्व पारिणामिक ऐसे पंच भाव पाइये। इति गुणस्थान विषैं भावनि का निरूपण समाप्त।

अब चौदह मार्गणास्थान विषैं लगाइये हैं – गति मार्गणाविषैं – नरकगति विषैं-तेतीस भाव हैं – पारिणामिक के ३, औदयिक के १३ – नरकगति, कषाय ४, नपुंसकवेद, लेश्या अशुभ ३, मिथ्यात्व, अज्ञान, असंयम, असिद्धत्व। क्षायोपशमिक मनःपर्ययज्ञान, क्षायोपशमिकचारित्र, देशसंयम तीन बिना १५; औपशमिक सम्यक्त्व, क्षायिक सम्यक्त्व ऐसे तेतीस भाव हैं।

तिर्यंचगति विषैं उनतालीस भाव हैं। पारिणामिक के ३, औदयिक के ३ गति बिना १८, क्षायोपशमिक मनःपर्ययज्ञान अर क्षायोपशमिक चारित्र बिना सोलह १६, औपशमिकसम्यक्त्व, क्षायिकसम्यक्त्व ऐसे उनतालीस भाव हैं।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

मनुष्यगति विषैं तीन गति बिना सर्वभाव हैं।

देवगति विषैं सैंतीस भाव हैं। पारिणामिक के ३, औदयिक के तीन गति अर नपुंसकवेद इन चार बिना १७, क्षायोपशमिक मनःपर्ययज्ञान, क्षायोपशमिक चारित्र, देशसंयम बिना १५, औपशमिक सम्यक्त्व, क्षायिक सम्यक्त्व, यों सैंतीस भाव हैं।

इंद्रियमार्गणाविषैं – एकेंद्रिय के चौबीस भाव हैं। पारिणामिक के ३, औदयिक के १३ – तिर्यंचगति कषाय ४, नपुंसकवेद, लेश्या अशुभ ३, मिथ्यात्व, अज्ञान, असंयम, असिद्धत्व यों तेरह, क्षायोपशमिक के ८ कुमति कुश्रुतज्ञान २, अचक्षुदर्शन, लब्धि ५ यों आठ, सर्व चौबीसभाव। बेंद्रिय-तेंद्रिय के भी पूर्वोक्त २४, चौंद्रिय के २५ पूर्वोक्त २४ अर चक्षुदर्शन १।

असंज्ञी पंचेंद्रिय के २८ – पारिणामिक के ३, औदयिक के तीन गति, पद्म-शुक्ल दोय लेश्या इन पांच बिना १६, क्षायोपशमिक के ९ – कुमति-कुश्रुतज्ञान २ अर चक्षु-अचक्षुदर्शन २, लब्धि ५, ऐसै अट्ठाईस भाव हैं।

संज्ञी पंचेंद्रिय के सर्व तिरेपन भाव हैं।

कायमार्गणा विषैं – पंच स्थावरकाय विषैं प्रत्येक में एकेंद्रीवत्२४ भाव हैं। त्रसकाय विषैं सर्व ५३ भाव हैं।

योगमार्गणा विषैं – सत्य मन योग, अनुभय मन योग, सत्य वचन योग, अनुभय वचन योग, इन चार योगनि विषैं प्रत्येक-प्रत्येक के सर्व तिरेपन भाव हैं।

असत्यमन योग, उभयमन योग, असत्यवचन योग, उभयवचन योग इन चार योगनि विषैं क्षायिक के सातभाव विना अर क्षायिक सम्यक्त्व अर क्षायिकचारित्र सहित प्रत्येक में ४६ भाव हैं। बहुरि औदारिककाय योग विषैं देव, नरक दोय गति विना इक्यावनभाव हैं। औदारिकमिश्रकाय योग विषैं ४५, औपशमिक के २, क्षायोपशमिक के मनःपर्ययज्ञान, अर अवधिज्ञान, संयमासंयम, क्षायोपशमिकचारित्र ऐसे ४. इसप्रकार पूर्वोक्त ५१ विषैं इन छह विना ४५ भाव हैं। वैक्रियक काय विषैं ३९ भाव हैं – पारिणामिक के ३, औदयिक के मनुष्य, तिर्यंच, दोय गति विना १९, क्षायोपशमिक के मनःपर्ययज्ञान, क्षायोपशमिक चारित्र, देशसंयम इन तीन विना १५, औपशमिक क्षायिक सम्यक्त्व, यों ३९, वैक्रियकमिश्र में विभंग विना ३८ भाव हैं। आहारक-आहारकमिश्र विषैं प्रत्येक प्रत्येक में २७ - पारिणामिक के अभव्यभाव विना २, औदयिक के ११ – मनुष्यगति, चार कषाय, पुरुषवेद, शुभलेश्या३,अज्ञान, असिद्धत्व, ऐसे ११;

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अर क्षायोपशमिक के तेरह १३ – सुज्ञान ३ ,दर्शन ३, लब्धि ५, क्षायोपशमिक सम्यक्त्व क्षायोपशमिक चारित्र, एवं तेरह अर क्षायिक सम्यक्त्व यों सत्ताईस २७ । कार्मणयोग विषैं ४८ भाव हैं। पारिणामिक के ३, औदयिक के २१, क्षायोपशमिक के १४ – मन:पर्यय और विभंग दोय बिना ज्ञान ६, दर्शन ३, लब्धि ५, क्षायोपशमिक सम्यक्त्व एवं १४, औपशमिक सम्यक्त्व, क्षायिक के ६, यों अड़तालीस भाव हैं ।

अब वेदमार्गणा विषैं कहिये हैं – पुरुषवेद विषैं ४३ – पारिणामिक के तीन ३, औदयिक के नरकगति, स्त्री-नपुंसक दोय वेद इन तीन बिना १८, क्षायोपशमिक के १८, औपशमिक के दोय, क्षायिक के २, यों तियालीस । स्त्रीवेद विषैं ४२ भाव हैं– पारिणामिक के ३, औदयिक के नरकगति, पुरुष-नपुंसकवेद इन तीन बिना अठारह, क्षायोपशमिक के मनःपर्ययज्ञान बिना १७, औपशमिक के २, क्षायिक के २ यों बयालीस । नपुंसकवेद विषैं ४२ – पारिणामिक के ३, औदयिक के देवगति, स्त्री-पुरुष दोय वेद इन तीन बिना १८, क्षायोपशमिक के मन:पर्ययज्ञान बिना १७, औपशमिक के २, क्षायिक के २, ऐसैं बयालीस ४२ ।

कषायमार्गणा विषैं – क्रोध, मान, माया, लोभ विषैं प्रत्येक के ४३ – पारिणामिक के ३, औदयिक के स्वकीय रहित तीन कषाय बिना १८, क्षायोपशमिक के १८, औपशमिक के २, क्षायिक के २ ऐसैं तेतालीस ।

ज्ञानमार्गणा विषैं – कुमति, कुश्रुत, विभंग विषैं प्रत्येक के चौंतीस भाव हैं – मिथ्यात्व गुणस्थानवत् पारिणामिक के ३, औदयिक के २१, क्षायोपशमिक के १० – कुज्ञान ३, दर्शन २, लब्धि ५, ऐसैं ३४ । मति,श्रुत, अवधि तीन सुज्ञान विषैं ४१ पारिणामिक के अभव्यबिना २, औदयिक के मिथ्यात्वबिना २०, क्षायोपमिक के तीन कुज्ञान बिना १५, औपशमिक के २, क्षायिक के २, ऐसैं इकतालीस ४१ । मन:पर्यय-ज्ञान विषैं इकतीस – पारिणामिक के २, औदयिक के ग्यारह ११ – मनुष्यगति, कषाय ४, पुरुषवेद, लेश्याशुभ ३, अज्ञान, असिद्धत्व ऐसे ग्यारह, क्षायोपशमिक के १४ – ज्ञान ४, दर्शन ३, लब्धि ५, क्षायोपशमिक सम्यक्त्व, क्षायोपशमिक चारित्र, औपशमिक के २, क्षायिक के २, ऐसैं इकतीस । केवलज्ञान विषैं १४, पारिणामिक के २, औदयिक के मनुष्यगति, शुक्ललेश्या, असिद्धत्व एवं तीन, क्षायिक के ६ ।

संयम मार्गणा विषैं – सामायिक, छेदोपस्थापना विषैं ३३ – पारिणामिक के २, औदयिक के १३ – मनुष्यगति, कषाय ४, वेद ३, लेश्या शुभ ३, अज्ञान, असिद्धत्व

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

क्षायोपशमिक के १४ – ज्ञान केवल विना ४, दर्शन ३, लब्धि ५, क्षायोपशमिक सम्यक्त्व क्षायोपशमिक चारित्र; औपशमिक के २, क्षायिक के २; परिहार-विशुद्धि विषैं २७ – पारिणामिक के २, औदयिक के ११ – मनुष्यगति, कषाय ४, पुरुषवेद, लेश्याशुभ ३, अज्ञान, असिद्धत्व; क्षायोपशमिक के १३ – सुज्ञान आदि के ३, दर्शन के ३, लब्धि ५, क्षायोपशमिक सम्यक्त्व, सूक्ष्मसांपराय विषैं २३ सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानवत् । यथाख्यात विषैं २९ – पारिणामिक के २, औदयिक के ४ – मनुष्यगति, शुक्ललेश्या, अज्ञान, असिद्धत्व; क्षायोपशमिक के १२ – केवल विना ज्ञान ४, दर्शन ३, लब्धि ५, औपशमिक के २, क्षायिक के ९ । संयमासंयम विषैं ३१, देशसंयम गुणस्थानवत् । असंयम विषैं ४१ – पारिणामिक के तीन ३, औदयिक के २१, क्षायोपशमिक के पंद्रह १५ – मनःपर्ययज्ञान, क्षायोपशमिक चारित्र, देशसंयम इन तीन विना; औपशमिक सम्यक्त्व, क्षायिकसम्यक्त्व ।

दर्शनमार्गणा विषैं – चक्षुदर्शन विषैं क्षायिक के सात विना ४६ । अचक्षुदर्शन विषैं भी ४६ । अवधिदर्शन विषैं मति-श्रुत-अवधिज्ञानवत् ४१ । केवलदर्शन विषैं केवल ज्ञानवत् १४ ।

लेश्यामार्गणा विषैं – कृष्ण, नील, कापोत तीन लेश्या विषैं प्रत्येक-प्रत्येक के ३६ – पारिणामिक के ३, औदयिक के पांच लेश्या विना १६, क्षायोपशमिक के मनः-पर्यय ज्ञान, क्षायोपशमिक चारित्र, देशसंयत इन तीन विना १५, औपशमिक सम्यक्त्व, क्षायिक सम्यक्त्व । पीत, पद्म दोय लेश्या विषैं प्रत्येक-प्रत्येक के ३८ – पारिणामिक के ३, औदयिक के नरकगति अर पांच लेश्या ऐसें ६ बिना १५, क्षायोपशमिक के १८ औप-शमिक सम्यक्त्व, क्षायिक सम्यक्त्व । शुक्ललेश्या विषैं नरकगति, पांच लेश्या ऐसें छह औदयिक के बिना ४७ ।

भव्यमार्गणा विषैं – भव्य के अभव्यबिना ५२ । अभव्य के भव्य भाव बिना ३३ मिथ्यात्वगुणस्थानवत् ।

सम्यक्त्वमार्गणा विषैं – औपशमिक सम्यक्त्व विषैं ३८ – पारिणामिक के २, औदयिक के मिथ्यात्वबिना २०, क्षायोपशमिक के १४ (– केवलबिना सुज्ञान ४, दर्शन ३, लब्धि ५, क्षायोपशमिक चारित्र, देशसंयम) औपशमिक के २ । क्षायोपशमिकसम्यक्त्व विषैं ३७ – पारिणामिक के २, औदयिक के मिथ्यात्व बिना २०, क्षायोपशमिक के तीन कुज्ञानबिना १५ । क्षायिक विषैं ४६ – पारिणामिक के २, औदयिक के मिथ्यात्व

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बिना वीस २०, क्षायोपशमिक के तीन कुज्ञान अर क्षायोपशमिकसम्यक्त्व विना १४, औपशमिकचारित्र, क्षायिक के ९। मिथ्यात्व में ३४ मिथ्यात्वगुणस्थानवत्। सासादन में ३२ सासादनगुणस्थानवत्। मिश्र में ३३ मिश्रगुणस्थानवत्।

संज्ञी विषैं सर्व तिरेपन ५३। असंज्ञी विषैं २८ – पारिणामिक के तीन ३, क्षायोपशमिक के ९ –(कुज्ञान २, दर्शन २, लब्धि ५) औदयिक के मनुष्य, नरक, देव तीन गति अर पद्म, शुक्ल दोय लेश्या इन पांच विना सोलह १६।

आहार मार्गणा विषैं – आहारक विषैं सर्व ५३, अनाहारक विषैं ४८ – विभंग, मनःपर्यय दोय ज्ञान अर क्षायोपशमिकचारित्र अर देशसंयम इन चार विना क्षायोपशमिक के १४; औपशमिकसम्यक्त्व, क्षायिक के ९, पारिणामिक के ३, औदयिकके २१ यों अड़तालीस। इति आहारमार्गणा।

ऐसैं गुणस्थान, मार्गणास्थान विषैं संभवते भाव कहे।

अब एकैं काल एक जीव के अठारह भाव पाइये — तीन परिणामिकभाव विषैं दोय भाव पाइये – जीवत्व १, भव्यत्व १, वा जीवत्व १, अभव्यत्व १; औदयिकभाव विषैं ७ पाइये –(चार गति विषैं एक गति, चार कषाय विषैं एक कषाय, तीन वेद विषैं वेद १, छह लेश्या विषैं लेश्या १, मिथ्यात्व, अज्ञान, असिद्धत्व) वहुरि पांच संयम विषैं १ (असंयम, देशसंयम, क्षायोपशमिक चारित्र, औपशमिक चारित्र, क्षायिक चारित्र इन पांच विषैं एक होय) अर आठ ज्ञान विषैं एक ज्ञान होय; चार दर्शन में एक दर्शन होय; औपशमिक, क्षायोपशमिक, क्षायिक तीन सम्यक्त्व विषैं एक सम्यक्त्व, लब्धि ५ ऐसै अठारह होय।

तहां नरकगति विषैं १७ – पारिणामिक के २ तीन कुज्ञान, तीन सुज्ञान, तीन दर्शनविषैं १, गति नरक १, कषाय १, वेद नपुंसक १, तीन अशुभ लेश्या विषैं १, मिथ्यात्व अज्ञान, असंयम, असिद्धत्व, लब्धि ५, तीन सम्यक्त्व विषैं १ ऐसै १७ भाव पाइये।

तहां मिथ्यात्व गुणस्थान विषैं सम्यक्त्व विना १६। सासादन, मिश्र विषैं मिथ्यात्व विना १५। असंयत विषैं सुज्ञान तीन, सम्यक्त्व में एक सम्यक्त्व सहित १६ ही पाइये।

तिर्यंचगति विषैं १७ – पारिणामिक के २, तिर्यंच गति १, तीन वेद विषैं १, कषाय १, छह लेश्या विषैं १, मिथ्यात्व, अज्ञान, असिद्धत्व, संयम-असंयम-देश संयम विषैं १, आठ ज्ञान विषैं ३, दर्शन विषैं १, लब्धि ५, तीन सम्यक्त्व विषैं १।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तिन विषैं मिथ्यात्व में सम्यक्त्व विना असंयम सहित १६, सासादन में १५, मिश्र में पन्द्रह १५, असंयत में तीन सम्यक्त्व में एक सम्यक्त्व सहित अर सुज्ञान सहित १६, देशसंयत विषैं देश संयम सहित तीन, शुभ लेश्या में एक लेश्या सहित १६ ।

मनुष्यगति विषैं – मनुष्यगति सहित सर्व १७ भाव पाइये । मिथ्यात्व गुणस्थान में सम्यक्त्व विना १६ । सासादन में मिथ्यात्व विना १५ । मिश्र में १५ । असंयत में सुज्ञान सहित अर तीन सम्यक्त्व सहित १६ । देशसंयत में असंयम रहित देशसंयम सहित अर तीन शुभलेश्या में एक लेश्या सहित १६ । प्रमत्त-अप्रमत्त में चार ज्ञान, तीन दर्शन में एक, क्षायोपशमिक चारित्र सहित १६ । अपूर्वकरण-अनिवृत्तिकरण उपशम श्रेणि में औपशमिक सम्यक्त्व वा क्षायिक सम्यक्त्व दोय विषैं एक, औपशमिक चारित्र शुक्ल लेश्यासहित १६ । अपूर्वकरण-अनिवृतिकरण क्षपकश्रेणि में क्षायिकसम्यक्त्व, क्षायिकचारित्र भाव सहित १६ भाव पाइये । बहुरि सूक्ष्म सांपराय-उपशम श्रेणि में एक वेद रहित १५ भाव पाइये । बहुरि उपशांतकषाय विषैं एक कषाय विना १४ भाव पाइये । बहुरि सूक्ष्मसांपराय क्षपक श्रेणि में वेदविना १५ भाव पाइये । क्षीणकषाय विषैं कषाय विना १४ भाव पाइये । सयोगकेवली के मनुष्यगति, शुक्ललेश्या, असिद्धत्व, केवलज्ञान, केवलदर्शन, क्षायिकसम्यक्त्व क्षायिकचारित्र, अर पांच क्षायिक लब्धि, पारिणामिक के २ ऐसे चौदह भाव पाइये । अयोगकेवली के लेश्या विना १३ भाव पाइये ।

देवगति विषैं – देवगति सहित अर पुरुष-स्त्री दोय वेद विषैं एकवेद सहित १७ भाव पाइये । तहां मिथ्यात्व गुणस्थान विषैं सम्यक्त्व विना १६ । सासादन में मिथ्यात्व विना पन्द्रह १५ । मिश्र विषैं १५ । असंयत विषैं सुज्ञान सहित अर तीन सम्यक्त्व में एक सम्यक्त्व ऐसें सोलह भाव पाइये । ऐसै एकै काल एकै जीव के चारों गति विषैं भाव संभवने का निरूपण किया ।

या प्रकार सर्वभावनि के अन्तर्यामी, सर्वदर्शी, सर्वज्ञ ऐसे जिनेन्द्र, तिनने जीवनि के संसार तैं उद्धार करने के अर्थि जीवनि के भावनि की संख्या, भावनि का स्वरूप, भावनि की प्रवृत्ति, भावनि का कार्य भावनि का फल हेय-उपादेय सहित दिखाया । सो ऐसा भगवन्त वाक्य सुनि जे सुधी पुरुष हैं, तिनको जे भाव हेय हैं, तिनका तजन करना; जे भाव उपादेय हैं, तिनका ग्रहण करना ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

इहां शिष्य प्रश्न करै है – हे स्वामी ! इनविषैं हेय भाव कौनसे हैं अर उपादेय भाव कौनसे हैं ? अर इनका तजन-ग्रहण हम जैसे अशक्त जीवनि तैं कौन मार्ग तैं बनै ? सो कृपा करि संक्षेप तैं उपदेश कीजिये ।

ऐसा प्रश्न होतें गुरु उत्तर करैं हैं – एक ही जीव के तिरेपन भाव, तिनविषैं पारिणामिक भाव का तो ग्रहण करना, जातें ये जीव के कर्मनि की सापेक्षता रहित स्वभाव भाव हैं । कर्मजन्य उत्पन्न भये जे विभावभाव, तिनही रूप होय अनादिकाल को प्रवर्त्यो, ताकरि इन पारिणामिक भावनि की गौनता भई, इनरूप प्रवृत्ति अनादि-हीतैं छूट गई, इनरूप अवस्था कदे भई नाहीं, ताहितैं संसार समुद्र डूबा नाना प्रकार के दुःखहिं सहतो नहिं दीखे पार जाको, बहुरि तहाँ तिष्ठता नानाप्रकार कर्म बांधि, तिनके फल को नानाप्रकार भोगता संता पारिणामिक भाव अति क्षीण भये; तापर भी नाश कों प्राप्त न भया । ऐसा जो तू स्वयमेव ही कर्म की उलट-पलट होते इस मनुष्य भव कों प्राप्त भया, उपदेश धारणे कों योग्य भया । जातै चेतना तीन प्रकार है – कर्मफलचेतना, कर्मचेतना, ज्ञानचेतना ।

अपने शुभाशुभ परिणामनि करि बांधे पूर्वे शुभाशुभकर्मनि तें सत्ता रूप थे, ते अपनी स्थिति के क्षीण होते इस मनुष्य भव को प्राप्त भये शुभाशुभकर्म, ताकरि सुख-दुःख के कारण पदार्थनि का संबंध भया, ताकरि उत्पन्न भया सुख-दुःखरूप कर्म उदय का फल, ताको पुरुषार्थ रहित अनुभवता जीव का ज्ञान, सो कर्मफलचेतना कहिये ।

सो कर्मफलचेतना के धारक एकेन्द्री हैं, नहीं है सुख-दुख के कारण पदार्थनि के जानने रूप ज्ञान जिनकैं, अर नहीं है सुख के कारण पदार्थ के मिलावने की इच्छा अर शक्ति जिनकैं, अर नहीं है दुख के कारण पदार्थनि कों परिहार करने की वा भाग जाने की इच्छा अर शक्ति जिनकैं, ऐसे एकेन्द्री जीव कर्म के उदय करि उत्पन्न भया सुख अर दुःखरूप फल ताको, आसक्त हुवा भोगवै है, तातै इनके कर्मफलचेतना कहिये ।

बहुरि शुभाशुभकर्म के उदय तैं संबंध रूप भये वा उत्पन्न भये सुख-दुख के कारण शुभाशुभपदार्थ, तिनके मिलावने की वा परिहार करने की वा भाग जाने की इच्छा व शक्ति सहित ज्ञान, सो कर्मचेतना कहिये ।

सो कर्मचेतना के धारक बेंद्रिय आदी संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्यन्त त्रस जीव हैं । जातैं सुख के कारण पदार्थनि कों मिलावने अर सुखी होने की इच्छा करैं हैं । बहुरि शक्ति कों धरैं हैं, ता करि सुख के कारण पदार्थनि को मिलावें हैं । बहुरि

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

दुख के कारण पदार्थनि को परिहार करने की वा तिनतैं भाग जाने की वा दुख तैं छूटने की इच्छा करैं हैं। बहुरि शक्ति को धरैं हैं, परिहार करैं है, भाग जाय, तातैं इनकों कर्मचेतना कहिये।

बहुरि जिनके शक्ति रहित भये हैं अर नाश कों प्राप्त भये हैं सुख-दुख के कारण शुभाशुभ अघातिया कर्म, अर क्षय कों प्राप्त भये हैं मोह आदि घातिया कर्म, ताकरि सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, राग-द्वेष रहित अनंत शक्ति कों धरैं, ज्ञाता-दृष्टा भाव कों प्राप्त भया तिनका ज्ञान, सो ज्ञानचेतना कहिये।

जातैं ज्ञानचेतना के धारक संसार विषैं तिष्ठते ऐसे सयोगी, अयोगी भगवान हैं। ऐसा तीन प्रकार चेतना का स्वरूप है।

सो कर्मफलचेतना के धारक संसार विषैं तिष्ठते ऐसे एकेन्द्रि जीव, ते तो सर्व प्रकार असमर्थ हैं, तातैं उपदेश योग्य ही नाहीं। बहुरि कर्मचेतना के धारक ऐसे बेंद्री, तेंद्री, चौइन्द्री, असंज्ञी पंचेन्द्रीय, तिनके मन आदि का रहितपना थकी सुखी होने की, दुःखी न होने की इच्छा वर्तै है। तथा किंचित् भाग जाने की शक्ति वर्तै है, और शक्ति का अभाव है। तातैं तुच्छ बुद्धि शक्तियुक्त नै भी उपदेश युक्त नाहीं। बहुरि शक्ति युक्त कर्मचेतना के धारकनि विषैं संज्ञी पचेंद्री तिर्यंचनि विषैं घने जीव तो हीन शक्ति के धारक, हीन ज्ञान के धारक, अत्यन्त क्रूरस्वभावी, ते भी उपदेश ग्रहण करने योग्य नाहीं।

अर किंचित् से जीव उपदेश योग्य हैं। तिन विषैं सामान्य उपदेश ग्रहण करने की शक्ति है, विशेष उपदेश योग्य नाहीं। बहुरि नारकी हैं, ते सदाकाल दुःख करि ग्रसीभूत हैं; वा उपदेश का क्षेत्र नाहीं, उपदेश का योग नाहीं। कोई नारकी कों देवनि का किंचित् उपदेश का योग बने है। अर देव हैं, ते घने तो शाश्वते विषयासक्त हैं, तिनकें उपदेश का ग्रहण ही नाहीं। अर तिन विषैं कितनेक महन्त देव हैं, ते उपदेश योग्य हैं।

बहुरि मनुष्यन विषैं घने जीव तो उपदेश योग्य ही नाहीं, वा घने जीव कों जिनप्रणीत उपदेश का योग जुड़ै ही नाहीं। तातैं तेरे तांई सर्वयोग आय जुड़्या है। वा तो सारिखे और मनुष्यनि को सर्व अवसर भयो है। तिन प्रति ऐसा उपदेश है – जीवतत्त्व पारिणामिक भाव जो अपना स्वभावभाव दृष्टा-ज्ञातापने को धरैं एक जाननमात्र ज्ञानभाव, ताकों पुष्ट करना। बहुरि ताका पुष्ट करने का कारण

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

जो शक्तिरूप ताविषैं पाइये हैं ऐसे सम्यक्त्वभाव अर चारित्रभाव, तिनकों प्रकट करना। बहुरि इनके नाश करने के कारण इक्कीस तो औदयिकभाव अर कुमति, कुश्रुति, कुअवधि तीन क्षायोपशमिक भाव इन चौबीस भावनि को हेय जान तजन करना। मनकरि, वचनकरि, कायकरि, कृतकरि, कारितकरि, अनुमोदनाकरि वा इनके कारण वा इनके कार्य सहित तजन करना।

बहुरि इनके पुष्ट करने के कारण तीन कुज्ञान बिना पंद्रह तो क्षायोपशमिक भाव अर दोय औपशमिकभाव, अर क्षायिक सम्यक्त्व, अर क्षायिकचारित्र ये दोय क्षायिकभाव इन उगणीस भावनि का ग्रहण करना।

अब इनका तजन-ग्रहण कौन प्रकार करना ? सो ही कहिये हैं–

जिनकरि ये संसारी जीव बहिरात्मा होय रहे हैं ऐसे जे पंच विशेषनि को धरैं ऐसा मिथ्यात्वभाव अर अनन्तानुबन्धी विशेषनि को धरैं ऐसे क्रोध, मान, माया, लोभ चार कषायभाव, तिनको इनके पूर्वैं कहि आये कार्य-कारण, तिन सहित सर्वथा तजना। जावत इन भावनिरूप परिणवै है आत्मा, तावत् ये जीव बहिरात्मा है। **सो मिथ्यात्व के तजने का कारणतो तत्त्वज्ञान है। अर तत्त्वज्ञान का कारण शास्त्राभ्यास है। सो धर्मार्थी हुवा पंच अंगनिसहित शास्त्राभ्यास करना।** तहां प्रथम ही तो इन पांच अंगनि सहित अभ्यास करना - श्रवण, धारण, विचारण, आम्नाय, अनुप्रेक्षा।

श्रवण कहिये सुनने की इच्छा सहित रुचिपूर्वक शास्त्र सुनना। धारण कहिये धारणा न भूलना। विचारना कहिये सुन्या अर्थ को भलीभांति विचारना। आम्नाय कहिये शुद्ध घोखरण करना, पूर्व आचार्यनि की आम्नाय मिलावनी। अनुप्रेक्षा कहिये बारंबार चितवन करना।

इन पंच अंगनि करि ज्ञान को पुष्टिकर, बहुरि इनपंच अंगनि को प्रगट करना - वांचना, पृच्छना, आम्नाय, अनुप्रेक्षा, धर्मोपदेश। वांचना कहिये धर्मार्थी हुवा विनय संयुक्त शास्त्र वांचना। बहुरि वांचकरि बहुज्ञानी सों पूछना। बहुरि परंपराय जिन-मत की आम्नाय मिलाय शुद्ध घोखरणा करना। बहुरि तिस अर्थ को बारम्बार चितवन करना। बहुरि शास्त्र संबंधी राग-द्वेष रहित बहुज्ञानी के मुख करि धर्मोपदेश सुनना। बहुरि आम्नाय ने संशय, विपर्यय अनध्यवसाय रहित शास्त्र के अर्थ की जब सिद्धि हो जाय, तब धर्मोपदेश देना। इन अंगनिसहित संशय, विपर्यय, अनध्यवसाय रहित

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तत्त्वज्ञान की सिद्धि हो जाय, ताही समै दर्शन मोह का उपशम भया, तब मिथ्यात्व भाव का अभाव होय जाय; सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होय।

बहुरि पूर्वोक्त अन्याय का तजन करना, न्यायरूप जिनधर्म विषैं प्रवंतना, ताकरि अनंतानुबन्धी चतुष्क का अभाव होय; तब सम्यग्दर्शन की प्रवृत्ति युक्त होय, इस प्रकार मिथ्यात्व अर अनंतानुबन्धी चतुष्क का इनके कुमतिज्ञानादि प्रकृति सहित तजना होय है; तब सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होय है। ताही काल तैं सो जीव अंतरात्मा है।

तब अंतरात्मा हुवा थका जीव अवशेष रहै जो औदयिकभाव, तिनकों इस प्रकार तजना – प्रथम ही तो सांसारीक कषाय कार्यनि विषैं वा विषय कार्यनि विषैं उलटि रहे हैं तन-मन-धन-वचन-ज्ञान-कषाय-विषय ए सप्त भावनि कों देव-गुरु-धर्मादिक की भक्ति आदि धर्मकार्य, तिन विषैं लगाय इनकों पलट देने। बहुरि स्वच्छन्द वृत्ति छोड़ि मर्यादादिक द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की योग्यता देखि कषाय कार्य वा विषय कार्य विषैं न प्रवर्तना, ताकरि इन सर्व दोषनि का संकोच करना। बहुरि शील संयम सूं आखड़ी वा एकादश प्रतिमा रूप देशसंयमादिक का ग्रहण करना, ताकरि इनकौं घटावना। बहुरि मुनिपद धारता श्रेणी विषैं आरूढ़ होय इनका नाश करना। ऐसें चार प्रकार अनुक्रम तैं इनका नाश होय है।

इसप्रकार इन चौबीस भावनि का तो तजन करना। बहुरि उगनीस भावनि का ग्रहण करना। प्रथम ही सो मतिज्ञान वा श्रुतज्ञान कों पुष्ट करना। तिनकी पुष्टता का कारण अर क्षायोपशिकचारित्रभावरूप मुनिपद का कारणभूत सम्यक्त्व सहित देशसंयम का ग्रहण करना। बहुरि मतिज्ञान वा श्रुतज्ञान की अत्यंत पुष्टता का कारण अर चक्षु,अचक्षु, अवधि तीन दर्शन की पुष्टता का वा उत्पत्ति का कारण अवधि, मनःपर्यय ज्ञान की उत्पत्ति का कारण ऐसा क्षायोपशमिकचारित्रभावरूप मुनिपद, ताका ग्रहण करना। बहुरि क्षायिकसम्यक्त्व अर क्षायिकचारित्र का कारणभूत औपशमिकसम्यक्त्व अर औपशमिकचारित्रभाव का ग्रहण करना। बहुरि केवलज्ञान, केवलदर्शन अर पंच क्षायिक लब्धि के ए सप्त कार्य रूप भावनि को कारण ऐसे क्षायिकसम्यक्त्व क्षायिकचारित्र, तिनकूं ग्रहण करना। इन भावनि पर्यन्त जीव अंतरात्मा है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि क्षायिकचारित्र भाव का बल करि चार घातिया कर्मनि को नाश करि केवलज्ञान, केवलदर्शन, लब्धि ५ इन सप्त भावनि का प्रगट होना; तहां ए जीव परमात्मा होय है।

जहांपर्यन्त या जीव के मिथ्यात्व अर अनंतानुबन्धी चतुष्क का उदय पाइये हैं, तहांपर्यंत तो यह पर्यायदृष्टी है। कर्म के उदयजन्य जैसी आप पर्याय पावै है वा जैसी अन्य जीव-पुद्गलादिक की पर्याय का संबंध मिलै है वा जैसा यथार्थ-अयथार्थ देव-गुरु-धर्म, आप्त-आगम-पदार्थनि का संबंध मिलै है; ताही रूप होय प्रवर्तै हैं। जातैं जाके बाह्यदृष्टि हैं, अंतर द्रव्यदृष्टि नाहीं; मिथ्याज्ञान है सम्यक्ज्ञान नाहीं; मिथ्यादर्शन है, सम्यक् श्रद्धान नाहीं; मिथ्याप्रवृत्ति है, सम्यक् प्रवृत्ति नाहीं; तहां पर्यंत बहिरात्मा कहिये।

बहुरि जिसकाल तैं याकैं तत्त्वज्ञान भया, सम्यग्दर्शन की प्राप्ति भई, ताही काल तैं बाह्य पर्यायदृष्टि छूटी अर अंतर द्रव्यदृष्टि भई, यथाश्रद्धान, यथाज्ञान, यथाप्रवृत्ति होती भयी। यथार्थ-अयथार्थ देव-गुरु-धर्म, आप्त-आगम-पदार्थ विषैं सांचा जानना भया, ताही काल तैं चतुर्थगुणस्थान तैं ले क्षीणकषाय बारमा गुणस्थान पर्यंत ये अंतरात्मा कहिये।

बहुरि मलरूप चार घातिया कर्मनि का नाश होते अपने अनंत चतुष्टयरूप स्व-स्वभाव प्रगट भया। तहां तैं ले सिद्धभगवान पर्यंत परमात्मा कहिये।

ऐसा परमकल्याण का कारण शिष्यप्रति गुरु का उपदेश होता भया। या प्रकार जीव के स्वभावभाव, विभावभाव, शुद्धभाव इन तीन भावनि का अर परभाव वर्णादिक पुद्गल के भावनि का प्रकाशरूप ऐसा ये सार्थक नाम का धारक **"भावदीपिका"** नाम ग्रन्थ की रचना भई, सो कपोल कल्पित नाहीं है।

सर्व भावनि के अंतरजामी ऐसे श्री वर्धमान देवाधिदेव, तिनके मुखरूप चन्द्रमा थकी उत्पन्न भई दिव्यध्वनिरूप चांदनी, ताकरि प्रकाशित भये जीव के परम कल्याण के कारणरूप रत्न, तिनकों सर्व संघ के नायक ऐसे श्री गौतमगणधर देव, ते द्वादशांग रचना विषैं मुख्यपनैं धरते भये।

जातैं सर्व मोक्षमार्ग विषैं भाव ही प्रधानरूप हैं। जातैं स्व-पर का भाव ही तैं विभाग होय है, भावविना स्व-पर का जानना होता नाहीं, स्वपर को जाने विना

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

स्वभाव, विभाव, परभाव का ज्ञान होता नाहीं। स्वभाव-परभाव को जाने विना परभाव कों त्याग करि अपने स्वभाव विषैं स्थिरिभूत होय कैसें तिष्ठै ? बहुरि स्वभाव विषैं स्थिरीभूत भये विना रागादिक विभावभाव अर ज्ञानावरणादिक परभाव का रुकना कैसें होय ? सत्तारूप तिष्ठते कर्मनि की निर्जरा कैसे होय ? बहुरि कर्म की निर्जरा न होय, तब मोक्ष कहां तें होय ? तातें भावनि के जानने ही को परम कारणपना संभवै है।

ताहीं तैं मोक्ष के कारण जीवादिक सप्त तत्त्वनि विषैं जीव, अजीव ही दोय तो द्रव्यरूप मूलतत्त्व कहे। अर आस्रवादि पंच भाव तत्त्व कहे हैं। बहुरि मोक्ष मार्ग के कारण बाह्य देव-गुरु-धर्म, आप्त-आगम-पदार्थ, तिनका यथार्थ-अयथार्थ का जानना वा तिनविषैं यथाश्रद्धान वा तिनविषैं यथावत् प्रवृत्ति भावनि के जानने ही तैं होय है।

बहुरि पूजा, दान, शील, तप, संयम, जप, सर्व धर्म अंग भावनि के ज्ञान विना वृथा होय हैं। सर्व ही धर्म अंग स्वभावभाव सहित होते संते स्वर्ग-मोक्ष के कारण होय, सफल होय। परभाव सहित होते ऐसे निष्फल होय हैं। विभावभाव सहित होते संते नरक-निगोदरूप खोटे फलके दाता होय हैं।

तातैं भाव का जानना प्रधानभूत जानि, गणधरस्वामी द्वादशांग विषैं इनकी प्रधान रचना करी। ताके अनुसार सम्यग्ज्ञानी बड़े-बड़े आचार्य मुनि आदिक ग्रंथनि विषैं रचना करते आए। तिनही अनुसार आचार्य श्री नेमिचन्द्रादिकनि करि रचित चार अनुयोग रूप जिनकी अबार प्रवृत्ति पाइये ऐसें गोम्मटसारादिक शास्त्र, तिनके अनुसार रचना करी है। सो या विषैं कोई मेरी बुद्धि की मंदता के वश तैं अन्यथा भी रचना भई होय, सो मैं कषायनि तें अन्य रचना नाहीं करी है। मेरी अज्ञानता का दोष जानि सम्यग्ज्ञानी पंडितजन हैं, तिन को मेरे पर अनुग्रह करि शुद्ध करि लैना। अज्ञानी जान रोष न करना। जे महंत बड़े पुरुष हैं, ते बालकनि की नाना-प्रकार कुचेष्टा होते भी तिसपर रोष नाहीं करैं हैं।

इस **"भावदीपिका"** ग्रन्थ की भाषा वचनिका रचना करि सो हम सारिखे अल्पबुद्धीनि के पढ़ने अर्थि वा इसतै सम्यग्ज्ञान करने के अर्थि वा सुगमता तैं धारण रहने कै अर्थि वा अर्थ विस्मरण होते संतैं शीघ्र याद करने के अर्थि करी है। कोई क्रोध, मान, माया, लोभ, जस, बड़ाई आदि कषाय पोषने के अर्थि नाहीं करी है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि मूर्खनि के अर्थि नाहीं करी है। सम्यग्ज्ञानी पंडितनि के अर्थि करी है। वा भद्रपरिणामी अपने कल्याण के अर्थि अज्ञानीनि के ज्ञान करने के अर्थि करी है।

१:—कैसे हैं मूरख ? नाहीं जानें हैं जैन मत का रहस्य, आम्नाय अर किंचित् शब्दज्ञान करने तैं दग्ध भये हैं पंडिताई के अभिमान विषैं, क्रूर है स्वभाव जिनका नाहीं देख सकें हैं पराये गुणरूप भाव, अर दोष ही का ग्रहण है जिनके, नाहीं सुहावै है पराया कर्त्तव्य जिनकों, बिना देखे, बिना विचारे दूर ही तैं तजें हैं पराये गुणरूप कार्य अर लगावै हैं दोष जिनके, ऐसे रौद्र कषायी, स्व-पर के अकल्याण के कारण, तिनके अर्थि भावदीपिका की रचना नाहीं करी है।

२:- बहुरि कैसे हैं मूरख मिथ्यादृष्टि ? कुबुद्धि पंडितनि करि ग्रहण कराया अर्थ, ताकों अनेक प्रकार पंडितनि करि सीख दीजिये हैं, बाधा पर तो नाही धरैं हैं दृष्टि, अर ताहीं कों सत्य मानें हैं, तिनके अर्थी भावदीपिका की रचना नाहीं करी है।

३:- बहुरि कैसे हैं मूरख ? आय गये हैं कुबुद्धि मिथ्यादृष्टिनि की पक्ष विषैं, नाहीं है गुण-दोष का ज्ञान जिनको, तिनके अर्थ भावदीपिका की रचना नाहीं करी है।

४:-बहुरि कैसे हैं मूरख ? खोटें अर्थ का ग्रहण जानते थकी भी हठ करि नाहीं छोड़े हैं पक्ष जिनको तिनके अर्थी भी भावदीपिका की रचना नाहीं करी है।

५:- बहुरि कैसे हैं मूरख ? नही हैं आप विषैं ज्ञानादि गुण का लेश, तो भी आपकों गुणवान मानें हैं। आपकों गुणवान जनावने के अर्थी मूरखन सों चर्चा करते फिरें हैं, झगड़ते फिरे हैं, ज्ञानीनि सों लड़ते फिरें हैं, तिनके अर्थी भावदीपिका की रचना नाहीं करी है।

६:- बहुरि कैसे हैं मूरख ? नाहीं है परभव की आस्था जिनके, इस ही भव के कार्यनि विषैं संतुष्ट हैं, नाहीं सुनें हैं सन्मुख होय सिद्धान्त का वचन, तिनके अर्थी भी भावदीपिका की रचना नाहीं करी है।

७:- बहुरि कैसे हैं मूरख ? ज्ञान कर हीन हैं। अनेक प्रकार उपदेश होतें भी रंचमात्र भी नाहीं समझें हैं। तिनके अर्थी भावदीपिका की रचना नाहीं करी है।

८ -बहुरि कैसे हैं मूरख ? मान-महंतता वा पेट भरने के अर्थी धर्या है खोटा भेष जिन्होंने वा अयथार्थ जिनमत तैं जोड़ी है आजीविका जिन्होंने, ताके अर्थी आप महंत बन, आप खोटा उपदेश देय, भोले जीवनि का तन, धन, मन, वचन, ज्ञान, श्रद्धान खोटे धर्म विषैं प्रवर्तावैं हैं, ताकरि तिनका अकल्याण करैं हैं; ऐसे कुबुद्धि मूरखनि के अर्थी या भावदीपिका की रचना नाहीं करी है। इत्यादि इन अष्टप्रकारादि मूरखनि के सत्यधर्म का ग्रहण सर्वथा होय नाहीं।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तो कौन के अर्थी करी है ? जो सम्यग्ज्ञानी, गुणदोष के जानन हारें, नहीं हैं पुरुषनि सों राग-द्वेष जिनके, जिनमत की रहस्य आम्नाय जाननहारे पंडितपुरुष, तिनके अर्थी करी है । वा जे भद्रपरिणामी मंदकषायी अपने कल्याण के अर्थि भये हैं जिन-मत के सन्मुख, तिनके ज्ञान होने के अर्थी भावदीपिका की रचना करी है ।

इहां प्रश्न – जो तुम करि तो इन भावनि की रचना करी नाहीं, तो इनकी रचना सम्यग्ज्ञानी पंडितनि करि किये संस्कृत प्राकृतरूप महानग्रन्थ तिनविषें तो थी ही, अब इनकों भाषा वचनिका विषें काहे को करी ? वा और महान ग्रन्थनि की अन्य-जीवनि करि करी देशभाषा, ताका प्रयोजन कहा (क्या ?) संस्कृत प्राकृतरूप भाषा तीन लोक विषें प्रसिद्ध, ताकूं छोड़ि आप भ्रमरूप देशभाषा विषें शास्त्ररचना काहे को करिये ?

ताका समाधान – काल दोष तै सम्यग्ज्ञानी, वीतराग प्रवृत्तिनि के धारक यथार्थ वक्तानि का तो अभाव भया अर अवसर्पिणी काल के निमित्त तैं जिनमत विषें कुलिंग के धारक प्रचंड हैं क्रोध, मान, माया, लोभादिक कषाय जिनके, अरपंच इंद्रियनि के विषय में हैं आसक्तभाव जिनके, साक्षात् गृहीत मिथ्यात्व के पोसने तैं जिनमत के विषें वक्ता भये, जिनसूत्र के अर्थ अन्यथा करने लगे, ता करि भोले जीव तिनकी बताई प्रवृत्ति विषें प्रवर्तते भये, नहीं है सत्य सूत्र का ज्ञान जिनको अर नाहीं है संस्कृत का ज्ञान तिनको, ताकरि महान शास्त्रनि का ज्ञान तिनतैं अगोचर भया । ताकरि मूढ़ता को प्राप्त भये, हीन शक्ति भये । सत्य वक्ता, सांचा जिनोक्त सूत्र का अर्थ ग्रहण करा-वनेहारा कोई रहा नाहीं । तातैं सत्य जिनमत का तो अभाव भया । तब धर्म तैं परान्मुख भये । तब कोई-कोई गृहस्थ सुबुद्धि संस्कृत-प्राकृत का वेत्ता भया । ताकरि तिन सूत्रनि को अवगाहा । तब ऐसा प्रतिभासता भया – जो सूत्र के अनुसार एक भी श्रद्धान, ज्ञान, आचरण की प्रवृत्ति न करें हैं; अर बहुत काल होय गया मिथ्या श्रद्धान, ज्ञान, आचरण की प्रवृत्ति कों, ताकरि अतिगाढ़ता नैं प्राप्त भई, तातैं मुख करि कही मानें नही । तब जीवनि का अकल्याण होता जानि, करुणाबुद्धि करि देश-भाषा विषें शास्त्ररचना करी । तब केई सुबुद्धीनि के सांचा बोध भया । बहुरि अब इस अवसर विषें ज्ञान की वा शक्ति की ऐसी हीनता भई, जो भाषाशास्त्रनि तैं भी ज्ञान करि सकें नाहीं । तातैं तिन महान शास्त्रनि तैं प्रयोजनभूत वस्तु काढ़ि काढ़ि, छोटे प्रकरण करि, एकत्र कीजिये हैं । तातै ऐसे अवसर विषें सम्यग्ज्ञान के कारण भाषाशास्त्र ही हैं । बहुरि भाषाशास्त्रनि तें सम्यग्ज्ञान करि शब्दविद्या, न्यायविद्या

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अवगाह, तिन संस्कृत-प्राकृतरूप महंत शास्त्रनि का अभ्यास करना युक्त ही है। परन्तु सम्यग्ज्ञान का अर्थी हुवा थका शब्दविद्या, न्यायविद्या का वा संस्कृत-प्राकृतरूप शास्त्रनि का अभ्यास करना। शब्दविद्या, न्यायविद्या विषें ही आसक्त होय काल न खोवना। जातैं शब्दविद्या, न्यायविद्या कारणरूप है, कार्यरूप नाहीं है। सम्यग्ज्ञान कार्यरूप है, ताकूं जैसें बनै तैसें करना; परन्तु भाषा ग्रन्थनि का अभ्यास तैं सम्यग्ज्ञान की सिद्धि करि पीछे संस्कृत-प्राकृतरूप शास्त्रनि का अभ्यास सुगम होय है। बहुरि पर्याय का भरोसा नाहीं है। तातैं पहले सम्यग्ज्ञान करि और अभ्यास करना। सम्यग्ज्ञान घणा कठिण नाहीं। शास्त्रनि का थोड़ासा ही अभ्यास तैं सम्यग्ज्ञान की तो सिद्धि होय हैं, तातैं जे संस्कृत-प्राकृत शास्त्रनि विषें भेद माने हैं, ते दुर्बुद्धि हैं। संस्कृत-प्राकृत भाषारूप सर्व शास्त्र ही सम्यग्ज्ञान को कारण हैं।

अब अंत विषें सर्व मंगलरूप ऐसे सिद्ध भगवान्, तिनकूं नमस्कार करि ग्रंथ की पूर्णता करिये हैं। कैसे हैं सिद्ध भगवान् ?

चौदह गुणस्थान तैं पार भये हैं। १. बहुरि मार्गणा विषैं चार गति के परिभ्रमण का अभाव करि पंचम गति को प्राप्त भये हैं, २. बहुरि छूट गया है इंद्रियनि का आधीनपना, ताकरि स्वाधीन उदयरूप भया है ज्ञान जिनका। ३. बहुरि छहूं ही काय का छूटि गया है संबन्ध जिनका, ४. बहुरि सर्व योग तैं रहित अयोगी भये हैं, ५. बहुरि नहीं हैं वेद विकार जिनके, अपने स्वभाव विषें थिरीभूत भये हैं, ६. बहुरि दूर भये हैं कषायादिक मोहभाव, ताकरि संपूर्ण भाव की सिध्दि भई है, ७. बहुरि मतिज्ञानादि खंडज्ञान के अभाव करि युगपत्दर्शी केवलज्ञान प्रगट भया है, ८. बहुरि संयमरूप मार्ग का अंत करि मोक्षरूप मन्दिर विषैं तिष्टैं हैं, ९. बहुरि किंचित् दर्शन का अभाव करि केवलदर्शन को पाय सर्वदर्शी भये हैं, १०. बहुरि सर्व लेश्या भावनि का नाश करि अलेश्याभाव को धारैं हैं, ११. बहुरि भव्य-अभव्यभाव को मेटि भव्य-अभव्य रहित भाव को प्राप्तभये हैं। १२. बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व का है ग्रहण जाकै, १३. संज्ञी-असंज्ञीपना तैं रहित भये हैं, १४. बहुरि सदा अनाहारक है अवस्था जिनकी, ऐसे सर्व कर्म रहित होय, अविनाशी कृतकृत्य दशा कों प्राप्त भये, अपने स्वभावसुख विषें मग्न निरंतर सिध्द भगवान; तिनकूं मन, वचन, काय करि नमस्कार करूं हूं।

इति श्री भावदीपिका का आठवाँ चूलिका अधिकार पूर्ण भया।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

दोहा

स्व-पर भाव विभाव कों, शुध्दभावजुत सोय ।
करि प्रकाश प्रगट किया, भावदीपिका होय ।।

सवैया

भ्रम को भगैय्या ज्ञानदीप को जगैय्या;
मोक्षमारग को सधैय्या, जाको सांचो परकास है ।
निज-पर को दिखैय्या, मोक्षघर को दिवय्या;
निजरस को मलैय्या, तो जगवास है ।।
पाप को भवैय्या, जगजाल को भगैय्या;
राग-द्वेष को हरैय्या, याके स्वर्गादिक दास हैं ।
विवेक को करैय्या, स्वश्रध्दा के दिढ़ैय्या;
सर्वसिध्दि को करैय्या, धारो जो मोक्ष की भ्रास है ।।

छप्पय

सुनत भावदीप के बढ़त आनंद पयोधर ।
भनत भावदीपक लहत गुणरत्न मानो कर ।।
मिथ्यातिमिर निवार भानसम है किरनोभर ।
जग अटवी तैं काढ़ि डारै निरखेद स्वयोधर ।।
महिमा अपार नहीं मुख रटत स्वर्गमोक्ष को बीज ए ।
करि प्रतीति याकों भजो पाप जलांजलि दीजिये ।।

दोहा

भावदीपका शरण ले, ज्ञानखड़ग गहि धीर ।
कर्मशत्रु को क्षय करें, जे जोधा बरबीर ।।
अष्ट अध्याय जा ग्रन्थ में, पद-पद अर्थ रसाल ।
बालबुद्धि अर बहुमती, सब कों करत निहाल ।।
नांदो विरधो जगत में, जिनेशोक्त गुणधाम ।
पूरण कियो प्रमोद तैं, कर करि पंचप्रणाम ।।
पढ़ो पढ़ावो सुबुधिजन, करहु सुमन में ध्यान ।
बालबुद्धि परमोदियो, करि दियो भक्ति महान ।।

इति श्री भावदीपिका ग्रन्थ भाषा-वचनिकामय समाप्त ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

हमारे यहाँ प्राप्त महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

ग्रन्थ	ग्रन्थ
मोक्षशास्त्र	कालजयी व्यक्तित्व बनारसीदास
सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका भाग-१	समयसार अनुशीलन भाग-३ (पू.)
समयसार	विदाई की बेला
प्रवचनसार (श्री जयसेनाचार्य)	आ. कुन्दकुन्द और उनके टीकाकार
पद्मनन्दि पंचविंशतिका	छहढाला/बारसाणुवेक्खा
प्रवचनसार (अ. अमृतचन्द्र)	श्रावकधर्मप्रकाश
सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका भाग-२ (उत्तरार्द्ध)	बारहभावना : एक अनुशीलन
सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका भाग-२	वीतराग-विज्ञान प्रशिक्षण निर्देशिका
(पूवार्द्ध)/समयसार नाटक	शीलवान सुदर्शन/उपसर्गजयी सुकमाल
सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका भाग-३	अध्यात्म संदेश/आप कुछ भी कहो
अष्टपाहुड़/मोक्षमार्ग प्रकाशक	ती. भ. महावीर और उनका सर्वोदय तीर्थ
समयसार अनुशीलन भाग-१/भाग-२	भगवान नेमिनाथ/भगवान शान्तिनाथ
समयसार कलश टीका	चौबीस तीर्थंकर पूजन विधान
समाधितंत्र प्रवचन/नयप्रज्ञापन	विदेहक्षेत्रस्थ विद्यमान विशांति ती. पूजा
प्रवचन रत्नाकर भाग-८/जिनेन्द्र अर्चना	सुखी होने का उपाय भाग-१/भाग-२
प्रवचन रत्नाकर भाग-३/योगसार	सुखी होने का उपाय भाग-३/भाग-४
आ. अमृतचन्द्र : व्यक्तित्व और कर्तृत्व	सुखी होने का उपाय भाग-५
नियमसार/बृहद् द्रव्यसंग्रह	जिनवरस्य नयचक्रम
सिद्धचक्रविधान/अमृताशीति	पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव
परमभावप्रकाशक नयचक्र	णमोकार महामंत्र/अहिंसा के पथ पर
कार्तिकेयानुप्रेक्षा/भावदीपिका	जैनधर्म की कहानियाँ भाग-८
पुरुषार्थसिद्धयुपाय	भगवान पार्श्वनाथ/मुक्ति का संघर्ष
प्रवचन रत्नाकर भाग-२/भाग-६	विचार के पत्र विकार के नाम
पंचास्तिकायसंग्रह/संस्कार/धवलासार	दशलक्षण विधान/बीस तीर्थंकर विधान
इन भावों का फल क्या होगा	अर्द्धकथानक/बनारसीविलास
इन्द्रध्वज विधान/गुणस्थान विवेचन	परीक्षामुख/अध्यात्म रत्नत्रय
प्रवचनरत्नाकर भाग-१/भावना शतक	अपूर्व अवसर/सामान्य श्रावकाचार
आत्मा ही है शरण/ज्ञानगोष्ठी	वीतराग-विज्ञान प्रवचन भाग-३/भाग-४
सत्य की खोज	क्रमबद्धपर्याय/गागर में सागर
पण्डित टोडरमल : व्यक्तित्व और कर्तृत्व	आ. कुन्दकुन्द और पंचपरमागम
कल्पद्रुम मण्डल विधान	पंचपरमेष्ठी पूजन विधान
प्रवचनरत्नाकर भाग-४/भाग-५/भाग-७	शांति विधान/रत्नत्रय पूजन विधान
भक्तामर प्रवचन/आत्मानुशासन	भक्ति सरोवर/युगपुरुष कानजीस्वामी
तत्त्वज्ञान तरंगिणी/धर्म के दशलक्षण	वीतराग-विज्ञान प्रवचन भाग-२
रामकहानी/साधना के सूत्र	वीतराग-विज्ञान पाठ. भाग-२/भाग-३